भोज मुक्त विश्वविद्यालय

बी . ए . प्रथम वर्ष

हिन्दी कथा साहित्य

1. गबन– प्रेमचंद
2. पुरस्कार – जयशंकर प्रसाद
3. कफन – प्रेमचंद
4. परदा – यशपाल
5. राजानिरबंसिया– कमलेश्वर
6. तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम – फणीश्वरनाथ रेणु
7. चीफ की दावत भी– भीष्म साहनी
8. मलवे का मालिक – मोहन राकेश
9. दोपहर का भोजन – अमरकांत
10. सुदर्शन
11. मार्कण्डेय
12. राजी सेठ

डॉ . लता अग्रवाल
73 यशविला भवानीधाम फेस–1
नरेला शंकरी
भोपाल–462041

इकाई –1

हिन्दी कथा साहित्य

इकाई की रूपरेखा–

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 कथा साहित्य
1.4 कहानी एवं उपन्यास में अंतर
  1.4.1 कथानक के आधार पर –
  1.4.2 चरित्र–चित्रण के आधार पर –
  1.4.3 कथोपकथन के आधार पर –
  1.4.4 शिल्पविधान के आधार पर –
  1.4.5 देशकाल और वातावरण के आधार पर –
  1.4.6 भाषा शैली के आधार पर –
  1.4.7 उद्देश्य के आधार पर –
1.5 प्रेमचंद मौलिक उपन्यासकार के रूप में –
1.6 गबन के पात्रों का चरित्र चित्रण – रमानाथ –
  1.6.1 अकर्मण्य और अवारा युवक
  1.6.2 निर्बल चरित्र
  1.6.3 संकोची प्रवृत्ति
  1.6.4 कायरता
  1.6.5 विलासोन्मुखी
  1.6.6 अनन्य प्रेमी
1.7 जालपा –
  1.7.1आभूषणों के प्रति तीव्र लालसा
  1.7.2 आत्मसम्मान की भावना
  1.7.3 आदर्श पत्नी
  1.7.4आदर्श भारतीय नारी
  1.7.5 बुद्धिमता एवं भावुक नारी
  1.7.6 चरित्र का क्रमिक विकास और चरमोत्कर्ष
1.8 रतन–
  1.8.1 आभूषण के प्रति प्रेम
  1.8.2 पति–परायण
  1.8.3 स्वाभिमानी

1.9 दयानाथ–

1.9.1 ईमानदारी

1.9.2 सामर्थ्य से अधिक व्यय

1.9.3 अन्तर्विरोध

1.9.4 अध्ययनशीलता

1.10 जोहरा–

1.10.1 वेश्या के रूप में

1.10.2 रमानाथ के प्रति आकर्षण

1.10.3 जालपा का सात्विक प्रभाव

1.10.4 सेवा भाव

1.11 इकाई सारांश

1.12 अपनी प्रगति जांचिए

1.13 नियत कार्य/गतिविधि

1.14 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के

1.14.1 चर्चा के लिए बिंदु

1.14.2 स्पष्टीकरण के बिंदु

1.15 बोध प्रश्न

1.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.17 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

कहानी और उपन्यास हिन्दी साहित्य की विधा के दो प्रमुख आयाम है। कहानियाँ जिस प्रकार अपने युग की पहचान होती है, आपको कुछ सोचने पर मजबूर करती है, आपकी आत्मा को झकझोरती है इतना ही नहीं अपने वातावरण के रंग में सराबोर कर देती है। दूसरे शब्दों में यह हमारी भावनाओं और दैनिक जीवन का सच्चा इतिहास बयान करती है। वहीं उपन्यास जीवन के विविध पहलूओं को अपने में समेटे एक विशाल फलक को केनवास पर उतारते हैं। जिसमें उपन्यासकार यथार्थ जीवन को कल्पना से जोड़कर घटना को एक नयी दिशा प्रदान करते हैं। इस दृष्टि से कहानी और उपन्यास दोनों ही साहित्य में महती भूमिका अदा करते हैं। दोनों का ही रचना क्षेत्र मानव जीवन है। कहानी जहाँ जीवन के एक छोटे से हिस्से की व्याख्या करती है वहीं उपन्यास संपूर्ण जीवन की व्याख्या करता है दोनों में ही गतिशीलता, परिवर्तनशीलता एवं विकासमान का गुण होता है। दोनों के लेखन की अपनी कला है किन्तु प्रेमचंद एक मात्र ऐसे साहित्यकार थे जिन्हें दोनों ही क्षेत्र में महारथ हासिल थी। प्रस्तुत इकाई में कहानी और उपन्यास के भेद को स्पष्ट करते हुए प्रेमचंद द्वारा रचित उपन्यास 'गबन' का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

1.2 उद्देश्य–

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात विद्यार्थी –

- कहानी और उपन्यास के बीच के अध्ययन को भली–भाँति समझ पाएंगे।
- उपन्यास के क्षेत्र में प्रेमचंद के योगदान के बारे में जान सकेंगे।
- प्रेमचंद द्वारा रचित उपन्यास 'गबन' की कथावस्तु, पात्र, एवं वातावरण से अवगत होंगे।
- प्रेमचंद युगीन समाज की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक परिस्थितियों को समझ वर्तमान युग से उसकी तुलना कर पाएंगे।
- जालपा के माध्यम से नारी के आदर्श व्यक्तित्व को जानेंगे साथ ही रतन जैसी स्त्रियों की समस्याओं को भी समझ पाऐंगे। साथ ही युवा जीवन में आने वाली विभिन्न संघर्षमय परिस्थितियों का सामना करने में सक्षम होंगे।
- प्रेमचंद साहित्य का अध्ययन करने के पश्चात विद्यार्थी अपने युग की समस्याओं का अवलोकन करने में सक्षम होंगे।
- साथ ही साहित्य सृजन में योगदान प्रदान करेंगे।

हिन्दी साहित्य में कथा साहित्य का इतिहास बहुत प्राचीन है। प्रत्येक युग में कहानी अपने समकालीन अस्तित्व के साथ मौजूद रही है। बदलते परिवेश के साथ इसके कथानक, पात्र एवं प्रस्तुतिकरण में भी बदलाव आया है। मनोरमता, सहजता एवं कहन शैली इसके प्रमुख घटक हैं। कहानी चाहे किसी भी काल में रही हो ये उसके आवश्यक अंग रहे हैं। भारतीय इतिहास में कहानी की बहुत विशाल एवं समृद्ध परंपरा रही है विभिन्न क्षेत्रों की अलग–अलग

परिस्थिति , घटनाओं व परिवेश ने कहानी को रोचकता प्रदान की है। प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद आदि कथाकारों ने कहानी के क्षेत्र को यथार्थ जीवन से जोड़कर इसे और भी उपयोगी बना दिया है।

1.3 कहानी एवं उपन्यास में अंतर

गद्य साहित्य की अनेक विधाओं में कहानी और उपन्यास का विशेष महत्व है। कारण समस्त विधाओं में सबसे पहले कहानी का प्रदुर्भाव हुआ, दादी, नानी, परदादी, परनानी और उनसे भी पहले की कई पीढ़ियों में इस विधा का जन्म हुआ था जब संभवतः विज्ञान के कोई भी ऐसे संसाधन आमजन को उपलब्ध नहीं थे जिससे वे अपना मनोरंजन कर सकें। अतः कल्पनालोक में खोकर बुनी गई कथा, कहानियां ही व्यक्ति के मनोरंजन का प्रमुख साधन बनी। जिन्हें केवल श्रवणेन्द्रियों के बल व्यक्ति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तातंरित करती रही। जब एक कहानी के आसपास और भी कई सह–कहानियाँ बुनती और जुड़ती चली गईं तो कहानी का क्षेत्र व्यापक बन गया। निःसंदेह इसे कंठस्थ रख पाना आसान नहीं था किन्तु जब तक टंकण और मुद्रण व्यवस्था लोगों को उपलब्ध हुई और इन कहनियों के व्यापक स्वरूप को सहेज पाना आसान हुआ। जिसे उपन्यास विधा के रूप में जाना गया।

ये सच है कि उपन्यास कहानी का ही विस्तृत रूप है किन्तु कहानी और उपन्यास के अंतर को हम प्रेमचंद के इन शब्दों बेहतर समझ सकते है –

''गल्प (कहानी) वह रचना है जिसमें जीवन के किसी एक मनोभाव को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य रहता है उसे चित्र, उसकी शैली, उसका कथाविन्यास सब उसी एक भाव को पुष्ट करते हैं। उपन्यास की भांति उसमें मानव जीवन का संपूर्ण तथा वृहद रूप दिखाने का प्रयास नहीं किया जाता न ही उसमें उपन्यास की भांति सभी रसों का समिश्रण होता है। वह ऐसा रमणीय उद्यान नहीं जिसमें भांति–भांति के फूल बेल–बूटे सजे हुए हैं, अपितु एक गमला है जिसमें एक ही पौधे का माधुर्य अपने समुन्नत रूप में दृष्टिगोचर होता है।''

तथ्यों के आधार पर कहानी और उपन्यास के अंतर को हम इस तरह स्पष्ट कर सकते हैं–

1.3.1 कथानक के आधार पर –

'कथानक को हम एक नींव कह सकते है जिसके बल पर संपूर्ण कहानी या उपन्यास रूपी भवन टिका होता है। कहानी में कथानक की अनिवार्य शर्त नहीं होती किन्तु उपन्यास में कथानक की प्रधानता होती हैं।

कहानी में जीवन की एक ही घटना का वर्णन होने से इसका स्वरूप छोटा होता है वहीं उपन्यास में संपूर्ण जवीन की व्याख्या होती है। एक मुख्य घटना से जुड़ी कई अन्य घटनाएं, उपन्यास की पृष्ठभूमि को विस्तृत बनाते हैं। मानव जीवन के छोटे से छोटे जीवन व्यापार का इसमें समावेश किया जाता है।

कहानी में जहाँ जीवन के एक अंग का वर्णन होता है वहीं उपन्यास में कई अन्य गौण कथाएं भी सम्मिलित होती है। हम कह सकते हैं कि कहानी जीवन का एक बिंदु है तो

उपन्यास एक गहरी सरिता है। कहानी में पाठक केवल एक ही कथा का आनंद ले पाता है वहीं उपन्यास में पाठक को कई कथाओं का आनंद मिलता है।

इस आधार पर हम कह सकते हैं कि उपन्यास में कथानक जहाँ साध्य के रूप में प्रयुक्त होता है, वहीं कहानी में वह साधन बन जाता है।

1.3.2. चरित्र–चित्रण के आधार पर –

कथानक की ही तरह चरित्र–चित्रण की दृष्टि से भी कहानी और उपन्यास में पर्याप्त अंतर है। प्रथम उपन्यास का क्षेत्र काफी विस्तृत है क्योंकि यह जीवन की संपूर्ण व्याख्या प्रस्तुत करता है तो जाहिर है यह एक दीर्घकालीन एवं विशाल स्वरूप की रचना है। कारण मानव जीवन की संपूर्ण यात्रा में उसका संबंध कई चरित्रों से पड़ता है। इस दृष्टि से उपन्यास में कई चरित्रों का समायोजन होता है वहीं कहानी जीवन के एक छोटे से अंश को प्रस्तुत करती है इसलिए एक संक्षेप परिवेश में जाहिर है मानव अपेक्षाकृत कम लोगों से ही जुड़ पाता है इसलिए इसमें पात्रों की संख्या भी सीमित ही होगी।

इस संबंध में स्वयं प्रेमचंद का कथन दृष्टव्य है –

''मैं उपन्यास को मानव चरित्र का चित्र मात्र समझता हूं। मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उनके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मुख्य उद्देश्य है। वहीं कहानी में बहुत विश्लेषण की गुंजाइश नहीं होती। यहाँ हमारा उद्देश्य संपूर्ण मनुष्य को चित्रित करना नहीं, वरन उसके चरित्र के एक अंग को दिखाना है।''

1.3.3 कथोपकथन के आधार पर –

कहानी की परिधि उपन्यास से अपेक्षाकृत छोटी होती है सीमित पात्र एवं छोटे प्रसंगों एवं जीवन की छोटी सी किसी घटना का वर्णन होने के कारण जाहिर है पात्रों के बीच संवादों की गुंजाइश भी कम होती है। दो–तीन पात्रों के बीच के कथानक की अवधि लगभग 10 मिनट में समाप्त हो जाती है। कारण कहानीकार किसी एक लक्ष्य को लेकर चलता है लक्ष्यपूर्ण होते ही कहानी का अंत हो जाता है।

वहीं उपन्यास जैसा कि एक दीर्घकालीन रचना है। संपूर्ण जीवन चक्र में कई घटनाएं घटित होती है निरंतर नवीन संपर्क स्थापित होते हैं। संवाद उनका प्रमुख माध्यम होता है क्योंकि कथानक को पात्र नहीं संवाद ही आगे बढ़ाते हैं। अतः उपन्यास में संवादों की एक लंबी श्रृंखला होती है। उपन्यासकार का यह दायित्व होता है कि वह अपने संवादों को गढ़ते समय भाषा, शैली व रोचकता का पूर्ण ध्यान रखे। यं संवाद ही किसी भी कथानक को प्राणवान बनाते हैं।

1.3.4. शिल्पविधान के आधार पर –

शिल्पविधान की दृष्टि से कहानी और उपन्यास का अपना–अपना विधान होता है। उपन्यास के कथानक में कथा का आदि, मध्य और अंत गठित होता है। विस्तृत स्वरूप होने से उपन्यास में भूमिका की गुंजाइश होती हैं, कहानी के आधार पर उपन्यास की रचना उतनी कठिन नहीं जितनी उपन्यास से कहानी का निर्माण करना है।

जबकि कहानी की बात करें तो उसका कोई निश्चित प्रारंभ और अंत नहीं होता। जीवन के किसी भी एक क्षेत्र से घटना चुनकर कथाकर उसे कहानी का स्वरूप दे सकता है। अर्थात् कहानी पर कोई प्रतिबंध नहीं होता वह कहीं बीच से उठाई जा सकती है। आधुनिक कहानी एवं लघु कथा के दौर में तो कहानी का आरंभ ही चरम सीमा से होता है। साथ ही प्राचीन काल में जहाँ कथा का समापन दुखांत सुखांत या प्रसादांत होता था किन्तु आज कथा पाठक के मन में उत्सुकता छोड़ देती है, कई बार कथाकार कहानी का समापन पाठक की कल्पना पर छोड़ देता है।

1.3.5. देशकाल और वातावरण के आधार पर –

उपन्यास एक ऐसा वातायन है, जिसके रास्ते पर हम बहती हुई चेतना के प्रवाह का अवलोकन करते हैं। कहानी एक सूक्ष्म दर्शक यंत्र है जिसके नीचे मानवीय रूपक के दृश्य खुलते है।

सीमित क्षेत्र, सीमित पात्र तथा लघु अवधि में देश काल और वातावरण भी सीमित होता है। उदाहरण के लिए ''कफन अथवा पूस की एक रात'' कहानी जिनका परिदृश्य केवल एक कथानक के लिए निर्मित होता है, पूस की ठंड, रात का समय अथवा एक छोटे से गांव में अलाप में आलू भूंजते पिता–पुत्र के आसपास ही कथा समाप्त हो जाती है। किन्तु गबन को देखें तो जालपा का बचपन जहाँ गुजरा वह परिवेश फिर ससुराल, फिर कलकत्ता इन सबके आस–पास के वातावरण को जोड़कर उपन्यासकार ने उपन्यास की रचना की। वहाँ के संस्कार, संस्कृति, खान–पान, लोगों के जीने का तरीका सभी का समावेश उपन्यास में देखने को मिलता है।

1.3.6. भाषा शैली के आधार पर –

कहानी का उद्देश्य किसी एक घटना को निरूपित करना होता है। विशेष क्षेत्र, विशिष्ट समाज अथवा समूह के बीच घटने वाली एक छोटी से घटना को चित्रित करने हेतु कहानीकार को किसी विशेष भाषा ज्ञान की आवश्यकता नहीं होती। वह केवल क्षेत्र विशेष के बारे में अध्ययन एवं अनुभव के आधार पर कहानी की सर्जना कर सकता है।

वहीं उपन्यास की रचना करने से पहले उपन्यासकार को अपने पात्र के जीवन में आए समस्त घटनाक्रम को, उस वातावरण तथा वहाँ की भाषा शैली को जानना बहुत आवश्यक है। जितने अधिक चरित्र उनके अनुसार उतनी ही भाषा शैली, संवादों की रचना में उपन्यासकार को एक विशेष कौशल की आवश्यकता होती है। वातावरण एवं पात्रों के अनुरूप बिंब एवं प्रतीकों की रचना ये सब मिलकर ही किसी उपन्यास की रोचकता को बढ़ाते हैं। किन्तु कहानी में कहानीकार को अपेक्षाकृत कम श्रम की आवश्यकता होती है। उदाहरण गबन में रमानाथ, जालपा, देवीदीन, दयानाथ, रतन, इन्दुभूषण, जोहरा आदि पात्रों के लिए उनके अनुरूप संवाद तैयार करने हेतु उपन्यास को इन समस्त चरित्रों के आचार, व्यवहार, विचार एवं भाषा का अध्ययन करना होता है। निःसंदेह कहानी अथवा उपन्यास दोनों में ही भाषा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है और एक लेखक का गंभीर दायित्व भी।

1.3.7 उद्देश्य के आधार पर –

जिस तरह एक समझदार व्यक्ति जीवन में कोई भी कार्य बिना उद्देश्य के नहीं करता उसी तरह एक लेखक कोई भी रचना बिना उद्देश्य के नहीं रचता । फिर चाहे वह कहानी हो या उपन्यास ।उद्देश्य की दृष्टि से इनमें अंतर हो सकता है जैसे कहानी की रचना ही किसी एक उद्देश्य को दृष्टि के रखकर की जाती हैं फिर चाहे वह पुरस्कार कहानी में नारी के निश्छल प्रेम को दर्शाना हो या छोटा जादूगर में एक बालक के स्वाभिमान को दर्शाना हो या फिर ईदगाह में बालक का दादी के प्रति प्रेम, कफन में निष्ठुरता की पराकष्ठा ही क्यों न हो।

वही उपन्यास में एक प्रधान घटना के साथ कई अन्य गौण घटनाएं भी जुड़ी होती हैं लेखक का उद्देश्य प्रत्येक घटना से कोई न कोई संकेत पाठकों तक पहुँचाना होता है। फिर वह गबन की मुख्य घटना नारी की आभूषणप्रियता हो, रतन की बेमेल विवाह एवं वैधव्य की समस्या हो, रमानाथ के मिथ्या आडम्बर की हो, जोहरा के प्रति समाज का उपेक्षापूर्ण व्यवहार हो, पुलिस की कुटनीति हो अथवा स्वतंत्रता सेनानियों की अनदेखी पीड़ा है। लेखक प्रत्येक घटना को क्रम से पिरोते हुए कहानी अथवा उपन्यास की रचना करता है । यदि घटना पाठकों पर अपना प्रभाव छोड़ती है तथा अपने उद्देश्य की सार्थकता को सिद्ध करती है तो वह कहानी और उपन्यास की सफलता साबित करती है।

1.4 प्रेमचंद हिन्दी के प्रथम मौलिक उपन्यासकार हैं, हिन्दी उपन्यास साहित्य के केन्द्र बिंदु भी हैं।'

हिन्दी साहित्य में प्रेमचंद का आगमन उस समय हुआ जब देश आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक संकटों से जूझ रहा था। ऐसे में सभी देश भक्त अपने–अपने सामर्थ्य के अनुसार देश के हालातों पर काबू पाने का प्रयास कर रहे थे। कलम के सिपाहियों ने भी अपनी कलम को तलवार मान देश की स्थिति में सुधार हेतु अपना–अपना साहित्यक योगदान दिया जिनमें प्रेमचंद भी एक प्रमुख स्तंभ हैं। प्रेमचंद की गणना हिन्दी के मौलिक साहित्यकार के रूप में की जाती है उन्होंने हिन्दी कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में मौलिक चिंतन प्रस्तुत कर हिन्दी लेखन के क्षेत्र को विस्तार दिया। जो किस्से ,कहानियाँ अब तक दरबारों और आसमानों में उड़ती परियों के इर्द–गिर्द घूमती थीं अब यथार्थ के कठोर धरातल पर आ गई । पाठकों को जमीनी हकीकत से जोड़ती इन कहानियों और उनके पात्रों ने पाठकों का ध्यान अपनी ओर खींचा। अपनी इन्हीं मौलिक उपलब्यिों के कारण ही प्रेमचंद उपन्यास सम्राट की उपाधि पा सके।

उपन्यास चाहे ऐतिहासिक हो अथवा सामाजिक कल्पना प्रधान हो अथवा यथार्थ प्रधान उसमें मानव चरित्र का चित्र अवश्य होता है, अतः जाहिर है उसमें मानव के स्वभाव, गुण, रूचियों एवं कार्यव्यापारों के अन्तर्मन का तलस्पर्शी अध्ययन भी होगा। मानव चरित्र एवं उसके कार्य व्यापारों का सजीव एवं कलापूर्ण चित्रण उपन्यास को अधिक सजीवता प्रदान करता है।

यदि उपन्यास साहित्य की चर्चा करें तो हम प्रेमचंद को केन्द्र में पाते हैं। इस दृष्टि से संपूर्ण उपन्यास साहित्य को हम तीन भागों में विभाजित करते हैं।

1. प्रेमचंद के पूर्व का उपन्यास साहित्य
2. प्रेमचंद युगीन उपन्यास साहित्य
3. प्रेमचंदोत्तर उपन्यास साहित्य

प्रत्येक युग के साहित्य की अपनी विशेषताएं होती है, यथा प्रेमचंदजी से पूर्व हिन्दी का कथा साहित्य केवल कौतुहल एवं मनोरंजन तक सिमटकर रह गया था। उपन्यास की कथावस्तु यथार्थ जीवन से परे तिलिस्मि और एय्यारी में ही उलझा था। प्रेमचंद का उपन्यास के क्षेत्र में आगमन एक युग परिवर्तन था अछूते जीवन के पहलुओं को उन्होंने अपनी विषय वस्तु बनाया दूसरे

शब्दों में हम कह सकते हैं कि प्रेमचंद से पूर्व हिन्दी उपन्यास अपने शैशव काल में था तथा अपने विकास की दिशाएं तलाश रहा था। उसमें सामाजिक चेतना का सर्वथा अभाव था। प्रेमचंद ने इसे कल्पना के ऊँचे धरातल से यथार्थ की वास्तविक भूमि पर ले आए।

इसका प्रमुख कारण था कि प्रेमचंद की रचना दृष्टि उनकी जीवन दृष्टि से भिन्न नहीं रही सबसे बड़ी बात यह दृष्टि उन्हें विरासत में नहीं मिली बल्कि जीवनानुभवों एवं निज संघर्षों से उन्होनें स्वयं अर्जित की है। उपन्यासकार के रूप में प्रेमचंद ने अपनी जो पहचान बनाई है उसमें आदर्श के साथ यथार्थ भी शामिल है। हम कह सकते हैं कि प्रेमचंद का कथादेश वास्तविक देश है जहाँ नित घटनाएं घटित होती है। उसमें शोषण की प्रक्रिया को पहचानना उसे चुनौती देकर लेखन का विषय बनाना, सामाजिक व राजनैतिक सुधार लाना उनका प्रमुख उद्देश्य है उनके उपन्यास चाहे वह गोदान हो, गबन हो , कर्मभूमि हो या फिर कोई अन्य कहानी अथवा उपन्यास समाज की यथार्थ समस्याओं को लेकर सामने आते हैं। शिक्षा तंत्र पर चोट से ही कर्मभूमि की शुरूआत होती है –

''हमारे स्कूलों और कॉलेजों में जिस ततपरता से फीस वसूली जाती है शायद मालगुजारी भी उतनी सख्ती से नहीं वसूल की जाती। .... वहीं ह्रदयहीन दफ्तरी शासन जो अन्य विभागों में है, हमारे शिक्षालयों में भी है।'' सवर्ण – असवर्ण के बीच का संघर्ष, शोषण सामाजिक व्यवहार में स्पष्ट होने से पहले ही शिक्षा के परिवेश में रूप ले लेता है। –''कहाँ जाएं, हमें कौन पढ़ाए। मदरसे में कोई जाने तो देता नहीं एक दिन दादा हम दोनों को लेकर गए थे। पंडित जी ने नाम लिख लिया पर हमें सबसे अलग बैठाते थे सब लड़के हमें चमार–चमार कहकर बुलाते थे दादा ने नाम कटा लिया।''

प्रेमचंद की निगाह किसान मजदूर पर बराबर बनी रही अपने उपन्यास गोदान में उन्होंने होरी और धनिया के माध्यम से कृषक जीवन की विडम्गना को बखूबी चित्रित किया है। प्रेमचंद का दृश्य जगत काफी विस्तृत था समाज के राजनेतिक, सामाजिक, आर्थिक जगत से लेकर घर की छोटी–छोटी समस्याएं भी उनसे अदूती नहीं रही फिर चाहे वह युवावर्ग की दायित्वबाध की अनदेखी हो, नारी की आभूषणप्रियता हो या फिर घर में आसी टकराव हो सभी को उन्होंने गंभीरता से लिया है।

हिन्दी उपन्यास के नए युग के निर्माण में अँग्रेजी, बंगला आदि से किए गए अनुवादों का भी कम हाथ नहीं था। परन्तु यह भी उतना ही महत्वपूर्ण तथ्य है कि उस दौरान केवल अँग्रेजी उपन्यासों के अनुकरण की ही प्रधानता रही जिसमें सांस्कृतिक परिवेश का सर्वथा अभाव रहा । इससे साहित्य में लोक रूचियों का परिमार्जन नहीं हो पाया परिणामस्वरूप जनसाहित्य बाजार तक नहीं पहुँचा पाया। धीरे–धीरे बांग्ला साहित्य में कुछ अच्छी कृतियाँ अनुवाद होकर आई। यथा–स्वर्णलता, बंगविजेता, दीप–निर्माण, दान–पत्र आदि किन्तु हिन्दी साहित्य में मौलिक उपन्यासों का तब भी अभाव था। उपन्यास के क्षेत्र में प्रेमचंद के योगदान को प्रतिपादित करते हुए आचार्य नंददुलारे वाजपेयी कहते हैं –

''उपन्यास के इस निर्माण और अनुवाद के प्रारंभिक युग को पार करके हम हिन्दी उपन्यासों के उस नये युग में पहुँचते हैं जिसका शिलान्यास प्रेमचंद ने किया और जिसमें आकर हिन्दी उपन्यास एक सुनिश्चित कला–स्वरूप को प्राप्त कर अपनी आत्मा को पहचान सका तथा अपने उद्देश्य से परिचित होकर उसकी पूर्ति में लग सका।''

आचार्य नंददुलारे वाजपेयी के उपरोक्त कथन से स्पष्ट है कि प्रेमचंद से पूर्व हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में मौलिक कथावस्तु का सर्वथा अभाव था अथवा कह सकते हैं कि उपन्यास विधा

अपनी अविकसित अवस्था में थी प्रेमचंद ने मौलिकता के क्षेत्र में निर्माता के रूप में न केवल उपन्यास विधा को समृद्ध किया अपितु अन्य उपन्यासकारों का पथ प्रशस्त किया। चाहे वह कथावस्तु के क्षेत्र में हो चरित्र, भाषा अथवा देशकाल की घटनाएं हों उन्होंने उपन्यास को नई ऊँचाइयाँ दी। हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में फिर किसी अन्य प्रेमचंद का आगमन न हो सका इसी से उन्हें उपन्यास जगत के सम्राट की उपाधि से नवाजा गया।

1900 ई. से प्रेमचंद का उपन्यास के क्षेत्र में आगमन हुआ जब वे बीस वर्ष के थे उन्होंने रविन्द्रनाथ टैगोर की कहानियों का रूपान्तरण करना आरंभ कर दिया। तत्पश्चात उनकी कहानियाँ का सफर आरंभ हुआ। संसार का सबसे अनमोल रत्न कृष्णा उपन्यास वरदान प्रेमा, निर्मला, प्रतिज्ञा आदि उपन्यासों की उन्होंने रचना की किन्तु तब तक वे नवाब राय के नाम से साहित्य सृजन करते रहे 1908 में उनकी 8 कहानियों का संग्रह 'शोजे वतन' सरकार द्वारा जब्त कर लिया गया तब से वे प्रेमचंद के नाम से लिखने लगे।

सेवासदन उनका प्रथम उपन्यास था यद्यपि इससे पूर्व उनके कुछ उपन्यास प्रतिज्ञा, प्रेमा, रूठी रानी, वरदान आदि प्रकाशित हो चुके थे किन्तु यदि उपन्यास शिल्प कला और मौलिकता की दृष्टि से उनमें कोई नवीनता देखने को नहीं मिली। सेवासदन कृति ने प्रेमचंद के भीतर की मौलिक प्रतिभा को पाठकों के सम्मुख रखा इस दृष्टि से सेवासदन को प्रेमचंद का प्रथम उपन्यास कहा गया। प्रेमचंद के संपूर्ण उपन्यासों की कथावस्तु को लें तो उसमें उन्होंने सामाजिक एवं राष्ट्रीय स्तर की समस्या को यथार्थ रूप में समाज के समक्ष उकेरा है। उनका प्रस्तुतीकरण इतना सजीव होता था कि पाठक की अन्तरात्मा भी भास्वर हो उठती थी, विभिन्न क्षेत्रों के अलग-अलग पक्षों से उठाई इन कथावस्तुओं को वे कौशल के साथ इस तरह पिरोते हैं कि उनमें एकात्मकता नजर आती है।

मुंशी प्रेमचंद का साहित्य सृजन को लेकर उद्देश्य 'कला जीवन के लिए' था वे उपयोगितावाद के पक्षधर थे उनकी प्रत्येक रचना में समाज के लिए संदेश निहित था। अपनी रचनाओं के संबंध में वे स्वयं कहते हैं-

''वही साहित्य चिरायु हो सकता है जो मनुष्य की मौलिक प्रवृत्तियों पर अवलंबित हो ईर्ष्या और प्रेम, क्रोध और लोभ, भक्ति और विराग, दुख और लज्जा ये सभी हमारी मौलिक प्रवृत्तियाँ है इन्हीं की छटा दिखाना साहित्य का परम उद्देश्य है। बिना उद्देश्य के कोई रचना पूर्ण नहीं होती।''

प्रेमचंद का विश्वास मानवतावाद में हैं उनकी दृष्टि में मनुष्य का कल्याण ही सर्वोपरि है अतः उन्होंने अपने उपन्यास का उद्देश्य आदर्शवाद को बनाया था जिसके आधार पर उन्होंने कथाओं को लेकर मानव के स्वाभाविक जीवन मूल्यों से जोड़कर समाज को नैतिकता का संदेश दिया है उनकी कथा में व्यक्ति और समाज की यथार्थ निर्मल छवि प्रस्तुत हुई है जिसमें मध्यमवर्ग के व्यक्ति और समाज का यथार्थ प्रतिबिंब प्रस्तुत किया गया है।

उनके द्वारा रचित पात्र चाहे वह जालपा हो, रमानाथ हो, रतन या फिर जोहरा ही क्यों न हो, वे प्रतिनिधि पात्र होते हैं उनकी कथा में पात्रों के सुख-दुख, पीड़ा संपूर्ण समाज की कथा बनकर प्रस्तुत होते हैं। संघर्षमय स्थितियों में उनके पात्रों का नैतिक संकट जब पतन की ओर मुड़ने लगता है तब प्रेमचंद बड़ी ही कुशलता से थपकी देते हुए उन पात्रों को चरित्र के उद्दात्त शिखर पर लाकर प्रतिष्ठित कर देते हैं यही उनके उपन्यास की मौलिक विशेषता है।

प्रेमचंदजी चूँकि पराधीन युग के कथाकार थे पराधीन देश की पीड़ा को उन्होंने महसूस किया था । भारतवासियों में स्वातंत्र चेतना का अभाव उन्हें खलता था, अतः अपने व्यक्तिगत जीवन की भांति अपनी रचनाओं में भी जहाँ कहीं उन्हें अवसर मिलता है वे राष्ट्रीय स्वातंत्र चेतना को साहित्य में स्थान अवश्य देते। इसके अतिरिक्त तात्कालीन दौर की जितनी भी सामाजिक समस्याएं थी उनसे अछूती नहीं रही। अपने लेखन के माध्यम से वे हर बुराइयों से लड़ते रहे। सही मायने में वो 'कलम के सिपाही' थे। देश की समस्याओं की सच्ची तस्वीर से समाज को अवगत कराना चाहते थे जिससे तत्कालीन समाज काफी हद तक त्रस्त था। उन समस्याओं से समाज को मुक्त करना ही उनका लक्ष्य था।

प्रेमचंदजी मानते थे कि साहित्य समाज का दर्पण होता है इसलिए कोई भी लेखक समाज से कटकर नहीं रह सकता जिस समस्या को समाज झेल रहा है उसका प्रस्तुतीकरण करना लेखक के लिए आवश्यक हो जाता है । एक सजग लेखक फिर यह नहीं सोचता कि उसकी रचना कला के मानदंड़ों पर खरी उतरेगी अथवा नहीं , उसके सामने तो समाज का जो विशाल कैनवास है उसकी सच्ची तस्वीर वह इन समस्याओं के माध्यम से ही उकेरना अपना परम कर्तव्य समझते हैं प्रेमचंद इसका अपवाद नहीं। वे समाज के ऐसे कथाशिल्पी हैं जिन्होंने समाज के प्रति अपने दायित्व का निर्वाह करने के निमित्त ही अपनी समसामयिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि समस्याओं को अपनी रचनाओं में स्थान दिया है।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि प्रेमचंद तत्कालीन समाज के उन साहित्यकार समाज से आते हैं जिन्होंने युगीन परिस्थितियों की समस्याओं को देखा है स्वयं जिया है और एक साहित्यकार होने के नाते उन्होंने अपना साहित्य धर्म का निर्वाह करते हुए समाज को उन समस्याओं से अवगत करा अपने दायित्व बोध का पालन किया हैं। विपरीत परिस्थितियों में अपने संयम को रखते हुए चरित्र को उद्दात्त बनाते हुए कैसे परिस्थितियों पर विजय प्राप्त की जाए इस बात का भी दिशा निर्देश अपने साहित्य में देते रहे हैं । उनका उद्श्य आदर्श समाज की रचना करना है। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि प्रेमचंद का साहित्य हिन्दी की अमूल्य निधि है। कथावस्तु भाषा शिल्प, पात्र व उद्देश्य की दृष्टि से उनके कथाशिल्प में जो मौलिकता है वह उन्हें उपन्यास सम्राट के रूप में स्थापित करती है वे समस्त उपन्यास विधा के केन्द्र में हैं।

1.5 गबन उपन्यास के आधार पर रमानाथ का चरित्र चित्रण कीजिए ?

रमानाथ गबन उपन्यास का प्रमुख पुरूष पात्र है। उपन्यास का नायक होने के साथ–साथ वह वर्तमान युग के युवा वर्ग का प्रतिनिधि है। जिसके माध्यम से उपन्यासकार ने युवा वर्ग के चरित्र को चित्रित किया है। रमानाथ एक ऐसा नायक है जिसमें कुछ अच्छाई है तो कुछ मानव जनित सहज दुर्बलताएं भी हैं। आरंभ में यह पात्र एक दुर्बल व्यक्तित्व, आडंबर युक्त, झूठ से ओत–प्रोत, मिथ्या प्रदर्शन, फैशनपस्त एवं अहंकार से युक्त हमारे समक्ष आता है वह मुंशी दयानाथ के तीन पुत्रों में सबसे बड़ा पुत्र है। उसका व्यक्तित्व आकर्षक है। जालपा उसकी पत्नी है जो उसके आकर्षक व्यक्तित्व से प्रभावित है। स्वभाव से रमानाथ आलसी, दायित्वविहीन है। उसका ध्यान ठाठ–बाट, घूमने–फिरने की ओर अधिक है। दफ्तर में उसकी स्थिति चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी की है। बिंदुवार रमानाथ के चरित्र की विशेषता निम्नानुसार है।

1.5.1. अकर्मण्य और अवारा युवक

कथानक के प्रारंभ में रमानाथ एक अकर्मण्य और अवारा युवक के रूप में पाठकों के समक्ष आता है। उसे अच्छे व फैशनेबल परिधान पहनने का बेहद शौक है। अपने आत्मप्रदर्शन की तृप्ति के लिए वह मित्रों से वस्त्र व अन्य वस्तुएँ माँगकर अपनी अभिलाषा पूरी करता है। उसकी यही आडंबर प्रियता और विलसिता का शौक ही उसे जीवन में अनेक कष्टों में डाल देता है।

उसकी अकर्मण्यता से उसके पिता बेहद परेशान है। युवा पुत्र पिता का बाँया हाथ होता है। यही अपेक्षा मुंशी दयानाथ रमानाथ से रखते हैं कि युवा होकर वह अपना दायित्व बोध संभाले। किन्तु रमानाथ उनकी उम्मीदों पर खरा नहीं उतरता।

1.5.2. निर्बल चरित्र

रमानाथ का लापरवाहपूर्ण व्यक्तित्व उसके चरित्र को निर्बल बनाता है। बड़ा बेटा होने के नाते घर के प्रति उसकी कुछ जिम्मेदारियाँ हैं किन्तु अपने मिथ्या प्रदर्शन डींग हाँकने की प्रवृत्ति के चलते वह घर में अपने सम्मान को खो चुका है। यहाँ तक कि पत्नी द्वारा उसके विवाह करने के प्रस्ताव को भी दयानाथ यह कहकर ठुकरा देते हैं कि, ''जो आदमी अपने पेट की फ्रिक नहीं कर सकता, उसका विवाह करना मुझे तो अधर्म सा मालूम होता है।''

1.5.3 संकोची प्रवृत्ति

रमानाथ सदैव अपनी संतोषी प्रवृत्ति के कारण ही अनेक संकटों में पड़ता है। उसकी सबसे बड़ी कमजोरी ही यह है कि वह अपने मन की बात निकट से निकट व्यक्ति को भी नहीं बताता। यथा घर के आर्थिक हालात वह संकोचवश अपनी पत्नी जालपा से भी नहीं कहता इसी का परिणाम है कि वह गबन जैसी घटना को अंजाम दे बैठता है। यदि वह जालपा को घर के सही हालातों से अवगत करा देता तो यह स्थिति कभी न आती। न ही जालपा उससे गहनों की माँग करती। उसी तरह वह जज के सामने अपनी झूठी गवाही की बात कहने में संकोच करता है। जालपा द्वारा धैर्य बधांने पर कि जज के सामने पुलिस के हथकंड़ों का भण्डा फोड़ करें, अपनी झूठी गवाही की बात स्वीकारे, लेकिन अपनी संकोची प्रकृति के कारण वह चाहते हुए भी ऐसा नहीं कर पाता।

1.5.4 कायरता

रमानाथ स्वयं ही उलझनों को आमंत्रण देकर वह उनका सामना करने के बजाय उनके सामने घुटने टेक देता है। मुसीबतों से भागना उसका स्वभाव है। पहले वह जालपा के सामने घर के सच्चे हालात रखने से भागता है। फिर जालपा की खुशी के लिए गहनें उधार लेकर मुसीबत को न्यौता देता है, उससे बचने के लिए रतन के जेवर दाँव पर लगाता है, सरकारी पैसों का गबन करता है और इन हालातों का सामना करने के बजाय भागकर कलकत्ता चला जाता है। वहाँ पुलिस से बचने के चक्कर में वह झूठी गवाही दे बैठता है। तब जालपा उसकी कायरता पर उसे धिक्कारती है। इस तरह रमानाथ तमाम उम्र अपनी कायरता का शिकार बना रहा।

1.5.5 विलासोनमुखी

युवावस्था से रमानाथ सैर–सपाटे, खेल–कूद एवं फैशन परस्ती में ही लगा रहा, दोस्तों से उधार कपड़े लेकर पहनना, उनकी गाड़ी पी घूमना, लोगों पर इन विलासह वस्तुओं से अपना

झूठा रौब जमाना यह सब उसके स्वभाव में शामिल है। घर के दायित्वों के प्रति गैर जिम्मेदारी का भाव उसके पिता दयानाथ को बहुत खलता था। उसकी यही प्रवृत्ति उसकी बरबादी का कारण बनती है। जीवन के झंझावातों में उलझकर जब उसकी किस्मत उसे कलकत्ता ले गई वहाँ भी वह चाय की दुकान के चलते ही फिर उसी दिशा में बढ़ गया। जोहरा से उसका संबंध इसी कारण जुड़ता है। उसे जब भी अवसर मिलता वह विलासिता के समंदर में डूबकी लगाता रहता।

1.5.6 अनन्य प्रेमी

प्रत्येक व्यक्ति में जीवन की तमाम बुराइयों के साथ–साथ कुछ अच्छाइयाँ भी होती है। निःसंदेह रमानाथ संवेगी एवं कायर पुरूष है। मिथ्या आडंबर, आत्मप्रदर्शन उसकी कमजोरी है किन्तु वह अपने दाम्पत्य को लेकर सदैव गंभीर रहा। जालपा के प्रति अनुराग ही था जो वह सर्राफे से आभूषण उधार ले आया। वह जालपा से सच्चा प्रेम करता है इसलिए उसकी प्रत्येक इच्छा पूरी करना चाहता था। उसे दुखी नहीं देखना चाहता था। उसकी माँ ने कहा था कि गले में विवाह का जुँआ पड़ जाए तो सब ठीक हो जाएगा। जो एक बार तो रमानाथ के बारे में सच ही साबित होती है कि विवाह के पश्चात रमानाथ को दायित्वबोध होता है और वह नौकरी करता हे यद्यपि छोटे पद पर नौकरी करना उसे पसंद नहीं है किन्तु वह जालपा के लिए कुछ करना चाहता है उसे खुश रखना चाहता है।

उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट है कि रमानाथ कथानक का नायक अवश्य है परन्तु उसके व्यक्तित्व का कोई निजत्व नहीं है उसमें एक नायक के उज्जवल पक्ष को साबित करने के कोई गुण नहीं है। वह दुर्बल चरित्र का व्यक्ति है। उसका जीवन सदैव सत्–असत् के द्वंद में उलझा रहा है। वह परिस्थितियों से हारे हुए युवक के रूप में हमारे सामने आता है जो जीवन में कभी भी ठोस निर्णय नहीं ले पाता तथा निरंतर पतन के गर्त में गिरता चला जाता है। अंत में जीवन की सही दिशा हेतु उसे अपनी पत्नी जालपा का सहयोग लेना पड़ता है।

वस्तुतः रमानाथ तो एक प्रतीक है युवा समाज का उसके माध्यम से उपन्यासकार ने आम भारतीय युवा की वस्तुस्थिति को समाज के समक्ष रखा है। जैसे आज का युवा वर्ग फैशनपरस्ती और आधुनिकता की आड़ में गैर जिम्मेदाराना रवैया अपनाता है तथा मिथ्या आडंबर एवं आत्म प्रदर्शन का यह भाव उसे जिस तरह पतन की ओर ले जाता है। उससे पाठकों से परिचित कराना ही प्रेमचंद का उद्देश्य है।

1.6 जालपा कथानक की नायिका हैं सारी हलचल उसी के कारण होती है। उसके चरित्र की विशेषताएं निम्नानुसार है–

पात्र किसी भी कहानी और उपन्यास का प्रमुख अंग है, ये पात्र ही उस साहित्य को जीवंतता प्रदान करते हुए घटनाक्रम को आगे बढ़ाते हैं। ये पात्र स्त्री अथवा पुरूष दोनों हो सकते हैं। अपने चरित्र के आधार पर इसमें किसी एक पात्र की प्रधानता होती है और वही पात्र उपन्यास का नायक अथवा नायिका कहलाते हैं। क्योंकि सारे घटनाक्रम इसी पात्र के ईद–गिर्द चलते रहते हैं। कभी इसमें नायक अथवा नायिका का प्रभाव अधिक होने से यह उपन्यास नायक / नायिका प्रधान उपन्यास भी कहलाते हैं।

जालपा भी गबन के कथानक की नायिका है क्योंकि सारी कथा जालपा के ईद–गिर्द ही उत्पन्न होती है। जालपा जो दीनदयाल की इकलौती पुत्री है और मुंशी दयानाथ की पुत्रवधू तथा

रमानाथ की पत्नी है। उसका बचपन बड़े ही लाड़–प्यार से बीता, पिता उसकी प्रत्येक इच्छा की पूर्ति करते। जालपा में आभूषणों के प्रति चरमोत्कर्ष लालसा है। यही लालसा कथानक का आधार बनती है। परिस्थितियाँ उसके चारित्र में परिवर्तन लाती है और विभिन्न उतार–चढ़ाव से होते हुए उसका चरित्र त्याग और सेवा के बल उच्च आदर्श बन जाता है। जिस तरह आँच में तपकर सोना खरा होता है। जालपा का चरित्र भी विपरीत परिस्थितियों की आँच में तपकर ऊँचाइयाँ पाता है। डॉ. रामविलास शर्मा ने प्रेमचंद के साहित्य में जालपा का स्थान सुनिश्चित करते हुए कहा है –

'वह निर्मला की तरह घूम–घूमकर प्राण देने वाली राह पर कदम उठाने वाली नहीं है और न सुमन की तरह तैश में आकर जल्दी ही किसी अनजान राह पर कदम उठाने वाली। उसका चरित्र कठिनाइयों का सामना करते हुए बराबर निखरता रहा है। क्योंकि वह अपनी ख़ामियों को पहचान सकती है। वह एक ईमानदार और साहसिक स्त्री है।

जालपा के चारित्रिक विशेषताओं को हम निम्न शीर्षकों में विभाजित कर सकते हैं –

1.6.1.<u>आभूषणों के प्रति तीव्र लालसा</u> –

जालपा को बचपन से ही आभूषणों से बेहद लगाव था। उसका मनोवैज्ञानिक कारण है कि आरंभ से ही वह जिस वातावरण में पली बढ़ी वहाँ आभूषणों की ही चर्चा अधिक होती है। माँ उसे अक्सर आभूषण दिलवाती, विसाती से बिल्लौरी चंद्रहार दिलवा देती है उसे पाकर उसके आनंद की कोई सीमा नहीं रहती, सारे गाँव में वह इन गहनों को पहनकर घूमती रहती उसकी बाल संपत्ति भी यह आभूषण ही थे जिसमें वह बिल्लौरी चंद्रहार सबसे प्रिय था। जालपा की आभूषण प्रियता को प्रेमचंद्र कुछ इस तरह व्यक्त करते हैं।

''..... जालपा आभूषणों से खेलती थी यही उसके खिलौने थे। वह बिल्लौर का हार जो उसने बिसाती से लिया था। अब उसका प्यारा खिलौना था। असली हार की अभिलाषा अभी उसके मन में उदय ही नहीं हुई थी। गाँव में कोई उत्सव होता या त्यौहार पड़ता तो वह उसी हार को पहनती थी। कोई दूसरा गहना उसकी आँखों जँचता ही नहीं।''

परन्तु विवाह पर आए आभूषणों में उसकी निगाह चंद्रहार को ही खोजती है और जब उसे चंद्रहार कहीं नजर नहीं आता, परिणाम स्वरूप झुंझलाहट से चिढ़कर वह दृढ़ निश्चय करती है, ''जब मालूम हो गया कि चंद्रहार नहीं है तो उसके कलेजे पर चोट सी लग गई। मालूम हुआ देह में रक्त की एक बूंद भी नहीं है। मानो उसे मूर्छा आ जाएगी। वह उन्माद की सी दशा में अपने कमरे में आई और फूट–फूटकर रोने लगी।''

यद्यपि आभूषण के प्रति इतना प्रेम होना उचित नहीं, किन्तु प्रस्तुत उपन्यास में इसे प्रेमचंद ने सकारात्मकता की ओर मोड़ दिया जैसे – जालपा को आभूषण दिलाने हेतु रमानाथ का नौकरी करना।

1.6.2 <u>आत्म सम्मान की भावना</u>

जालपा में आत्म सम्मान और आत्म गौरव की बेहद ललक है। चंद्रहार न होना उसके लिए प्रतिष्ठा का विषय बन गया जिससे वह घर से बाहर नहीं निकलती, मुहल्ले में किसी से मेल–जोल नहीं रखती क्योंकि उसके पास आभूषण नहीं है। आभूषण अच्छे कपड़े मिलते ही वह

मुहल्ले की स्त्रियों की सिरमौर बन जाती है। इतना ही नहीं वह एडवोकेट इन्द्रभूषण की पत्नी रतन से मैत्री संबंध स्थापित करती है, उसे घर चाय पर निमंत्रित करती है।

आभूषण की लालसा होते हुए भी वह माता के द्वारा दिया चंद्रहार अस्वीकार कर लौटा देती है। सोचती है –

''अम्मा जी इसे खुशी से नहीं दे रही हैं। बहुत संभव है कि इसे भेजते समय वह रोई भी हो और इसमें कोई संदेह नहीं कि इसे वापस पाकर उन्हें सच्चा आनंद होगा। देने वाले का हृदय देखना चाहिए प्रेम से यदि वह मुझे एक छल्ला भी दे दें तो मैं दोनों हाथों से ले लूँगी , दान भिखारियों को दिया जाता है। मैं किसी का दान न लूंगी चाहे वह माता ही का क्यों न हो।''

इसके अतिरिक्त रमानाथ उधार आभूषण खरीदने की बात कहता है इस पर जालपा सगर्व उत्तर देते हुए कहती है –

''मैं वैश्या नहीं कि तुम्हें नोच–खसोट कर अपना रास्ता लूँ। मुझे तुम्हारे साथ जीना मरना है यदि मुझे सारी उम्र बे गहनों के रहना पड़े तो भी मैं कर्ज लेने को नहीं कहूँगी।''

उपरोक्त कथन जालपा के आत्मसम्मान व आत्मगौरव को प्रदर्शित करते हैं।

1.6.3 आदर्श पत्नी

आभूषण के प्रति जालपा का आग्रह इसलिए हुआ कि रमानाथ ने उसके सामने अपने बड़प्पन की डींगे मारी थी। घर के यथार्थ हालातों से वह अनभिज्ञ थी। उसने कभी नहीं चाहा कि उसका पति उसके लिए उधार गहने लाए। रमानाथ ने जो बड़प्पन का आवरण उस पर डाला था उसने ही जालपा के विवेक को ढक लिया था। सही परिस्थितियों से परिचित होकर वह पश्चाताप करती है और स्वयं को दोष देती है। यह उसके चरित्र की उज्जवलता है कि वह अपने आभूषणों को बेचकर गबन किया हुआ रूपया म्यूनिस्पैलिटी में जमा कर आती है, सर्राफा का ऋण भी चुका देती है। यहीं से उसके जीवन की नई यात्रा आरंभ होती है।

''आधी रात तक वह इन चीजों को उठा–उठाकर अलग रखती रही, मानो किसी यात्रा की तैयारी कर रही हो। हाँ! यह वास्तव में यात्रा ही थी। अंधेरे में उजले की, मिथ्या में सत्य की। मन में सोच रही थी। यदि आज ईश्वर की कृपा हुई और वह घर लौटकर आये तो वह इस तरह रहेगी कि थोड़े से थोड़े में भी निर्वाह हो जाय। एक पैसा भी व्यर्थ न खर्च करेगी। अपनी मजबूरी के ऊपर एक कौड़ी भी अपने घर न आने देगी। आज से उसके जीवन का प्रारंभ होगा।''

जालपा के चरित्र की यह सबसे बड़ी विशेषता है कि वह अपने दोषों को स्वीकार करती है। रमानाथ के प्रति उसका यह कथन उसके आदर्श पत्नी स्वरूप को प्रकट करती है।

''इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं, सरासर मेरा दोष है। अगर मैं भली होती तो आज यह दिन क्यों आता, जो पुरूष तीस चालीस रूपये महीने का नौकर हो, उसकी स्त्री अगर दो चार रूपए खर्च करे, हजार दो हजार के गहने पहनने की नीयत रखे तो वह अपनी और उसकी तबाही का सामान तैयार कर रही है। अतः तुमने मुझे इतना धन लौलुप समझा तो कोई

अन्याय नहीं किया मगर एक बार जिस आग में जल चुकी उसमें फिर न कुदूंगी।'' जालपा रमानाथ से अटूट प्रेम करती है, उसके लिए परिस्थितियों से समझौता करने को तैयार है।

1.6.4 आदर्श भारतीय नारी

कलकत्ता में रमानाथ की गवाही से सजा पाने वालों में एक दिनेश भी था। जिसके घर में उसके अलावा देखभाल करने वाला कोई न था, जालपा रोज उसके घर जाती, उसके बच्चों की देखभाल करती और उन्हें सांत्वना देती। रमानाथ जब जालपा से मिलने का प्रयास करता है तो वह उससे मिलने से इंकार कर देती है। इसी बीच जब रमानाथ जोहरा को जालपा के पास भेजता है जो जोहरा जालपा की पवित्रता और सात्विकता से बहुत प्रभावित होती है फलतः अपना जीवन ही बदल लेती है।

अंत में जालपा के चरित्र की शक्ति के प्रभाव में आकर रमानाथ जज से सच्चा हाल कह डालता है। इसी प्रकार जालपा उन आदर्श भारतीय रमणियों में से एक है जिनके प्रभाव से अनेक व्यक्तियों का उद्धार होता हैं। यद्यपि जालपा के चरित्र में आरंभ में कुछ दुर्बलताएं लक्षित होती हैं फिर रमानाथ के चले जाने पर उसमें अचानक बदलाव आ जाता है मानो उसकी आन्तरिक शक्तियाँ ही जाग उठती है। वह एक आदर्श पत्नी के रूप में पति को सद्मार्ग पर प्रवृत्त करने वाली, निर्भीक नारी न्याय प्रिय पात्र के रूप में हमारे सामने आती है उसके चरित्र की यही सात्विकता जोहरा को प्रभावित करती है।

वह नहीं चाहती उसका पति झूठी गवाही देकर निर्दोष को फँसाये इसलिए वह पति के पापों का प्रायश्चित करने का संकल्प लेती है और रमानाथ को फटकारती है,

''अगर तुम सख्तियों और धमकियों से इतना दब सकते हो तो तुम कायर हो तुम्हें अपने को मनुष्य कहलाने का कोई अधिकार नहीं.... झूठी गवाही, झूठे मुकदमें बनाना और पाप का व्यापार करना ही तुम्हारे भाग्य में लिखा है जाओ शोक से जिन्दगी का सुख लूटो । ..... मैं औरत हूँ। अगर कोई धमकाकर मुझसे पाप कराना चाहे तो भले ही उसे न मार सकूँ अपनी गर्दन पर छुरी अवश्य चला दूँगी। क्या तुममें औरत के बराबर भी हिम्मत नहीं है ?''

जालपा के उपर्युक्त कथन उसके चरित्र की उदारता और महानता का परिचय देते हैं। जालपा के रूप में प्रेमचंद ने महान राष्ट्रीय नारी का आदर्श प्रस्तुत किया है। भारतीय नारी हर विपरीत परिस्थितियों में भी अपने व परिवार के चरित्र को लेकर काफी गंभीर रहती है। इतिहास गवाह है कि भारतीय नारी ने समय–समय पर न केवल परिवार बल्कि समाज और राष्ट्र का भी पथ प्रदर्शन किया है।

1.6. 5 बुद्धिमता, भावुक नारी

जालपा भावुक किन्तु बुद्धिवान नारी है। उसमें भाव प्रवणता का अतिरेक है। वह सच्चे हृदय से पति की सेवा करती है। रमानाथ की जेब से एक पत्र उसके हाथ आता है, जिससे वह सारी स्थिति समझ जाती है। इसके पश्चात जब रमानाथ उसे दिखाई नहीं पड़ता तो वह शांकित हो जाती है और उसकी खोज में म्यूनिस्पैलिटी पहुँचती है। वहाँ आभूषण बेचकर रूपया जमा करती सर्राफ का कर्जा भी चुका देती है। समस्त विषम परिस्थितियों का एक साहसिक नारी की तरह सामना करती हुई देखी जाती है। रमानाथ का पता लगाने के लिये वह जिस प्रक्रिया को

अपनाती है, उससे उसके बुद्धि कौशल का परिचय मिलता है वह शतरंज के खेल का नक्शा पुरस्कार हेतु प्रकाशित कराकर रमानाथ का पता लगा लेती है।

1.6.6 चरित्र का क्रमिक विकास और चरमोत्कर्ष

आरंभ में प्रेमचंद ने जालपा का परिचय एक आम भारतीय नारी के रूप में कराया फिर उसके चरित्र का क्रमिक विकास हुआ है। कलकत्ता की घटना उसके चरित्र को उत्कर्ष पर पहुँचाती है वहाँ खटिक देवीदीन जिसने उसके पति को आश्रय दिया था वह उसकी एहसानमंद थी इसलिए वह खटिक होकर भी उसके लिए ब्राह्मण के बराबर था। उसकी पत्नी जग्गो को वह माता के समान मानती है। अपने प्रयासों से वह रमानाथ को भी सही राह पर ले आती है। रमानाथ उसके त्याग और साधना से प्रभावित होकर कहता है :–

''तब वह प्यार करने की वस्तु थी। अब वह उपासना की वस्तु है।'' वहीं जौहरा भी जालपा की त्याग और सेवा से प्रभावित हुए बिना नहीं रह पाती।

''तुमने मुझे उस देवी से वरदान लेने को भेजा था जो ऊपर से तो फूल है पर भीतर से पत्थर, जो इतनी नाजुक होकर भी इतनी मजबूत है''

दिनेश की माँ भी जालपा के उपकारों की प्रशंसा करते हुए कहती हैं –

''हमें तो उन्होंने जीवनदान दिया। कोई आगे–पीछे न था। बच्चे दाने–दाने को तरसते थे। जबसे यहाँ आ गई हैं हमें कोई कष्ट नहीं। न जाने किस शुभ कर्म का हमें यह वरदान मिला है।''

जालपा के आदर्श चरित्र की झांकी उस समय सामने आती है, जब सफाई वकील उसका मलतब स्वीकार करते हुए कहता है –

''..... उसकी सरलता और सज्जनता ने एक वेश्या तक को भी मुग्ध कर लिया और वह उसके बहकाने के बदले उसके मार्ग का दीपक बना गई। जालपा देवी की कर्त्तव्य परायणता क्या दंड के योग है...? जालपा ही ड्रामें की नायिका है। ..... आज वह रंगमंच पर आती तो पन्द्रह परिवारों के चिराग गुल हो जाते। उसने पन्द्रह परिवारों को अभ्यदान दिया है। ..... एक साधारण स्त्री जिसने उच्च कोटि की शिक्षा नहीं पाई, क्या इतनी निष्ठा, इतना त्याग, इतना विमर्श किसी दैवी प्रेरणा का परिचायक नहीं है ...?''

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि जालपा उपन्यास की प्रमुख नायिका है। संपूर्ण कथानक उसी को केन्द्र बनाकर रखा गया है। डॉ. राम विलास शर्मा ने जालपा के व्यक्तित्व को कुछ इन शब्दों में अभिव्यक्त किया है –

''जालपा भारत का उगता हुआ नारीत्व है। वह भविष्य के तूफानों की अग्र सूचना है। उसने वर्तमान की राह पर मजबूती से पाँव रखा है और भविष्य की ओर निःशंक दृष्टि से देखती है। वह एक नई आग है जो झूठी संस्कृति के कागजी फूलों को भस्म कर देती है। वह सदियों के लांछन और आपमान को पहचानने वाली नई शूरता है जिसके आगे कोई बाधा ठहर नहीं सकती। वह हिन्दुस्तान के नये आने वाले इतिहास की भूमिका और इतिहास है जिसमें लाखों जालपा एक साथ बढ़ेगी और ऐसे नारीत्व का चित्र आंकेगी जिसके सामने अतीत के सभी चित्र फीके लगेंगे।

1.7रतन

रतन वकील इन्द्रभुषण की पत्नी है। पहली पत्नी की मृत्यु के काफी समय बाद वकील साहब रतन से शादी करते हैं। रतन एक गरीब परिवार की लड़की थी और इसलिए उसके मामा ने उसका विवाह वृद्ध वकील से कर दिया था। रतन और वकील साहब की उम्र में इतना अन्तर था कि जब जालपा पहली बार उससे मिलने गयी तो उसने रतन को वकील साहब की बेटी समझा। ऐसी अवस्था में कोई भी स्त्री प्रसन्न नहीं रह सकती और उसका पति से असंतोष होना स्वाभाविक ही है। किन्तु रतन को इस स्थिति में रहकर भी क्षोम नहीं होता और वह पूरे मन से वकील साहब की सेवा करती है तथा उन्हें प्रश्न रखने की चेष्टा करती है। वकील साहब को भी रतन से बड़ा स्नेह है और वह रतन की प्रत्येक इच्छा पूरी करने का प्रयत्न करते हैं। पति के वृद्ध होने पर भी रतन के मन में कभी पर पुरुष की बात नहीं आती। केवल एक स्थान पर उसकी हल्की सी दुर्बलता व्यक्त होती है जब कि वह रमानाथ के विषय में एक अनुचित प्रकार का भाव मन में लाती है।

1.7.1 आभूषण–प्रेम

अन्य स्त्रियों की भांति उसे भी गहनों से प्रेम है और वह जालपा के कंगनों को देखकर उन पर इतनी मोहित होती है कि वह वैसे ही कंगन बनवाने के लिए रमानाथ को रुपये देती है। जब रमानाथ वे रूपये अपने हिसाब में दे देता है और जौहरी नये कंगन बनाने से इन्कार कर देता है, तब रतन के बार–बार मांगने पर भी रमा उसे टालने का प्रयास करता है। तब रतन को यह सन्देह होता है कि रमा ने उसके रुपये खर्च तो नहीं कर दिये। इसलिए यहां रतन के चरित्र की एक दुर्बलता व्यक्त होती है। जब जालपा उसे रुपये की थैली देती है तब उसे संतोष हो जाता है। लेकिन रतन जालपा के आग्रह पर रुपये ले जाती है; जिसके परिणामस्वरूप रमा को मुसीबतें उठानी पड़ती हैं। रमा के चले जाने के बाद रतन का हृदय जालपा के लिए दया और स्नेह से भर उठता है। उस समय यह एक सच्ची सहेली के रूप में जालपा के मन को बहलाने की कोशिश करती हे। उसे खुश रखने का प्रयास करती है और एक सच्ची सखी के कर्त्तव्य का निर्वाह करती है।

1.7.2 पति सेवा –

रतन के चरित्र का सबसे अधिक प्रभावशाली पक्ष यह है कि वह एक आदर्श भारतीय पत्नी के कर्त्तव्य का पालन करती है। पति के बीमार होने पर वह जिस लगन से उसकी सेवा करती है उसे देखकर मन बड़ा प्रभावित होता है। पति की मृत्यु के बाद वह संसार से उदासीन–सी हो जाती है। उसकी इस उदासीनता का अनुचित लाभ उठाकर मणिभूषण उसकी सारी जायदाद पर अधिकार कर लेता है। लेकिन वह किसी बात की चिंता नहीं करती।

1.7.3 आत्म सम्मान –

रतन के चरित्र में जहां आदर्श पत्नी के गुण विद्यमान हैं, वहीं उसके चरित्र में आत्मसम्मान की भावना भी कूट–कूट कर भरी हुई है। दूसरा प्रत्यक्ष उदाहरण यह है कि जब मणिभूषण कोठी बेचने की बात कहता है और उसे माहवारी खर्च देने की बात करता है तो उसका आत्मसम्मान जाग उठता है और वह सब कुछ त्याग कर निकल पड़ती है। वह सोचती है ––''मैं क्यों अपने के अनाथिनी समझ रही हूँ ? क्यों दूसरे के द्वार भीख मांगूं ? संसार

में लाखों स्त्रियां मेहनत–मजदूरी कर जीवन निर्वाह करती हैं। क्या में कोई काम नहीं कर सकती ? मैं कपड़े नहीं सी सकती ?''

इस प्रकार वह रमा आदि के साथ रहने लगती है। और वहीं एक संध्या को उसकी मृत्यु हो जाती है।इसका प्रभावशाली वर्णन लेखक ने इन पंक्तियों में किया है –– ''रतन की मृत्यु का शोक वह शोक नहीं था, जिसमें आदमी हाय–हाय करता है, बल्कि वह शोक जिसमें वह मूक रुदन करते हैं, जिसकी याद कभी नहीं भूलती, जिसका बोझ दिल से कभी नहीं उतरता।''

सचमुच रतन के करुण अंत को भुला देना सरल नहीं है। रतन के चरित्र द्वारा लेखक ने भारतीय जीवन की दो महत्वपूर्ण समस्याओं की ओर संकेत किया है। ऐसे बेमेल विवाह समस्या की ओर, जहाँ लड़की के घर वाले दरिद्रता के करण उसकी शादी किसी धनवान वृद्ध से कर देते हैं। द्वितीय, भारतीय जीवन में विधावाओं का अन्त कितना शोकमय होता है।

1.8 **दयानाथ**

1.8.1 ईमादारी –

दयानाथ रमानाथ के पिता हैं और कचहरी में पचास रुपये महिने पर काम करते हैं। वे सिद्धांतवादी हैं। उनकी नौकरी ऐसी है कि यदि चाहे तो सैकड़ों रुपये कमा सकती हैं। किन्तु वे अपने सिद्धांतों पर दृढ़ रहते हैं और जब जौहरी बार–बार तकाजे करता है तब भी रिश्वत लेने को तैयार नहीं होते। इससे उनकी ईमानदारी व्यक्त होती है। इस ईमानादारी से प्रभावित होकर दीनदयाल उनके लडत्रके से अपनी लडत्रकी का विवाह करने को तैयार हो जाते हैं।

1.8.2 **सामर्थ्य से अधिक व्यय –**

रमा की शादी के अवसर पर पहले तो वह विवाह के लिए तैयार ही नहीं होते और जब तैयार हो जाते हैं तो सीमा से बढ़कर खर्च कर डालते हैं। इस समय के उनके भावों को प्रेमचन्द ने इन पंक्तियों में व्यक्त किया है –– ''पहले जोड़े गहने को उन्होंने गौण समझ रखा था। अब वहीं सबसे मुख्य हो गया। ऐसा चढ़ावा हो कि मड़वे वाले देख कर फड़क उठें।''

1.8.3 **अन्तर्विरोध –**

दयानाथ के चरित्र में दो अन्तर्विरोधी प्रवृत्तियों का समन्वय मिलता है। एक ओर जहां वह ईमानदारी का ज्वलंत उदाहरण प्रस्तुत करते हैं, वहीं दूसरी ओर सत्य से आँख मूंद लेते हैं। उनके चरित्र की दुर्बलता वहां प्रकट होती हैं, जहां रमानाथ जालपा के गहने चुराकर उनके हवाले कर देता है। पहले तो वह उसका विरोध करते हैं और चुप हो जाते हैं। इस अन्तर्विरोध का कारण है रमा के विवाह पर सामर्थ्य से अधिक व्यय करना।

1.8.4 अध्ययनशीलता–

दयानाथ को पढ़ने का शौक है। जब कभी वह परेशान होते हैं, पुस्तकालय चले जाते हैं और वहां पढ़कर अपना चित्त शांत करते हैं। इस प्रकार दयानाथ का चरित्र एक सामन्य व्यक्ति का साधारण चरित्र है जो मध्यवर्गीय जीवन का प्रतिनिधि है। उनके चरित्र को एक स्थिर चरित्र कह सकते हैं क्योंकि आरम्भ से लेकर अन्त तक उनका जीवन प्रायः एक जैसा ही बना रहता है।

1.9 **जोहरा**

1.9.1 वेश्या के रूप में

जोहरा एक वेश्या है जिसे पुलिस वाले रमा के पास भेजते हैं ताकि वह रमानाथ के मन को बहलाती रहे। आरम्भ में वह वेश्या के रूप में ही रमानाथ के पास आती है। जब रमानाथ उससे वफा की बात करता है तो वह उत्तर देती है। – ''वहां आप लोग दिल बहलाने के लिए जाते हैं, महज गम गलत करने के लिए, महज आनन्द उठाने के लिए। जब आपकी वफा की तलाश ही नहीं होती, तो वह मिले क्यों कर ?'' इन पंक्तियों से यह स्पष्ट होता है कि वेश्याओं की वेवफाई का कारण उनका स्वभाव नहीं वरन् उनके पास जाने वाले की वासना ही हैं।

1.9.2 रमा के प्रति आकर्षण –

जोहरा का रमानाथ के प्रति प्रेम वासना की उपज नहीं वरन् शुद्ध और सात्विक है। और यह प्रेम धीरे–धीरे पल्लवित होने लगता है। यहां तक कि वह उससे निकाह पढ़वाने या विवाह करने की बात भी कह डालती है। इसका कारण यह है कि जोहरा को रमा के प्रेम में सच्चाई का आभास होता है और रमा की खातिर पुलिस को धोखा तक देने को तैयार हो जाती है।

1.9.3 जालपा का सात्विक प्रभाव –

जालपा के चरित्र ने जोहरा के चरित्र को काफी हद तक प्रभावित किया है। जालपा के चरित्र का सात्विक प्रभाव ही उसे नयी दिशा की ओर मोड़ता है। जब रमानाथ जालपा को दीन–हीन अवस्था में देखता है तो वह जोहरा से उसका पता लगाने को कहता है और यह चाहता है कि जोहरा उसे किसी तरह जालपा से मिलवा दे। जोहरा जब जालपा से मिलती है तो उससे इतनी प्रभावित होती है कि वह अपने जीवन को बिल्कुल बदल डालने का निश्चय करती है।

1.9.4 सेवा–भाव –

जोहरा में सेवा की भावना पूर्णरूप से विद्यमान है। जब रमा पुलिस के पंजे से छूट जाता है तो जोहरा, देवीदीन आदि एक साथ रहने लगते हैं। रतन से अनन्त प्रेम और विश्वास प्राप्त हो जाता है और उसने भी रतन की सेवा जी जान से की –

''आज साल भर से उसने रतन की सेवा–शुश्रूषा में दिन को दिन और रात को रात नहीं समझा था। रतन ने उसके साथ जो स्नेह किया था, उस अविश्वास और बहिष्कार के वातावरण में जिस खुले निःसंकोच भाव से उसके साथ बहनापा निभाया था, उसका अहसान वह और किस तरह मानती।'' रतन की मृत्यु से जोहरा के मन पर प्रबल आघात हेाता है और वह सदैव उदास रहने लगती है। एक दिन वह, रमा और जालपा गंगा के किनारे खड़ें थे; तभी गंगा में एक किश्ती डूब गयी। एक स्त्री के बचाने के लिए जोहरा गंगा में कूद पड़ी लेकिन लौट नहीं पायी। यद्यपि जोहरा की मृत्यु पर उसा कोई सगा–संबंधी रोने वाला नहीं है फिर भी उसकी स्मृति पाठक को दृःख से द्रवित कर जाती है।

जोहरा का चरित्र एक गतिशील चरित्र है। आरम्भ में तो वह एक वेश्या के रूप में ही सामने आती है लेकिन उसके मन में पवित्र भावनाएँ सुप्त पड़ी रहती हैं। रमा के प्रेम और जालपा के चरित्र की पवित्रता के प्रवाह से सोई हुई सात्त्विक भावनाएं जाग उठती हैं और

उसका जीवन बदल जाता है। इस प्रकार लेखक ने यह दिखाया है कि उपयुक्त वातावरण और अनुकूल परिस्थितियों के होने पर वेश्याओं का जीवन भी सुधर सकता है।

1.10 भाषा–शिल्प

प्रेमचन्द की भाषा का अध्ययन करते समय आप इस बात का स्मरण रखें कि वह सर्वप्रथम उर्दू में लिखते थे। हिन्दी में लेखन–कार्य उन्होंने बाद में आरम्भ किया और यह तथ्य उनकी भाषा के स्वरूप के सम्बन्ध में निश्चित जानकारी देता है। प्रेमचन्द भाषा की आत्मा को पहचानते हैं इसलिए हिन्दी लेखन में प्रेमचन्द ने उन्हीं उर्दू शब्दों को ग्रहण किया है जो हिन्दी प्रकृति के अनुकूल हैं, जो भाषा में प्रवाह और व्यंजकता लाने में समर्थ हैं। प्रेमचन्द की भाषा का स्वरूप क्रमशः विकसित होता गया है। आप देखेगें कि उनकी आरम्भिक कृतियों में भाषागत शिथिलता, वाक्य समूह की असम्बद्धता आदि पायी जाती है। शैली का प्रवाह या क्रम टूट जाता है। किन्तु धीरे–धीरे भाषा में प्रौढ़ता, व्यंजकता और प्रवाह आता गया है। प्रेमचन्द की भाषा का सबसे बड़ा वैशिष्ट्य यह है कि वह जनमानस का स्पर्श करती चलती है, वह सरल और सहज है। जनभाषा को कलात्मक अभिव्यक्ति का साधन बनाकर प्रेमचन्द ने कथा साहित्य को नयी देन दी है। आचार्य शुक्ल के शब्दों में ''प्रेमचन्द की सी चलती और पात्रों के अनुरूप रंग बदलने वाली भाषा भी कहीं नहीं देखी गयी थी''। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए प्रेमचन्द को शब्द चयन में उदारता बरतनी पड़ी हैं हिन्दी शब्द –भण्डार में तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी, चार प्रकार के शब्द पाये जाते हैं। तत्सम संस्कृत मूल के शब्द हैं, जो हिन्दी में अपने मूल रूप में ही प्रयुक्त होते है। उदाहरणार्थ सत्य, कर्म, अग्नि आदि। संस्कृत से आये, किन्तु बदले रूप में प्रयुक्त शब्द तद्भव कहलाते हैं, जैसे सच, काम आग। स्थान विशेष की सांस्कृति परम्परा में जन्म लेने वाले शब्द देशज कहे जाते हैं, जैसे गाड़ी आदि? इनके अतिरिक्त हिन्दी में फारसी, अंग्रेजी आदि विजातीय भाषाओं के शब्दों की संख्या भी कम नहीं है। आप प्रेमचन्द में तद्भव शब्दों की बहुलता पायेंगे; वैसे उन्होंने सभी प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है। 'गबन' का अध्ययन करते समय आपने सवयं देखा कि जो बात लेखक ने स्वयं कही है, उसमें तत्सम शब्दों बाहुल्य है। जैसे –जालपा के लिए इन चीजों में लेशमात्र भी आकर्षण न था। 'हाँ वह वर को एक आँख देखना चाहती थी, वह भी सबसे छिपाकर। द्वारचार के समय उसकी सखियां उसे छत पर खींच ले गयीं और उसने रमानाथ को देखा। उसका सारा विराग, सारी उदासीनता मानो छूमन्तर हो गयी। मुँह पर हर्ष की लालिमा छा गयी। अनुराग स्फूर्ति का भण्डार है।''

जहां पात्रों के संवाद हैं वहां पात्रानुरूप तद्भव, देशज, विदेशी शब्दों का प्रयोग अधिक मिलेगा। उदाहरण के लिए आप निम्नलिखित पांक्तियों को देख सकते हैं – 'रमा ने प्रसन्नचित्त बनने के चेष्टा करके कहा – अब आपके हाथ में हूँ, रियासत कीजिए या सख्ती कीजिए। इलाहाबाद की म्यूनिसिपेलिटी में नौकर था। हिमाकत कहिए या बदनसीबी, चुँगी के चार सौ रुपये मुझसे खर्च हो गये।''

उर्दू, फारसी आदि भाषाओं के शब्दों के प्रयोग भाषा में चुस्ती लाने और प्रवाह एवं व्यंजकता बढ़ाने की दृष्टि से किये गये हैं या फिर संवाद का पात्रानुकूल रखने के लिए, उदाहरणार्थ आपने 'गबन' से एक मुसलमान सिपाही को कहते सुना –''एक मुलजिम को शुबहे पर गिरफ्तार किया है। इलाहाबाद का रहने वाला है, नाम है रमानाथ। पहले नाम और सकून दोनों गलत बतलायी थी।''

भाषा को सरल और सजीव बनाकर उसे जनजीवन के निकट पहुंचाने में मुहावरे और लोकोक्तियां प्रायः बहुत सहायक सिद्ध होती हैं। प्रेमचन्द इस काम में सिद्धहस्त हैं। उत्तर प्रदेश के ग्रामीण जीवन के भीतर प्रवेश कर वे मुहावरों का चयन कर लेते हैं और उन्हें देवीदीन जैसे निपट देहाती व्यक्ति में मुँह से अत्यन्त स्वाभाविकता से कहलाते हैं – ''सिपाही क्या पकड़ लेगा, दिल्लगी है ! मुझ से कहो, मैं प्रयागराज के थाने में जाकर खड़ा कर दूं। अगर कोई तिरछी आंखें से भी देख ले तो मूंछ मुंड़ा डालूँ।'' यह सहज भारतीय उक्ति है।

प्रेमचन्द जी ने छोटे और लम्बे दोनों प्रकार के वाक्यों की योजना की है। आरम्भ में उनकी वाक्य–योजना इतनी संगठित और चुस्त नहीं होती थी; वाक्य लड़खड़ा जाते सिद्ध किन्तु 'गबन' में उसकी वाक्य–रचना का अपेक्षाकृत सफल रूप देखने को मिलता है। गंभीर विषयों के अनुरूप प्रेमचन्द लम्बे वाक्य अवश्य रखते हैं किन्तु उनकी कला का सच्चा निखार छोटे–छोटे वाक्यों की छटा मिलेगी–''जवानी की बात है, जब इस बुढ़िया पर जोबन था। मैं डाकिया था। मनीआर्डर तकसीम किया करता था। यह कानों के झुमके के लिए जान खा रही थी, कहती थी सोने के ही लूँगी। इसका बाप चौधरी था। मेवे की दुकान थी। मिजाज बढ़ा हुआ था। मुझ पर प्रेम का नशा छाया हुझा था।''

प्रेमचन्द ने भाषा की सहजता का ध्यान रखते हुए उसमें अवसरानुकूल उपमा, उत्प्रेक्षा अलंकारों का भी प्रयोग किया है। उनका मन गांवों के अंचल में इतना रमा था कि उन्होंने उपमानों का चयन भी वहां के परिचित दृश्यों से ही किया है। प्रेमचन्द के सम्पूर्ण भाषा–विज्ञान में आपको वैयक्तिकता के स्थान पर सामाजिक दृष्टि मिलेगी भाषा की दृष्टि से 'गबन' प्रेमचन्द की प्रतिनिधि रचना के रचना में स्वीकृत है। इसलिए कि 'गबन' में सरसता, माधुर्य व्यंजना, चुस्ती, उदार शब्द–योजना आदि सभी विशेषताओं के दर्शन हो जाते हैं।

शिल्प का दूसरा पक्ष शैली है। 'स्टाइल इज दी मैन (Style is the man himself), यानी शैली स्वयं व्यक्ति का ही मुखर रूप है। शैली में भाषा की अपेक्षा कहीं अधिक वैयक्तिक पुट होता है। इस दृष्टि से प्रेमचन्द अत्यन्त समर्थ शैलीकार के रूप में हमारे सामने आते हैं। प्रेमचन्द विशेष वातावरण में उपन्यास का आरम्भ करते हैं, परिस्थिति की क्रिया–प्रतिक्रिया से कथानक को आगे बढ़ाते हैं, कथानक के साथ–साथ चरित्र भी विकसित होते चलते हैं। इस क्षेत्र में भी प्रेमचनद की शैली निरन्तर परिष्कृत होती रही है। कथावस्तु का शैथिल्य और बिखराब जो आरम्भिक कृतियों में मिलता है, वह धीरे–धीरे समाप्त होता गया है और 'गबन' तो इस दृष्टि से नितांत सफल रचना है। जनसामान्य के परिचित उपकरणों का प्रयोग करने के कारण उसमें कोई झटका लगने वाली घटना समाविष्ट नहीं हुई है, कोई रहस्यमय उलझन नहीं है। वह हमारे अनुभव की वस्तु है। उनकी वास्तु विन्यास प्रणाली को ''अलौकिक रंजन शक्ति–समपन्न'' कहा गया है। वातावरण सजीव है और विकास में संगति है। प्रेमचन्द स्वयं यह मानते थे कि कथावस्तु में घटना वैचित्र्य तभी तक वाँछनीय है जब तक वह घटना वस्तु के मूल ढांचे का अभिन्न अंग बनी रहे है। इस विवेचना से स्पष्ट है किग 'गबन' हमारे सामाजिक और यथार्थ जीवन के सन्निकट है।

प्रेमचन्द उपन्यास को 'मानव–चरित्र का चित्र मात्र' समझते थे। इसलिये उनकी कला का पूरा निखार चरित्रांकन शैली में देखने को मिलता है। 'गबन' चरित्रांकन की दृष्टि से बहुत सफल उपन्यास है, जिसे पढ़ने के बाद ही सम्भवतः शुक्ल जी ने पात्रों की व्यक्तिगत स्वाभाविक विशेषताओं की प्रशंसा की थी। प्रेमचन्द की चरित्रांकन शैली की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे अपने पात्रों को धीरे–धीरे हमारे समीप लाते हैं, क्रमशः उनके मनो रहस्य खोलते चलते हैं,

कल्पना का सहारा लेते हैं किन्तु सत्य का आधार नहीं छुटता। इसलिए उनके पात्र जाने पहचाने लगते हैं। चरित्रांकन में मनोवैज्ञानिक शैली का आश्रय लेते हुए भी समाज की आँखों से ओझल नहीं करते, इसलिए पात्र 'व्यक्ति' होते हुए भी अपने वर्ग के प्रतिनिधि हैं। अपना दृष्टिकोण परखते हुए पात्रों का विकास अस्वाभाविक नहीं होने देते। 'गबन' में जालपा रमा, जोहरा सभी गतिशील चरित्र हैं। आचार्य शुक्ल ने लिखा है 'अन्तःप्रकृति या शील के उत्तरोत्तर उद्‌घाटन का कौशल भी प्रेमचन्द के दो एक उपन्यासों, विशेषतः 'गबन' में देखने में आया।'' इन चरित्रों के विकास एवं उद्‌घाटन के लिए प्रेमचन्द जी ने वार्तालाप का भी सफल प्रयाग कराया है, जिसके उदाहरण आप 'गबन' में रमानाथ और जालपा के वार्तालाप (परि0 21, पृष्ठ 88) और देवीदीन के कथन (परि0 34, पृष्ठ 140) में देखेंगे।

प्रेमचन्द की शैली में एक अद्‌भूत प्रवाह है, जो रस की अनुभूति में सहायक होता है। अनावश्यक को छोड़ देने और आवश्यक को ढूँढ़ लाने की शक्ति, प्रेमचन्द में मिलेगी। उनकी शैली समतल है; उसमें आवश्यक उतार चढ़ाव हनीं है और यही कारण है कि वह जनमानस को छूती है किन्तु भावपूर्ण स्थलों में संक्षेप के साथ प्रभावोत्पादकता और कवित्व आ जाता है। ''लोहित आकाश पर कालिमा का पर्दा पड़ गया था। उसी वक्त रतन के जीवन पर मृत्यु ने पर्दा डाल दिया।''

''रमानाथ वैद्य जी को लेकर पहर रात को लौटे तो यहाँ मौत का सन्नाटा छाया हुआ था। रतन की मृत्यु का शोक वह शोक न था, जिसमें आदमी हाय-हाय करता है, बल्कि वह शोक जिसमें हम मूक रुदन करते हैं, जिसकी याद कभी नहीं भूलती, जिसका बोझ दिल से कभी नहीं उतरता।''

गहरे उतरकर वस्तुओं, भावों और परिस्थितियों को देखने की उनमें महान शक्ति थी। 'गबन' को पढ़ते हुए आपने भी यह अनुभव किया होगा कि वे जवीन के जिस पक्ष की भी वर्णन करते हैं, उसका चित्र उपस्थित कर देते हैं। जीवन के कोमल, मधुर, करुण, कठोर जिस पक्ष को भी प्रेमचन्द की लेखनी छू देती है, वही उपन्यास में आकर धारण कर लेता हैं हमारी इन्द्रियों और हमारा मन उसका प्रत्यख अनुभव करते हैं। अमूर्त भावों को मूर्त रूप में प्रस्तुत कर संवेद्य बना देना, स्थूल घटनाओं का संचय कर उनमें प्राण डाल देना कलाकारों की बहु बड़ी सुलता हैं प्रेमचन्द इसमें सिद्धहस्त हैं। रमा की मनः स्थिति का चित्र देखिये --''रमा की दशा इस समय उस शिकारी की सी थी जो हिनी को अपने शावकां के साथ किलोल करते देखकर तनी हुई बंदूक कन्धे पर रख लेता है, और वात्सल्य और प्रेम की क्रीड़ा देखने में तल्लीन हो जाता है।''

उनकी शैली भावों का अनुगमन करती चलती है और 'उसमें व्यंग का भी अच्छा पुट रहता है; जन-जीवन के धुल-पचे अनुभव के कारण कहीं-कहीं मनोरम सूक्तियाँ भी मिलती हैं। जैसे -'अनुराग स्फूर्ति का भण्डार है।' द्वेष तर्क और प्रमाण नहीं सुनता।' 'प्रेम अपने उच्चतम स्थान पर पहुँच कर देवत्व से मिल जाता है' इत्यादि। इस प्रकार 'गबन' उपन्यास शिल्प की दृष्ट से प्रेमचन्द की प्रतिनिधि एवं सफल रचना है। उसमें कथा वस्तु का सुगठन, चरित्रों का स्वाभाविक विकसा, परिस्थति और वातावरण का सजीव चित्रण, चुस्त वार्तालाप, सहज-सरल भाषा, परिचित मुहावारों और लोकोक्तियों का प्रयोग और शैली का अबाध प्रवाह सभी कुछ मिलता है।

1.11 कहानी कला की दृष्टि से मुंशी प्रेमचंद की कहानी कफन एक उत्कृष्ट कहानी है।

मुंशी प्रेमचंद का साहित्य की दुनिया में अवतरण न केवल साहित्य जगत का सौभाग्य है बल्कि उन्होंने साहित्य के क्षेत्र में लंबे समय से चली आ रही रूढ़िगत पंरपराओं को तोड़ा है और पाठक वर्ग को नवीन दृष्टि प्रदान की है। अब तक जहाँ समाज का उच्च वर्ग की साहित्य लेखन का विषय होता था प्रेमचंद के आगमन से निम्न मध्यम वर्ग के प्रति समाज में संवेदना एवं चेतना जागृत की। उनकी पीड़ा को जन–जन तक पहुँचाया। कफन कहानी भी उस समाज की एक ऐसी ही समस्या को पाठकों के समक्ष रखती है जिसमें एक चिंतन है, समाज में फैली वर्गवैष्म्य की नीतियों, मानव की संवेदना शुन्यता एवं बढ़ती पशुत्व प्रवृत्ति के प्रति जाग्रति लाना है। संवेदना की दृष्टि से यह कहानी उत्तम बन पड़ी है साथ पाठकों की संवेदनशून्यता के लिए उन्हें कचोटती भी है। कहानी की समीक्षा कहानी तत्वों के आधार पर निम्न बिंदु के माध्यम से कर सकते हैं।

1.11.1 कथानक (कथावस्तु) – प्रेमचंद का संपूर्ण साहित्य समाज के निम्न वर्ग की पीड़ा को प्रस्तुत करता है तथा समाज में फैले वर्ग वाद की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करता है जहाँ एक वर्ग है जिसके पास अतिरिक्त धन व जीवन सामग्री है वहीं दूसरी ओर एक वर्ग ऐसा भी है जो दो जून रोटी के लिए संघर्श रत है। उनका संघर्ष इतना कठोर है कि इलाज के अभाव में परिवार के सदस्यों को अपने प्राण भी गंवाना पड़ता है। 'कफन' कहानी का कथानक ऐसे ही वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है।

प्रस्तुत कथा की कथावस्तु बहुत ही संक्षिप्त होते हुए इसमें समाज के असहाय वर्ग की लाचारी और समाज की आर्थिक विषमता के कटु यथार्थ को गंभीरता के साथ चित्रित किया है। कथानक में तीन ही पात्र हैं घीसू, माधव और बुधिया। दोनों ही पुरूष पात्र एक नम्बर के आलसी और कामचोर है। रोजगार के नाम पर कभी बहुत आवश्यकता होने पर ही कहीं जाते हैं वरना किसी के खेत से कुछ अनाज उठा लाते, पेड़ से कुछ खाने का सामान लाकर अपना गुजर बसर करते। इस कारण उन्हें लोगों से काफी जलालत मिलती मगर कहते हैं न चिकने घड़े पर पानी का कोई असर नहीं होता सारा पानी बाहर के रास्ते बह जाता है । घीसू और माधव भी ऐसे ही पात्र हैं जिन पर किसी के तानों – उलाहनों का कोई असर नहीं होता। यही कारण है कि आवश्यकता पड़ने पर किसी के आगे हाथ फैलाने से भी नहीं चूकते और अपने पर कर्ज का लबादा ओढ़ते जाते हैं। फांको की नौबत आने तक घर में ही पड़े रहते हैं लोगों से कर्ज ले काम चलाते हैं और जब चुकता नहीं कर पाते हैं तो लोगों की गालियों और मार खाते हैं।

परिवार की स्त्री जैसे–तैसे परिवार के लिए रोटियाँ जुटाती है किन्तु उसकी प्रसव पीड़ा होने पर दोनों ही उसके दर्द से बेखबर हो बाहर आग में सिकते आलू की फिराक में बैठे रहते हैं कि कहीं इसे दूसरा न निकालकर खाले। दोनों वहीं बैठे–बैठे उसकी मौत का इंतजार करते हैं ताकि उसके मरने पर चैन से सांस ले सके। यहाँ कथानक अपने चरम पर पहुँचता है जब बुधिया की प्रसव वेदना से मृत्यु हो जाती है और उसके कफन की व्यवस्था भी वे कर्ज माँग कर करते हैं। गाँव वाले दया कर उन्हें घर की बहू के अंतिम संस्कार और कफन हेतु कुछ पैसा दे देते हैं किन्तु दोनों पिता पुत्र उस कफन के पैसों से पूरियाँ लेकर खाते हैं शराब पीकर मस्ती में गाते झूमते हैं – ''ठगिनी क्यों नैना झमकावे ! ठगिनी! .....। ''

प्रस्तुत घटना के माध्यम से प्रेमचंद ने मानव के भीतर मरती मानवता और उस पर छाती पशुता से समाज को अवगत करने का प्रयास किया है। एक चिंतन मानस पर डालती है।

1.11.2 पात्र और चरित्र चित्रण –

'कफन' यद्यपि एक संक्षिप्त परिदृश्य की कहानी है। इस दृष्टि से उसके पात्रों की संख्या भी सीमित है। कहानी में कुल तीन पात्र है घीसू, माधव और बुधिया। घीसू और माधव जो परस्पर पिता पुत्र हैं। जिन्हें हम कहानी के प्रमुख चरित्र की गिनती में रख सकते हैं। ऐसे चरित्र जिन्हें हम नायक कह सकते, ना ही खलनायक ही कह सकते हैं। वास्तव में दोनों समाज के निम्न मध्यम वर्ग से आते हें जहाँ कुछ हद तक तो वे स्वयं अपनी दीनता के लिए जिम्मेदार हैं बाकी समाज की वर्गगत विषमता भी इसके लिए काफी हद तक जिम्मेदार है। दोनों ने जीवन में एक ही सूत्र अपना रखा है – 'अजगर करने ना चाकरी पंछी करे न काज, दास मूलूका कह गए सबके दाता राम।' माधव की पत्नी है बुधिया, यद्यपि बुधिया का चित्रण कहानी में अधिक मुखर नहीं हो पाया है किन्तु फिर भी बुधिया ही वह पात्र है जो पाठकों से संवेदना समेटने में सफल रही है और उसी के कारण कहानी में रोमांच उत्पन्न होता है बुधिया की प्रसव पीड़ा की चीखों में पाठक भी सहृदय हो उठता है, उसकी वेदना पाठकों के मन को विचलित करती है, किन्तु दोनों पिता–पुत्र की कायरता, निर्दयता एवं पाशविकता उस वक्त चरम पर देखने को मिलती है। दोनों में से कोई भी बुधिया की सहायता को केवल इसलिए नहीं उठता कि उनके सामने जल रही आग में आलू सिक रहा था। कहीं बेटे के जाने पर पिता आलू न बड़ा हिस्सा खाले। दोनों की इस लज्जाहीनता एवं संवेदनाशीलता की शिकार बनती है बुधिया, जो अपने प्राण गवां बैठती है।

बस यहीं से प्रेमचंद समाज को एक चिंतन देना चाहते हैं कि क्या आज मानवता नष्ट हो चुकी है, क्या समाज में अमानवीयता एवं पाशविकता इस कदर हावी हो गई है ..... इसी कटु यथार्थ को समाज के समक्ष रखने में दोनों ही पात्र धीसू और माधव के चरित्र ने कहानी को रोचकता प्रदान की है। हम कह सकते हैं कि प्रेमचंद जी का पात्र चयन बेहद सूक्ष्म एवं परिपक्व है।

1.11.3 देशकाल और वातावरण – कहानी में निम्न मध्यमवर्गीय परिवार का चित्रण है। गाँव में अभावों से घिरी घीसू और माधव की झोपड़ी, गाँव का सरपंच जिसके समक्ष कर्ज के लिए हाथ फैलाते पिता पुत्र, वहीं अभावों या कह लीजिए कायरता और आलस्यता से भरे इंसान जिनमें नैतिकता लगभग समाप्त हो गई है। बुधिया के कफन हेतु दान स्वरूप दिए गए रूपयों को मदिरा और भोजन में उड़ा देना नृशंसता की पराकाष्ठा है। बुधिया के अंतिम संस्कार हेतु गाँव के जमींदार द्वारा कृपा स्वरूप रूपए दिए रूपयों को भी उन्होंने अपनी अकर्मण्यता और उदर पूर्ति की भेंट चढ़ा दिए। घीसू का यह कथन इस बात की पुष्टि करता है –

अबे! कह देंगे कि रूपये कमर से खिसक गए। बहुत ढूँढा, मिले नहीं लोगों को विश्वास तो न आएगा, लेकिन फिर वही रूपये देंगे।''

उन्हें भरोसा है कि गाँव वाले दया कर फिर से रूपए उधार दे देंगे कारण आज भी गाँव में बजाय शहर के परस्पर सहायता करने की संस्कृति जीवित है। कुल मिलाकर हम कह सकते हैं कि प्रेमचंद ने कहानी में देश–काल और वातावरण के सभी तंतु विधान सुनियोजित ढंग से

प्रस्तुत किए हैं। देशकाल एवं वातावरण की दृष्टि से कहानी अपना प्रभाव उत्पन्न करने में समर्थ रही हैं।

1.11. 4. संवाद एवं कथोपकथन –

संवाद अर्थात कथोपकथन कहानी और उपन्यास के वह तत्व हैं जो कथावस्तु को समझने में पाठक की सहायता करते हैं। इसके लिए आवश्यक है कि संवाद, छोटे, सरस एवं बोधगम्य होने के साथ–साथ रोचक एवं सारगर्भित हों। अच्छे कथोपकथन के अभाव में बेहतर से बेहतर कथावस्तु भी निष्पभावी हो जाती है। अतः कथाकार में यह क्षमता होना अनिवार्य है कि वह कथावस्तु पात्र, देशकाल एवं वातावरण के अनुसार संवाद का रचना कर सके।

प्रेमचंद को मानो इस क्षेत्र में महारथ हासिल है। उनकी कहानियों और उपन्यासों में जब वे पात्रों की रचना करते हैं तो वे पात्र न केवल उस वातावरण को प्रदर्शित करते हैं बल्कि उस पात्र को जीवित बना देते हैं। जालपा, रतन, निर्मला आदि ऐसे ही पात्र हैं जो आज भी पाठकों की स्मृतियों में छाएं हुए हैं। उनके द्वारा कहे गए संवादों के माध्यम से पाठक पात्रों के मनोविज्ञान को भली–भाँति समझ पाते हैं फिर चाहे वह बड़े घर की बेटी हो, जालपा हो या फिर कोई अन्य पात्र। प्रेमचंद द्वारा रचित संवाद चरित्र को स्पष्ट करते हैं। उदाहरण के तौर पर कफन कहानी के संवाद देखिए–

''मालूम होता है बचेगी नहीं....सारा दिन दौड़ते ही गया....जा देख तो आ।''

''मरना ही है तो जल्दी क्यों नहीं मर जाती, देखकर क्या करूँ।''

''तू बड़ा बेदर्द है बे! साल भर जिसके साथ सुख चैन से रहा उसी के साथ इतनी बेवफाई... ?''

अर्थात जिस तरह आदर्शवादी लेखन के लिए प्रेमचंद प्रसिद्ध हैं उनके पात्र इसकी झलक प्रस्तुत करते हैं। कफन कहानी के ये पात्र घीसू और माधव स्वयं में अव्वल दर्जे के आलसी और निकम्मे हैं वहीं बैठे–बैठे घर की बहू को मरते देख रहे हैं किन्तु उनकी अन्तरात्मा उन्हें इस बात का एहसास भी करा रही है।

इसी तरह वे व्यंग्य को भी बड़ी ही सहजता से संवादों में कह जाते हैं, जिसमें पाठक व्यंग्य के साथ संवेदना भी महसूस करते हैं। प्रस्तुत पंक्तियाँ इसे स्पष्ट करती है–

'' दुनिया का दस्तूर है नहीं, लोग बामनों को हजारों रूपए क्यों देते हैं, कौन देखता है , परलोक में मिलता है या नहीं।''

''बड़े–बड़े आदमियों के पास धन है, चाहे फूँके, हमारे पास फूँकने को क्या है... ?''

वहीं व्यक्ति की अमानवीयता की पराकाष्ठा तथा समाज की विडम्बना भी उनके संवादों में देखने को मिलती है।

''लोग पूछेंगे नहीं, कफन कहाँ हैं..... ? बड़ी अच्छी थी बेचारी मरी भी तो खूब खिला–पिलाकर।''

प्रेमचंद साहित्य को समाज का आइना मानते हैं अतः समाज के यथार्थ को पाठकों तक पहुँचाने हेतु वे अपने चरित्रों के माध्यम से ऐसे संवादों की रचना करते हैं जो समाज को सही दिशा निर्देश प्रदान करते हैं।

1.11.5 भाषा शैली – प्रेमचंद मूलतः उर्दू भाषा के लेखक है हिन्दी के क्षेत्र में उनका आगमन तो बहुत बाद में हुआ इससे पूर्व वे उर्दू में ही रचनाकर्म करते रहे अतः स्वाभाविक है कि उनकी भाषा में उर्दू का वर्चस्व बना रहता है। इसके अतिरिक्त प्रेमचंद अपनी कहानियों में सदैव मानवतावादी दृष्टिकोण लेकर चले हैं, मनोविज्ञान की दृष्टि से भी उनकी भाषा पात्रों के अनुकूल है ऐसा लगता है मानो पात्रों के माध्यम से उनमें स्वयं प्रेमचंद का मन झांकता है। कहीं वे सांकेतिक शैली से अपनी बात कहकर निकल जाते हैं किन्तु इससे उनकी कहानियों के रस में कहीं कोई कमी नहीं देखने को मिलती। पुरानी कहानियों में वर्णनात्मक शैली भी देखने को मिलती है। कहीं–कहीं वे अपने पात्रों से संघर्षमय अवसरों पर भी ऐसे वाक्य बुलवा देते हैं,कहीं उनकी भाषा में दार्शनिकता का बोध होता है कुल मिलाकर उनकी भाषा भावों की सहचरी है। देशज शब्दों के साथ–साथ क्षेत्रीय बोलियों को भी वे प्राथमिकता देते हैं कफन कहानी में घीसू और माधव मदिरा के मद में झूमते गाते हैं,

''ठगिनी क्यों नैना झमकावै ? ठगिनी ।''

वैसे ही देशज शब्दों का वे देश काल और वातावरण के अनुसार प्रयोग करते हैं,

'' चमारों का कुनबा था और सारे गाँव में बदनाम। घीसू एक दिन काम करता तो तीन दिन आराम। माधव इतना कामचोर था कि आध घंटे काम करता तो घंटे–भर चिलम पीता।''

''जाकर देख तो क्या दशा है उसकी ? चुड़ैल का फ़िसाद होगा, और क्या ? यहाँ तो ओझा भी एक रूपया माँगता है।''

''सबेरे माधव ने कोठरी में जाकर देखा तो, उसकी स्त्री ठंड़ी हो गई थी उसके मुँह पर मक्खियाँ भिनक रही थीं।''

''कैसा बुरा रिवाज है कि जिसे जीते जी तन ढ़ाँकने को चीथड़ा भी न मिले, उसे मरने पर कफन चाहिए।

1.11.6 उद्देश्य – प्रेमचंद के साहित्य का उद्देश्य सदैव ही यथार्थ और आदर्शवाद से जुड़ा रहा है। अपनी कहानी एवं उपन्यासों के माध्यम से प्रेमचंद ने सदैव समाज को नैतिकता की राह दिखाई है। कफन कहानी का उद्देश्य भी समाज में घटती नैतिकता और उसके दुःपरिणामों से समाज को अवगत कराना है। घीसू और माधव के माध्यम से लेखक ने आने वाले समाज की नंगी तस्वीर दिखलाकर समाज को आगाह किया है।

कहना न होगा 'कफन' कहानी अपने उद्देश्य निर्वाह में न केवल सफल रही है वरन् प्रत्येक पाठक को आत्मलोचन हेतु प्रेरित करती है, ताकि वह अपना मूल्याकंन कर सके कि वह इस समाज में स्वयं को कहाँ पाता है।

1.11.7 शीर्षक – कहानी का शीर्षक अपने आप में उत्सुकता उत्पन्न करने वाला है। 'कफन' शब्द सुनाई देते ही मस्तिष्क में पार्थिक देह पर पड़े उस वस्त्र का स्मरण हो आता है। निःसंदेह प्रस्तुत कहानी में भी कफन का वही अर्थ है किन्तु कथाकार ने उस निर्जीव विषय को जिस

संवेदना से जोड़ा है उसने शीर्षक को और भी सार्थक बना दिया है। 'कफन' ही है जो कहानी को चरमोत्कर्ष पर ले जाता है। घीसू माधव का कफन के पैसों से मदिरापान करना जहाँ पाशविकता का उत्कर्ष पर ले जाता है वहीं पाठकों के मन में इस कृत्य के प्रति नफरत का भाव जागृत करता है। मानव मन में संवेदना का संचार करना ही कहानीकार का उद्देश्य भी है। अतः कहानीकार ने कहानी का शीर्षक 'कफन' रखकर कहानी के साथ न्याय ही किया है।

विभिन्न वर्ग उनके चरित्रों के मनोविज्ञान समझ के क्षेत्र में प्रेमचंद की न केवल गहरी रूचि थी बल्कि वे उन चरित्रों के माध्यम से अपनी कथावस्तु का इतना प्रभावी ताना–बाना बुनते हैं कि वह कथा कालजयी बन जाती है और उनके पात्र समाज के चलते– फिरते पात्रों में परिवर्तित हो जाते हैं। वे अपने साहित्य में न केवल स्वयं समस्या उठाते हैं बल्कि अपने पात्रों के माध्यम से उन संघर्षों की जीते हुए अंततः जीवन को आदर्श की ओर ले जाते हैं इसलिए प्रेमचंद का समाज यथार्थ से होते हुए आदर्शवाद को बुनता है। अपने साहित्य के माध्यम से प्रेमचंद ने समाज के आम इंसान के मन की बात कहने में महारथ हासिल की है। यही कारण है उनका साहित्य आम भारतीय जन के बहुत करीब है।

वे सदैव अपने कर्म के प्रति गंभीर और संवेदनशील रहे हैं, यही उम्मीद वे साहित्य समाज से भी रखते हैं। उनके अनुसार –''जब तक साहित्य का काम केवल मन बहलाव का सामान जुटाना, केवल गा–गाकर सुलाना और आँसू बहाकर जी हल्का करना था इसके लिए कर्म की आवश्यकता न थी। मगर अब साहित्य को केवल मनोरंजन की वस्तु नहीं समझते हमारी कसौटी पर वही साहित्य खरा उतरेगा जिसमे उच्च चिंतन हो, स्वाधीनता का भाव हो, सौंदर्य का सार हो,सृजन की आत्मा हो, जीवन की सच्चाइयों का प्रकाश हो। जो हममे गति और बेचैनी पैदा करे सुलाए नहीं क्योंकि अब ज्यादा सोना मृत्यु का लक्षण है।''

.....000.....

1.9 इकाई सारांश

हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में प्रेमचंद का योगदान अवस्मरणीय है उनके द्वारा रचित उपन्यास 'गबन' कालजयी है। प्रस्तुत इकाई में 'गबन' का समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। गबन एक समस्या प्रधान उपन्यास है उस दौर में निहित समस्याओं को प्रेमचंद ने बड़ी ही सहजता से पाठकों के समक्ष रखा है। इसके अतिरिक्त प्रस्तुत उपन्यास में उन्होंने नारी मन के सबल और दुर्बल दोनों पक्षों को भी बड़े ही सुदंर ढ़ंग से रेखाकिंत किया है। जैसे की प्रेमचंद के लेखन की विशेषता है वे आदर्शवाद और यथार्थवाद दोनों को ही साथ लेकर चलते हैं, प्रस्तुत उपन्यास उनकी इसी विशेषता को प्रदर्शित करता है।

1.10 बोध प्रश्न –

1. गबन उपन्यास है–

अ. प्रकृति प्रधान

ब. वातावरण प्रधान

स. समस्या प्रधान

द. घटना प्रधान

2. 'कहानी एक गमला है जिसमें एक ही पौधे का माधुर्य अपने समुन्नत रूप में प्रदर्शित होता है। ' प्रस्तुत विचार हैं–

अ. जयशंकर प्रसाद

ब. आचार्य नंददुलारे वाजपेयी

स. हजारी प्रसाद द्विवेदी

द. प्रेमचंद

3. वही साहित्य चिरायु होता है जो–

अ. मौलिक प्रवृत्तियों पर आधारित हो।

ब. काल्पनिक हो

स. नारी प्रधान हो।

द. कथाविन्यास पर आधारित हो।

4. ''जालपा भारत का उगता हुआ नारीत्व है।'' उक्त कथन है–

अ. डॉ. धर्मवीर

ब. रामविलास शर्मा

स. नामवर सिंह

द. परशुराम चतुर्वेदी

5. ''तब वह प्यार करने की वस्तु थी, अब वह उपासना की वस्तु है।'' प्रस्ततु कथन कहा गया था–

अ. रतन

ब. जोहरा

स. जग्गो

द. जालपा

1.11 (अभ्यास प्रश्न) अपनी प्रगति जांचिए

1. रमानाथ के चरित्र पर प्रकाश डालिए।
2. सिद्ध कीजिए गबन एक नायिका प्रधान उपन्यास है।

3. रतन के जीवन की विसंगतियाँ बेमेल विवाह का परिणाम है कैसे स्पष्ट कीजिए

4. प्रेमचंद ने जिस उद्देश्य और मूल समस्या को गबन में उठाया है उसका समाधान करने में वे कहां तक सफल हुए ?

5. जोहरा का व्यक्तित्व पर प्रकाश डालिए

6. प्रेमचंद उपन्यास सम्राट है। सर्वथा उपयुक्त होगा कैसे उनकी उपन्यास कला की विशेषता के आधार पर उक्त कथन का प्रमाणित कीजिए –

1.12 नियत कार्य/गतिविधि

1. वर्तमान संदर्भ में प्रेमचंद के उपन्यासों की प्रासंगिकता पर चर्चा कीजिए।
2. 'साहित्य वही उपयोगी है जो हमें सुलाए नहीं बल्कि बैचेनी पैदा करे।' इस मत से आप कहाँ तक सहमत हैं ? अपने विचारों पर समूह में चर्चा करें ।
3. प्रेमचंद की कहानियों में आदर्शवाद और यथार्थवाद के कुछ उदाहरण छाँटिए।
4. प्रेमचंद की कहानी अथवा उपन्यास के किन्ही पाँच नारी पात्रों के चरित्र को चुनकर वर्तमान परिवेश में नारी जीवन में आए परिवर्तन से उनकी तुलना कीजिए ?
5. प्रेमचंद के उपन्यासों पर बनी फिल्में खोजिए तथा फिल्मी पर्दे पर उनकी सफलता–असफलता अपना मत व्यक्त कीजिए।
6. प्रेमचंद ने जोहरा के माध्यम से वेश्या जीवन की विडम्बना को पाठकों के समक्ष रखा है, क्या आपने ऐसा कोई उदाहरण प्रस्तुत किया है चिंतन कीजिए।

1.12 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु–

इस इकाई के अध्ययन के बाद कुछ बिंदुओं पर चर्चा तथा स्पष्टीकरण की मांग कर सकते हैं, उन बिंदुओं को नीचे अंकित कर सकते हैं ।

1.12.1 चर्चा के लिए बिंदु –

स्पष्टीकरण के बिंदु

1.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें –

1. प्रेमचंद एक अध्ययन — डॉ. राजेश्वर गुरू
2. कथा साहित्य
3. कफन — प्रेमचंद
4. कहानी–नई कहानी — डॉ. नामवर सिंह
5. प्रेमचंद के जीवन, कला और कृतित्व — हंसराज रहबर

.....000.....

इकाई –2

हिन्दी कथा साहित्य

इकाई की रूपरेखा–

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 गबन एक समस्यात्मक उपन्यास–
    1.3.1 आभूषण के प्रति अतिशय प्रेम
    1.3.2 प्रदर्शन या मिथ्या आत्मसम्मान
    1.3.3 रिश्वत की समस्या
    1.3.4 विधवा जीवन की विसंगति की समस्या
    1.3.5 अनमेल विवाह
    1.3.6 पुलिस के वंचनापूर्ण हथकंडों की समस्या
    1.3.7 उधार की समस्या
    1.3.8 वैश्या जीवन की समस्या
    1.3.9 संयुक्त परिवार की समस्या
    1.3.10 स्त्री स्वाधीनता की समस्या
1.4 गबन उपन्यास की व्याख्या
1.5 कफन कहानी व्याख्या
1.6 प्रेमचन्द की कहानियाँ पर समीक्षात्मक लेख
1.7 प्रेमचंद साहित्य और फिल्मांकन (प्रशंस्ति विशिष्ट लेख)
1.8 इकाई सारांश
1.9 अपनी प्रगति जांचिए
1.10 नियत कार्य/गतिविधि
1.11 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के
    1.11.1 चर्चा के लिए बिंदु
    1.11.2 स्पष्टीकरण के बिंदु
1.12 बोध प्रश्न
1.13 बोध प्रश्नों के उत्तर
1.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

हिन्दी कहानी के क्षेत्र में प्रेमचंद का आगमन एक महत्वपूर्ण घटना है। उन्होंने विविध परिस्थितियों में पड़े हुए मनुष्य का चित्रण तथा समाज के प्रत्येक स्तर के जीवन की घटनाओं को अपनी कहानियों में स्थान दिया है। हिन्दी की प्रगतिशील कहानी प्रेमचंद की परंपरा का ही विकास कही जा सकती है। क्योंकि परवर्ती सभी कहानीकारों ने प्रेमचंद का अनुसरण किया है। उनकी कानी गाँधीवाद, साम्यवाद आदि से प्रभावित है, इन कहानियों में जहाँ बुद्धि का अजिरेक है वहाँ व्यक्ति को लेकर विदग्राह, विस्फोट और चिंतन की प्रवृत्ति भी देखने को मिलती है।

जीवन की जटिलताओं एवं संघर्षों ने आज के कहानीकारों को अधिक यथार्थवादी बना दिया है। आज उसी प्रकार की कहानियाँ जनता द्वारा अपनाई जा रही है, जो शोषित वर्ग की वाणी को दृढ़ता देने के लिए लिखी जा रही हैं। यही कारण है कि आज कहानियों का फलक काफी विस्तृत हो गया है।

वहीं बहुत कम साहित्यकार ऐसे है जिन्होंने फिल्मी दुनिया में भी अपना योगदान दिया उन्हीं में प्रेमचंद एक ऐसे साहित्यकार हैं जिनकी कई रचनाओं पर फिल्मांकन किया गया । वे साहित्य के माध्यम से समाज की सेवा का लक्ष्य लेकर मुंबई आए थे, ये और बात है कि बाजारवाद की भीड़ में उनका आदर्शवाद कहीं खोकर रह गया।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में प्रेमचंद की कहानियों पर सारगर्भित सामग्री के साथ उनके उपन्यास गबन पर भी सामग्री प्रस्तुत की गई है। जिसके अध्ययन के उपरान्त विद्यार्थी –

- प्रेमचंद की कहानी कला से परिचित होंगे, तथा कहानी के क्षेत्र में उनके योगदान को समझेंगे।
- प्रेमचंद तथा उनके समकालीन कथाकारों का तुलनात्मक अध्ययन कर पाऐंगे।
- कफन कहानी की कथावस्तु से अवगत होंगे।
- समाज में व्याप्त आर्थिक विषमता के संबंध में चिंतन कर पाएंगे।
- गबन उपनास के माध्यम से तात्कालिन परिस्थितियों के बारे में ज्ञान प्राप्त करेंगे तथा संकट में कैसे परिस्थितियों का सामना किया जाता है समझेंगे।
- छात्र प्रेमचंद साहित्य पर फिल्मांकन के बारे में जान सकेंगे।

1.3 गबन एक समस्यात्मक उपन्यास है ?

कोई भी साहित्यकार अपने युग की समस्याओं से अछूता नहीं रह सकता। प्रेमचंद भी ऐसे ही साहित्यकार रहे हैं जिन्होंने अपने उपन्यासों में समकालीन समाज के विभिन्न वर्गो की समस्याओं का चित्रण किया है। हम कह सकते हैं कि हिन्दी उपन्यास को प्रेमचंद का यह सबसे बड़ा योगदान है कि उस युग में जहाँ उपन्यास महज हल्के फुलके मनोरंजन के साधन के रूप में देखा जाता था उसे यथार्थ जीवन से जोड़कर इस विधा को एक गंभीर विधा का रूप प्रदान किया। सेवा सदन, प्रेमाश्रम, रंगभूमि, कायाकल्प, गोदान, निर्मला, गबन आदि ऐसे उपन्यास हैं। जिनमें उस युग की सामाजिक, राजनीतिक आर्थिक नारी मनोविज्ञान संबंधी समस्या का प्रतिबिंब

देखने को मिलता है। इन उपन्यासों में जीवन का यथार्थ चित्रण पाकर ही ये पाठकों के बीच इतने प्रभावशाली हुए हैं।

गबन भी प्रेमचंद का ऐसा ही समस्यात्मक उपन्यास है जिसमें समाज के निम्न मध्यम वर्ग की समस्याओं का चित्रण देखने को मिलता है। आर्थिक विषमता सदैव ही समाज की समस्या रही है। हर युग में समाज दो वर्गो में बंटा रहा है। एक वर्ग जो सुविधा संपन्न है वहीं दूसरा वर्ग इन सुविधाओं से उतना ही दूर है। प्रेमचंद की सहानुभूति सदैव इस शोषित वर्ग के साथ रही है। उन्होंने इस निम्न मध्यम वर्ग की समस्याओं जैसे, कुंठित कामनाएं, झूठा दिखावा, उधार लेने की प्रवृत्ति, युवा वर्ग की समस्याएं आदि। चूँकि गबन भी निम्न मध्यम वर्गीय परिवार पर आधारित उपन्यास है अतः जाहिर है कि इस वर्ग के जीवन से जुड़ी सभी समस्याओं को उन्होंने बड़ी ही सजीवता के साथ उभारा है। गबन में निहित प्रमुख समस्याएं इस प्रकार हैं।

1.3 1 <u>आभूषण प्रेम</u>

गहनों के प्रति स्त्रियों का विशेष प्रेम होता है। जब यह प्रेम अत्यधिक हो जाता है और उसकी पूर्ति न होने पर व्यक्ति कामनापूर्ति के अनन्य साधन प्रयोग करता है और इस तरह जाने–अनजाने कई समस्याओं को आमंत्रण दे बैठता है। स्त्रियों के इसी आभूषण प्रेम पर चिंतन व्यक्त करते हुए प्रेमचंद जी कहते हें – ''गहनों का मर्ज इस गरीब देश में जाने कैसे फैल गया, जिन लोगों को भोजन का ठिकाना नहीं वे भी गहनों के पीछे प्राण देते हैं। हर साल अरबों रूपए सिर्फ सोना–चांदी खरीदने में व्यय हो जाता है। संसार के किसी भी देश में इन धातुओं की इतनी खपत नहीं है इससे उन्नति तथा उपकार की जो महान शक्तियाँ हैं, उन दोनों का अंत हो जाता है। बस यही समझ लो कि जिस देश के लोग जितने ही मूर्ख होंगे वहाँ जेवरों का प्रचार भी उतना ही होगा। ..... जो धन भोजन में खर्च होना चाहिए बाल बच्चों का पेट काटकर गहनों की भेंट कर दिया जाता है बच्चों को दूध न मिले न सही। ..... मैं तो कहता हूँ यह गुलामी पराधीनता से कही बढ़कर है।''

जालपा भी गबन की ऐसी ही पात्र है जिसे गहनों से अत्यधिक लगाव है। विवाह में ससुराल से चंद्रहार नहीं दिया गया तो उसके जीवन में गहरी निराशा छा गई। यहाँ तक कि वह अपनी ही माँ से ईर्ष्या करने लगी। उसने तय कर लिया कि यदि उसे चंद्रहार नहीं मिला तो वह कोई और गहना तन पर धारण नहीं करेगी। किन्तु जब दफ्तर के रूपयों की क्षतिपूर्ति के लिए रमानाथ उसके वही गहने चुरा लेता है तो वह शोक में डूब जाती है।

स्त्रियों का गहनों के प्रति लगाव स्वाभाविक है किन्तु जब वह उन गहनों को ही समाज में अपनी प्रतिष्ठा का पैमाना मान लेती है तो यह गंभीर समस्या का भय धारण कर लेती है जालपा का विवाह में चंद्रहार न आना, उस पर गहनों का चोरी हो जाना उसके लिए चिंता का विषय होना स्वभाविक था किन्तु उन गहनों के बिना कमरे से बाहर न निकलना, यह सोचना कि बिना गहनों के घर से बाहर निकलने पर लोग अपमान की दृष्टि से देखेंगे एक समस्यात्मक प्रश्न है इससे पति–पत्नी के संबंधों में भी दरार आ जाती है। जिससे रमानाथ नौकरी कर पत्नी के लिए आभूषण बनवाने का निर्णय लेता है और इसी नौकरी के कारण उसके जीवन में काफी उतार–चढ़ाव आते हैं और उपन्यास का घटनाक्रम आगे बढ़ता है।

1.3.2 <u>प्रदर्शन या मिथ्या आत्म सम्मान –</u>

आभूषण प्रेम से जुड़ी समस्या है प्रदर्शन और मिथ्या आत्मसम्मान की। वर्तमान में भी यह समस्या समाज की अहं समस्या बनी हुई है कि मध्यम वर्ग का व्यक्ति उच्चवर्ग के व्यक्ति से तुलना करता है तथा वह सब सुख–सुविधाएं पाना चाहता है जो उच्च वर्ग के पास है। इस प्रयास में वह अपनी असलियत छिपा कर झूठा प्रदर्शन करने से भी नहीं हिचकता जालपा के आभूषण प्रेम के पीछे भी यही प्रदर्शन एवं मिथ्या आत्मसम्मान का भाव था। जिसके कारण वह न तो उपलब्ध आभूषणों का उपभोग ही कर पाई न ही अपने यथार्थ जीवन से सही तालमेल ही बैठा पाई। वह आधा तीतर आधा बटेर बनकर रह जाती है।

आज यह समस्या मध्यम वर्ग की सबसे व्यापक समस्या है। रमेश बाबू, रामनाथ, दयानाथ आदि सभी इस समस्या से ग्रस्त है और दोहरा जीवन जी रहे हैं। वास्तव में वे कुछ और है दिखावे में कुछ ओर हैं और यह दिखावा कभी भी अंत तक नहीं रहता, कभी न कभी नाटक का परदा गिरता ही है और ऐसे समय में व्यक्ति की जो स्थिति बनती है वह अपने आप में एक समस्या है।

1.3.3 रिश्वत की समस्या

आज अधिकांश व्यक्ति अपनी चादर से लंबे पैर पसारे हुए हैं। अपनी अनंत, कामनाएं जिन्हें किसी भी कीमत पर पा लेने की इच्छा उसे अनैतिक रास्तों की ओर ले जाती है जिनमें एक है रिश्वत, रिश्वतखोरी की बीमारी आज देश की एक अहं समस्या है। जब व्यक्ति देखता है कि उसका खर्च आमदनी से कहीं बढ़कर है। तो वह रिश्वत लेने का प्रयास करता है। आम धारणा है कि सरकारी नौकरों का रिश्वत लेने का बड़ा कारण उनकी आमदनी का कम होना है। उन्हें अपने जीवन निर्वाह के लिए रिश्वत लेना जरूरी हो जाता है।

किन्तु इस संबंध में प्रेमचंदजी का मत है कि व्यक्ति अपने खर्च पर नियंत्रण न होने से रिश्वत लेता है रमानाथ और दयानाथ इसका एक सकारात्मक पहलू है, जिन्होंने जीवन में कभी रिश्वत नहीं ली और सीमित साधनों में ही आने परिवार का पालन किया। वहीं रमानाथ का प्रयास है कि वह अधिक से अधिक रिश्वत ले ताकि वह अपने शौक को पूरा कर सके, पत्नी के लिए गहने बनवा सके। मगर रिश्वत के पैसों से कब किसका भला हुआ हैं यही पैसा आगे जाकर समस्या बन जाता है। आज संपूर्ण देश में रिश्वत का महारोग अपनी जड़ें जमाएं बैठा है, युवा– वयस्क सभी आधुनिकता की दौड़ में आधुनिक होने, भौतिक संसाधन जुटाने की होड़ में रिश्वतखोरी के शिकार हो रहे हैं। जो आगामी भारत के लिए नैतिक संकट उत्पन्न कर रहा है।

1.3.4 विधवा जीवन की विसंगति की समस्या

भारत में आज भी स्त्रियों की स्थिति उतनी बेहतर नहीं है फिर उस दौर में जहाँ स्त्री शिक्षा का अभाव था, ऐसे में पति के रहते तो स्त्री कुछ न कुछ सम्मान की अधिकारी होती ही थी, साथ ही उसे अपने भरण पोषण की समस्या भी नहीं रहती। किन्तु वहीं पति के न रहने पर उसका जीवन दुरूह हो जाता है। इतना ही नहीं सिर पर किसी पुरूष का साया न होने से समाज की कुदृष्टि भी उसका जीना मुश्किल कर देती है। पति के न रहने पर स्वयं के भरण–पोषण के लिए भी उसे परिवार का मुँह तकना पड़ता है। यदि उसका कोई पुत्र नहीं है तो उसकी स्थिति और भी निस्सहाय हो जाती है परिवार के सदस्य उसकी संपत्ति को येन–केन अधिकृत कर उसे घुट–घुटकर जीने के लिए छोड़ देते हैं।

गबन में रतन भी ऐसी ही भारतीय नारी का प्रतिनिधित्व करती है। जिसे यह आघात सहना पड़ता है वकील साहब की मुत्यु के पश्चात् जब इस समस्या से उसका साक्षात्कार होता है तो उसकी करूण गाथा पढ़कर मन द्रवित हो जाता है। जिस रतन को पति के रहते आभूषणों और मंहगे वस्त्रों नौकर–चाकरों की कमी नहीं थी वही रतन अब वकील साहब के न रहने पर उनके भतीजों द्वारा संपत्ति से वंचित कर दी जाती है। जिसके विरोध में स्वयं रतन उद्वेलित हो कहती है ।

''न जाने किस पापी ने यह कानून बनाया था कि स्त्री का पति की संपत्ति पर कोई अधिकार नहीं। अगर ईश्वर कहीं है और उसके यहाँ कोई न्याय होता है तो एक दिन उसी के सामने उस पापी से पूछूंगी – 'क्या तेरे घर में माताएँ, बहनें न थी ? तुम्हें उनका अपमान करते लज्जा न आयी ?' अगर मेरी जुबान में इतनी ताकत होती कि सारे देश में उसकी आवाज पहुँचती, तो मैं सब स्त्रियों से कहती – 'बहनों किसी सम्मिलित परिवार में विवाह मत करना और अगर करना तो जब तक अपना घर अलग न बना तो चैन की नींद मत सोना .... अगर तुम्हारे पुरूष ने कुछ छोड़ा है तो अकेली रहकर भोग सकती हो, परिवार में रहकर तुम्हें उससे हाथ धोना पड़ेगा। परिवार तुम्हारे लिए फूलों की सेज नहीं काँटों की शय्या है, तुम्हारी पार लगाने वाली नौका नहीं निगल जाने वाला जन्तु है–

दुर्भाय ! आज भी समाज में रतन जैसी जाने कितनी ही निःसंतान विधवाएं है जिनका जीवन विसंगतियों से जूझने को विवश है। पति के न रहने पर या तो वे अपशकुनि करार दे दी जाती हैं या फिर समाज की ठोकरें खाने क`लिए अकेली छोड़ दी जाती हैं।

1.3.4 अनमेल विवाह

भारत की बड़ी समस्या है बेमेल विवाह, अक्सर निर्धन परिवार की बेटियाँ इसका शिकार होती हैं। शिक्षा का अभाव तथा आर्थिक असमर्थता में माता–पिता अपनी बेटियों को उनसे उम्र में काफी बड़े व्यक्ति से ब्याह अपने दायित्व की इतिश्री कर देते हैं, चाहे वह उम्र भर इस दंश को झेलती रहे। रतन भी गबन की एक ऐसी ही पात्र है गरीबी के कारण माता–पिता द्वारा एक अमीर वृद्ध को ब्याह दी जाती है। जहाँ रतन को पैसों की कोई कमी नहीं होती किन्तु नहीं है तो पति का प्यार, वह सुख जो एक पत्नी अपने पति से चाहती है। रतन अपने पति वकील इंद्रभूषण में सदैव एक पिता की सी छवि देखती है, पति का भाव उसे कभी नजर नहीं आता।

अतः जीवन के एकान्त को दूर करने, अपना मन बहलाने के लिए वह अपने घर पर लोगों को आमंत्रित करती है, बच्चों को बुलावा भेजती है। इन सबके बावजूद उसके जीवन की रिक्तता भर नहीं पाती है। ये कैसी परंपरा है कि पुरूष चाहे जितने विवाह कर सकता है। जिस आयु की कन्या से चाहे जब विवाह कर सकता है यहाँ तक कि वृद्धावस्था में किसी षोडशी को अपनी अर्द्धांगिनी बना सकता है फिर यह अधिकार किसी स्त्री को क्यों नहीं .....? यह समस्या प्रेमचंद ने गबन के माध्यम से समाज के समक्ष प्रस्तुत की है। पूंजीवादी समाज में जिस प्रकार धन के बल पर व्यक्ति कुछ भी कर सकता है उसी प्रकार पुरूष प्रधान समाज में पुरूष स्वयं अनुपयुक्त होते हुए भी किसी कुमारी कन्या का विवाह के नाम पर जीवन बरबाद कर सकता है। रतन के साथ यही त्रासदी घटी वह एक धनी किन्तु वृद्ध वकील की पत्नी है। रतन एक नवविकसित यौवना है तो उसका पति इन्द्रभूषण न केवल वृद्ध है वरन् उसकी

यौवनागत इच्छाओं की पूर्ति करने में भी अक्षम हैं। दोनों में जो प्राकृतिक विभेद था उसे न तो वकील साहब पाट सकते हैं न ही रतन। यह समस्या आज भी समाज में व्याप्त है।

1.3.5 पुलिस के वंचनापूर्ण हथकण्डों की समस्या

आज हमारे देश में राजनेता और पुलिस ये दोनों ही सबसे अधिक व्यंग्य के पात्र बने हुए है। कारण पुलिस के हथकंडे जग जाहिर है। इस समस्या से सारा देश त्रस्त है। आज कोई भी सभ्य और सुसंस्कृत व्यक्ति पुलिस से दूरी बनाए रखने में ही अपनी सुरक्षा समझता है। कहीं उनकी वजह से वे किसी मुसिबत में न फंस जाए। ऐसी कई घटनाएं समाज में देखने को मिलती हैं कि सच्चे और अच्छे रास्ते पर चलने वाले लोग पुलिस की प्रवंचनापूर्ण हथकंड़ों की समस्या के माध्यम से उजागर किया है।

पुलिस जब सच्चे अपराधी की खोज न कर किसी मुखबिर से झूठी गवाही दिलवाकर निरापराध लोगों को फंसवा देती है तो उस समय क्रांतिकारियों को डकैती के केस में फंसाने के लिए पुलिस क्या करती होगी। आज भी समाचार पत्रों में कई बार पढ़ने को मिलता है कि घूंसखोरी, चोरी, डकैती, बलात्कार, गबन के अपराधी खुले आम घूमते रहे हैं और कोई लाचार, बेबस, निरापराध को मुजरिम करार कर उसका एनकाउण्टर कर दिया जाता है अथवा उसे जेल के पीछे सड़ने के लिए छोड़ दिया जाता है।

गबन उपन्यास में भी कुछ क्रांतिकारियों को डकैती का आरोप लगाकर पुलिस किस प्रकार रमानाथ का उसका मुखबिर बनाने का षड़यंत्र करती है। रमानाथ को कुछ धन का लोभ देकर तथा गबन के आरोप से मुक्त करवा देने का प्रलोभन दे अपने कब्जे में कर लेती हैं पुलिस के ये हथकंडे मात्र उस युग की समस्या नहीं है वरन् वर्तमान में देश इस तरह की समस्या से बेहद परेशान है। आम इंसान की नजरों में पुलिस की छवि बिगड़ती जा रही है, इससे भी बड़ी चिंता का विषय है कि जब रक्षक ही भक्षक बन जाए तो देश न्याय की गुहार कहाँ लगाए... ?

1.3.6. उधार की समस्या

'उधार लेकर घी पीना' एक प्राचीन कहावत है। मिथ्या प्रदर्शन की भावना से मध्यवर्गीय समाज, अपना झूठा आत्मप्रदर्शन करने हेतु अपनी कामनाएं बढ़ा लेते हैं और जब उन्हें अपनी आमदनी से पूरा नहीं कर पाते हैं तो उधार लेना आरंभ कर लेते हैं। जब पैर चादर से बाहर निकल जाते है और व्यक्ति अपने आत्मगौरव की लालसा छोड़ नहीं पाता ऐसे में वह कर्ज के बोझ तले दबता जाता हैं। प्रेमचंद का चिंतन है कि, कर्ज का यह रोग मेरे देश को जाने कैसे लग गया, यह चक्र पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहता है। गबन में पहले तो दयानाथ रमानाथ के विवाह में गहने उधार लेकर बनवाते हैं, जिसका कर्ज चुकाने के लिए रमानाथ को जालपा के गहने चुराने पड़ते हैं। गहने खो जाने पर जालपा और रमानाथ के रिश्तों के बीच काफी दूरियाँ आ जाती है।

किन्तु रमानाथ इस घटना से भी कोई सबक नहीं लेता और नौकरी के दौरान जालपा के लिए उधार गहने खरीद लेता है और जब उधार नहीं चुका पता है तो सरकारी रूपयों का गबन कर लेता है। प्रस्तुत उपन्यास का मूल ही उधार की समस्या से उपजी समस्याएं हैं इसीलिए प्रेमचंद ने उपन्यास का शीर्षक 'गबन' रखा है। जिसके पीछे प्रेमचंद का उद्देश्य समाज को यह संदेश देना है कि व्यक्ति को अपनी आमदनी के अनुसार अपनी आवश्यकताओं को नियंत्रित करना

चाहिए। अन्यथा एक बार यदि यह रोग व्यक्ति को लग गया तो वह जीवन में निरंतर किसी न किसी समस्याओं से घिरा रहता है।

आज देश में कितने ही परिवार ऐसे हैं जिन्होंने उधार के चक्कर में पड़कर अपने को एवं अपने परिवार को मुसीबत में डाल देते है, फिर पीढ़ी दर पीढ़ी उस ऋण के बोझ तले दबे रहते हैं।

1.3.7 वेश्या जीवन की समस्या –

वेश्या समाज की ऐसी पात्र है जिसे समाज बाजार कहकर उपेक्षित करता हैं सोचता है प्यार मोहब्बत उसके लिए केवल खेलने की चीज है, उसे कभी किसी से सच्ची सहानुभूति नहीं हो सकती वह केवल वासना तृप्ति का साधन मात्र है। समाज की इस सोच के कारण उनका जीवन निरंतर पतन की ओर बढ़ता जा रहा है।

गबन उपन्यास में गबन की घटना के साथ–साथ अन्य कई घटनाएं चलती है जिनमें एक घटना जिसकी पात्र है जोहरा। जोहरा एक वेश्या है। वह भी आम लोगों की ही तरह एक इंसान है उसे भी समाज में जीने के अधिकार है। वह भी एक शांतिप्रिय व सम्मान जनक जीवन जीने की अभिलाषा रखती है। उसे भी जीवन में किसी से सच्चा प्यार हो सकता है। गबन का आरोपी होकर रमानाथ जब कलकत्ता पहुँचता है तो उसकी मुलाकात जोहरा से होती है और जोहरा को जब इस बात का एहसास होता है कि रामनाथ का उसके प्रति प्रेम सच्चा है तो एक सहज नारी सुलभ भावना उसके भीतर जागती है जिससे वह रमानाथ की ओर आकर्षित हो जाती है। वहीं जालपा के चरित्र की महत्ता को देखकर उसके मन पर और भी गंभीर तथा पवित्र प्रभाव पड़ता है। तब वह तय करती है कि इस पाप के जीवन को त्यागकर पवित्र जीवन व्यतीत करेगी। इसी विचार से वह जालपा और रमानाथ के साथ इलाहाबाद लौट आती है और बाढ़ में डूबती हुई एक स्त्री का बचाने के प्रयास में अपने आपको बलिदान कर देती है।

प्रेमचंदजी इस घटना के माध्यम से वैश्याओं के जीवन के उज्जवल पक्ष से समाज को रूबरू कराना चाहते हैं ताकि उनके प्रति लोगों की सोच बदले और उनका उद्धार हो सके। क्योंकि कई ऐसी स्त्रियाँ है जो धोखे से इस देह व्यापार की खाई में धकेल दी जाती हैं और जब वे किसी तरह बाहर निकलने का प्रयास करती हैं तो पहले तो कोई उनकी सहायता के लिए सामने नहीं आता यदि किसी तरह वे इस प्रयास में सफल भी हो जाती हैं तो समाज उन्हें यही एहसास कराता है कि देह मंडी ही उनका एक मात्र स्थान है इसके अतिरिक्त उनके लिए समाज में कोई स्थान नहीं हैं।

1.3. 8. संयुक्त परिवार की समस्या

विश्व में भारतीय समाज जो अपनी पृथ्कता रखता है उनमें उसके संयुक्त परिवार का स्वरूप भी एक प्राथमिक विशेषता हैं बरसों से हमारे परिवार कई पीढ़ियो तक संयुक्त रूप से रह रहे है आज भी यह विशेषता काफी परिवारों में देखने को मिलती है। जहां दो बर्तन होते है वहां टकराहट होती है ये प्राचीन कहावत है, किन्तु एक सिक्के के दो पहलू की तरह इसके कुछ लाभ हैं तो कुछ समस्याएं भी है। प्रेमचंद ने इन दोनों पहलूओं का गबन के माध्यम से उभारा है। साथ ही इसमें मध्यम और उच्चवर्ग दोनों के ही संयुक्त परिवार की झलक देखने को मिलती हैं जालपा आरंभ में अपने ससुराल वालों के साथ कटु व्यवहार करती है जिसके वे भी

उसकी उपेक्षा करते हैं। किन्तु रमानाथ के चले जाने पर जब जालपा दुख और अवसाद से घिर जाती है तो वही ससुराल वाले उसके प्रति सहानुभूति दिखलाते हैं यह संयुक्त परिवार का एक लाभ है। इस माध्यम से लेखक यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि संयुक्त परिवार में जीवन तभी सुखपूर्वक रहा पाता है है जब परिवार के सदस्य सामंजस्य, सहानुभूति और विश्वास बनाए रखते हैं।

1.3.9. स्त्री स्वाधीनता की समस्या –

प्राचीन भारतीय समाज में यह उक्ति कही जाती थी 'यत्र पूजयन्ते नारी, रमयन्ते तत्र देवताः' यह सच भी है कि प्राचीन भारतीय समाज में स्त्रियों का विशेष आदर और सम्मान होता था। किन्तु मध्यकाल से उसकी सामाजिक स्थिति में परिवर्तन होने लगा। नारी घर की चार दीवारी में कैद होकर रह गई, धीरे–धीरे उसके सारे अधिकार छिन गये, उन्हें शिक्षा के अधिकार से भी वंचित कर दिया गया। आधुनिक काल के आरंभ तक यही स्थिति रही। जालपा, रतन आदि इसी दौर से गुजरती है। रमानाथ के बेरोजागार होने तक जालपा की भी यही स्थिति थी वहीं वकील साहब की मृत्यु के बाद रतन की स्वाधीनता भी कैद होकर रह जाती है।

प्रस्तुत समस्या के माध्यम से प्रेमचंद यह दर्शाना चाहते हैं कि किसी भी समाज के विकास में नारी का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। अतः परिवार और समाज के विकास में नारी स्वतंत्रता का विशेष महत्व होता है।

उपरोक्त विवेचना के आधार पर हम कह सकते हैं कि गबन एक समस्या प्रधान उपन्यास है जिसमें प्रेमचंद ने परिवार, समाज, राजनीति एवं देश के समस्त पहलूओं की समस्याओं से समाज को अवगत कराया है। प्रमुख बात यह है कि इतने वर्षों के उपरांत आज भी इन समस्या का स्वरूप समाज में व्याप्त है यथा नारी का आभूषण के प्रति मोह, मध्यम वर्ग का उच्चवर्ग के साथ बराबरी कर झूठा आत्म प्रदर्शनिकभाव, उधार लेकर समाज में अपनी आत्म प्रतिष्ठा साबित करने की लालसा, समाज में नारी के प्रति दोयम दर्जे का भाव विधवा और वेश्याओं के प्रति समाज एवं सुरक्षा विभाग के षडयंत्र एवं कूटनीतियाँ आदि आज भी समाज में जारी है अतः जाहिर है प्रेमचंदका उपन्यास गबन कालजयी रचना है, आज भी गबन इसकी सार्थकता सिद्ध होती है।

1.4 कफन व्याख्या

1. ''मालूम होता है बचेगी नहीं। सारा दिन दौड़ते ही गया, जा देख तो आ।'' माधव चिढ़ कर बोला, ''मरना ही है तो जल्दी मर क्यों नहीं जाती, देख कर क्या करूँ'' ''तू बड़ा बेदर्द है वे सालभर जिसके साथ सुख चैन से रहा, उसी के साथ इतनी बेवफाई'' ''तो मुझसे तो उसका तड़पना और हाथ पाँव पटकना नहीं देखा जाता।''

संदर्भ – प्रस्तुत पंक्तियाँ हिन्दी के आधुनिक कथा साहित्य की प्रतिनिधि कहानी, समाज के शोषित वर्ग के प्रति संवेदनशीलता को प्रदर्शित करती, उपन्यास सम्राट प्रेमचंद की बहुचर्चित कहानी 'कफन' से अवतरित है।

प्रसंग – प्रस्तुत प्रसंग में कथाकार ने वर्तमान समाज एवं परिवारों में फैलती संवेदनहीनता एवं खोती नैतिकता को चित्रित किया है। साथ ही आलस्य, कायरता एवं स्वार्थपरता के रोग से ग्रसित व्यक्तियों का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत कहानी में किया है।

भावार्थ – घीसू और माधव कफन कहानी के वे दो पात्र हैं जो संपूर्ण समाज की अनैतिकता, कायरता एवं स्वार्थपरता का प्रतिनिधित्व करते हैं। आधुनिक समाज में सभ्य कहलाता मानव आज जिस दिशा की ओर जा रहा है। वह एक चिंतन का विषय है। प्रेमचंद ने इसे इस परिवार की बहु बुधिया के माध्यम से प्रस्तुत किया है। परिवार दो–दो पुरूषों के होते हुए भी बुधिया प्रसव पीड़ा से छटपटा रही है। मगर दोनों पुरूष पात्र बाहर बैठे–बैठे अपनी अकर्मण्यता एवं हृदयहीनता का परिचय दे रहे है। दोनों में से एक भी बुधिया की सहायता को आगे नहीं, कारण किसी के खेत से लाये हुए आलू आँच में पक रहे है। एक के उठते ही कहीं दूसरा उसे न खाले इस लिए दोनो बुधिया की चीख सुनकर भी वहीं बैठे रहते हैं एक दूसरे के प्रति यह अविश्वास का भाव आज समाज के हर व्यक्ति में समाया है।

उनके निष्ठुरता की पराकष्ठा तो तब होती है जब घीसू बुधिया के प्रति और अपने बेटे से कहता है कि वह अब नहीं बचेगी कम से कम एक बार तो उसे देख आ। जिसके साथ जीवन का एक वर्ष बिताया है, जिसने पत्नी के रूप में अपने समस्त उत्तरदायित्व बखूबी निभाए है। ऐसी पत्नी जब मृत्यु के दरवाजे पर खड़ी है तो कम से कम इस अंतिम समय में तो उसके साथ रह। किन्तु अकर्मण्यता एवं आलू के मोह में फंसा माधव बुधिया की पीड़ा को नजर अंदाज कर कहता है, मरना है है तो जल्द मर जाए कम से कम रात को चैन से सो तो सकूं।

उस पर घीसू जो खुद अपने दायित्व से विमुख होकर बैठा है, माधव को उसके कर्त्तव्य का आभास कराना चाहता है। जो कि आज समाज का दस्तूर है। व्यक्ति स्वयं कुछ नहीं करना चाहता है। दूसरों से उस काम की अपेक्षा अवश्य रखता है।

उसे नीति सिखाते हुए कहता है कि मुझसे उसका दर्द से तड़पना नहीं देखा जाता। साथ ही उसके प्रति तुम्हारी बेवफाई भी उचित नहीं है।

विशेष – कहानी के पात्र समाज का प्रतिनिधित्व करते हैं। समाज की विडम्बना है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने स्वार्थ में लिप्त है उसे दूसरों की पीड़ा दिखाई नहीं देती। साथ ही लेखक ने 'पर उपदेश कुशल बहुतेरे' कहावत को भी चित्रित किया है कि हम प्रायः दूसरों से उसी व्यवहार की अपेक्षा करते हैं जो हम स्वयं नहीं करते।

2. जब दो–चार फांके हो जाते, घीसू पेड़ पर चढ़कार लकड़ियों तोड़ लाता और माधव बाजार में बेच आता और जब तक वे पेसे रहते, दोनों इधर–उधर मारे–मारे फिरते। जब फाके की नौबत आ जाती, तो फिर लकडियां तोड़ते या मजदूरी तलाश करते। गांव में काम की कमी न थी। किसानों का गांव था, मेहनती आदमी के लिए पचास काम थे। मगर इन दोनों को लोग उसी वक्त बुलाते, जब दो आदमियों से एक का काम पाकर भी संतोष कर लेने के सिवा और कोई चारा न होता। विचित्र जीवन था इनका। घर में मिट्टी के दो चार बर्तन के सिवा कोई समपत्ति नहीं। फटे चीथड़ों से अपनी नग्नता को ढंके हुए जिए जाते थे। संसार की चिन्ताओं से मुक्त। कर्ज से लदे हुए। गालियां भी खाते, मार भी खाते, मगर कोई भी कम नहीं दीन इतने की वसूली की आशा न रहने पर भी लोग इन्हें कुछ न कुछ कर्ज दे देते थे। मटर–आलू की फसल में दूसरों के खेतों से मटर या आलू उखाड़ लाते और भून–भानकर खा लेते, या दस–पांच ऊख उखाड़ लाते और रात को चूसते।

संदर्भ – प्रस्तुत पंक्तियाँ हिन्दी के आधुनिक कथा साहित्य की प्रतिनिधि कहानी, समाज के शोषित वर्ग के प्रति संवेदनशीलता को प्रदर्शित करती, उपन्यास सम्राट प्रेमचंद की बहुचर्चित कहानी 'कफन' से अवतरित है।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियों से कथाकार न घीसू और माधव दोनों के चरित्र का यथार्थमय चित्रण प्रस्तुत किया है। दोनों ही आलस्यता की पराकाष्ठा को पार कर चुके हैं। जिन्होंने अपने मान आत्म सम्मान को गिरवी रखा हुआ है, भविष्य से परे ये दोनों केवल वर्तमान में जीकर खुश है। उनकी इसी प्रवृत्ति को कथाकार ने उदाहरण सहित प्रस्तुत किया है।

भावार्थ – घीसू और माधव ऐसे पात्र हैं जो जीवन में श्रम करना ही नहीं चाहते, ना ही उन्हें भविष्य की चिंता है, ना ही जीवन यापन के कोई साधन। जब बिलकुल फाकों की स्थित आ जाती है तो जंगल से कुछ लकड़ियों काट लाते हैं उन्हे बाजार में बेच कर गुजारा कर लेता है, फिर कुछ दिन यहाँ–वहाँ मारे–मारे फिरते है। जबकि गांव में काम की कहीं कमी नहीं है मगर उन्हें कोई काम देना नहीं चाहता, क्योंकि दोनों मिलकर एक आदमी के बराबर भी नहीं करते। उनके रहन–सहन का स्तर देखकर उन पर केवल दया ही की जा सकती है। कारण चेहरे से दीन एवं जगह–जगह फटे वस्त्र देखकर न चाहते हुए भी लोग उन पर कृपा कर ही देते । कभी–कभी लोगों के खेतों से आलू–मटर चुराने, खेतों से गन्ने उखाड़ने पर लोग उन्हें गालियों से भी नवाजते, मार भी खाते मगर सुधारने का नाम न लेते।

यहाँ तक कि घर में बहू बुधिया के आने पर भी यही स्थिति बनी रहती है। इस प्रसंग के माध्यम से प्रेमचंदजी एक संकेत देना चाहते है समाज को कि यह अकर्मण्यता समाज को पतन की ओर ले जा रही है। यह गल्त का नहीं चिंतन का विषय है।

विशेष – प्रस्तुत पंक्ति में प्रेमचंद ने आगामी समाज के चित्र को प्रस्तुत किया है साथ ही चिंतन भी समाज को दिया है।

3. जिस समय में रात–दिन मेहनत करने वालों की हालत उनकी हालत से बहुत कुछ अच्छी नही थी और किसानों के मुकाबले में वे लोग, जो किसानों की दुर्बलताओं से लाभ उठाना जानते थे, कहीं ज्यादा सम्पन्न थे, वहाँ इस तरह मनोवृत्ति का पैदा हो जाना कोई अचरज की बात न थी। हम तो कहेंगे घीसू किसानों में कहीं ज्यादा विचारवान था, जो किसानों के विचार शून्य समूह में शामिल होने के बदले बैठकबाजों की कुत्सित मंडली में जा मिला था। हाँ, उसमें यह शक्ति न थी कि बैठकबाजों के नियम और नीति का पालन करता। इसलिए जहाँ उसकी मंडली के और गाँव के सरगना और मुखिया बने हुए थे, उस पर सारा गाँव अंगुली उठाता था। फिर भी उसे यह तकसीन तो थी कि अगर वह फटेहाल है तो कम से कम उसे किसानों की सी जी तोड़ मेहनत तो नहीं करनी पड़ती। उसकी सरलता और निरीहता से दूसरे लोग बेजा फायदा तो नहीं उठाते।

संदर्भ – प्रस्तुत पंक्तियाँ हिन्दी के आधुनिक कथा साहित्य की प्रतिनिधि कहानी, समाज के शोषित वर्ग के प्रति संवेदनशीलता को प्रदर्शित करती, उपन्यास सम्राट प्रेमचंद की बहुचर्चित कहानी 'कफन' से अवतरित है।

प्रसंग – प्रस्तुत कहानी में कहानीकार प्रेमचंद ती ने समाज में व्याप्त वर्ग वैषम्यता को घीसू और माधव दो पात्रों के माध्यम से किया है। ये दोनों यूँ तो समाज की दृष्टि में उपेक्षित पात्र है किन्तु अपने आप में इस बात से ही संतुष्ट है कि वे निठ्ठल्ले ही सही मगर समाज

में उन मेहनत कशों से ठीक ही है जरे रात दिन खेतों में अपना पसीना बहाते हैं और बदले में बमुश्किल दो जून रोटी भी नहीं कमा पाते। बस इसी विचार से वे दोनों समाज के मेहनतकश समूह के साथ न होकर पंचायती फोकटचंदों के समूह में जा मिले।

भावार्थ– प्रस्तुत गद्य में लेखक ने घीसू और माधव के प्रतिनिधि पात्र बनाकर समाज की उन बुराइयों की ओर समाज का ध्यान आकर्षित किया है कि समाज का एक वर्ग है जो रात–दिन कठोर परिश्रम करता है, साहूकारों के खेतों में उन्हीं के पसीने से ही तो हरियाली है इन हरे भरे खेतों की आमदनी इन पूँजीपतियों की तिजोरी में चली जाती है और अथाह पसीना बहाकर भी इन मजलूमों के हिस्से आती है भूख, लाचारी और गरीबी। घीसू और माधव ने इन सब स्थितियों पर विचार कर महसूस किया है कि इस तरह पसीना बहाकर अपने श्रम पर दूसरों को मौज करने देने से बेहतर है कि वे श्रम ही न करें कम से कम इससे वे अपने शरीर को तो टूटने से बचा रहे हैं। और पेट तो वैसे भी देर–सबेर उनका भर ही जाता है। बस यही सोच–विचारकर दोनों पिता–पुत्र ने खेतों में मजदूरी करने के बजाय गाँव की चौपालों पर बैठकबाजों की भीड़ में शामिल होना ज्यादा मुनासिब समझा। वे बातून बाज तो थे इतनी कला उनमें थी कि वे वहाँ भी मुखिया बन सकते थे किन्तु आलसीपन के कारण वे वहाँ भी नियमों के प्रति गंभीर नहीं हो पा रहे थे अतः उनकी गाड़ी बीच मझधार पर अटकी रही। फिर भी वे दोनों इस बात से संतुष्ट थे कि कठोर मेहनत करके, इस शरीर को तपाकर भी यदि फटेहाल रहना है तो इससे बेहतर है कि वे इस तरह बिना काम करके लोगों की दो बातें सुनकर भी खुश हैं।

विशेष – कहानीकार ने प्रस्तुत पंक्तियों में समाज के उस वर्ग पर आक्षेप किया है जो असहाय वर्ग की मेहनत पर अपना अधिकार जमाए हुए हैं। और उस वर्ग के प्रति संवेदना व्यक्त की है जो रात–दिन मेहनत करने के बावजूद जीवन के कठोर संघर्ष से जूझ रहे हैं।

1.5 **प्रेमचन्द की कहानियाँ पर समीक्षात्मक लेख**

कहानी की परंपरा दीर्घकालीन है, समयानुसार इसमें कई परिवर्तन देखने को मिलते हैं किन्तु इसे हम कहानी के क्षेत्र में विकास के रूप में देखेंगे। वैश्वीकरण ने जहाँ दो देशों की सीमाओं को करीब लाया है वहीं अब हम मानव संवेदना पर केन्द्रीत होने लगे हैं एक देश का साहित्य दूसरे देश के साहित्य को प्रभावित कर रहा है। यही कारण है कि पश्चिम में घटित होने वाली घटनाएं पूर्व में भी उतनी ही महत्वपूर्ण है इतना ही नहीं एक देश के जीवन मूल्य दूसरे देशों के वर्तमान जीवन के संत्रास और पलायन, घुटन आदि के लिए भी उतने ही प्रासंगिक हैं। इसी कारण जीवन के यथार्थ को चित्रित करने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। नई कानी ने मूल्य बोध के साथ जीवन में व्याप्त कटुता, घुटन, विषमता, विरूपता आदि को उभारा है। नई कहानी युग के साथ चलती है। यह उन संवेदनाओं को कुरेदती है जो किन्हीं कारणों से अभी तक सामने नहीं आ पाए हैं। यही कारण है कि आधुनिक कहानी साहित्य की समस्त विधाओं में महत्वपूर्ण मानी जाती है, क्योंकि वर्तमान जीवन के सभी पहलूओं को व्यक्त करने की क्षमता उसमें है। इसलिए नई कहानी को साहित्य की एक सशक्त विधा के रूप में देखा जा रहा है।

नई कहानियों में कई ऐसे कथाकार हुए हैं जिन्होंने अपनी मौलिकता के कारण हिन्दी कहानी को नए आयाम दिए प्रेमचंद उनमें से एक हैं। कहानी में 'सोद्देश्यता एवं सामाजिक–उत्तर–दायित्व' निहित होना चाहिए, यह प्रेमचंद ने अपनी कहानियों में व्यक्त किया

था। एक जागरूक कलाकार होने के नाते उन्होंने समकालीन स्थिति का अध्ययन किया था। उसे भविष्य की नींव माना और भविष्य के उद्घाटन में प्रयुक्त भी किया। उनका यथार्थवाद कला की ओर एक सुंदर प्रयास था उन्होंने इसी अवसर पर जीवन के मनोविज्ञान को चित्रित करना अना लक्ष्य समझा हे और जीवन के बहुविध पक्षों को स्पर्श करके कहानी साहित्य में एक अलग ही क्रांति को जन्म दिया । उनकी कहानी विस्तृत परिवेश में नूतन आयामों को स्पर्श करती है।

प्रेमचन्द की पहली कहानी ''संसार का अनमोल रत्न है।'' यह 1907 के 'जमाना' में छपी थी। उसके बाद चार–पाँच कहानियाँ ओर लिखीं। पाँच कहानियों का संग्रह 1909 में 'सोजे वतन' के नाम से छपा। डॉ. श्री कृष्ण लाल ने लिखा है, ''हिन्दी कहानी का प्रथम विकास प्रेमचन्द्र की प्रथम कहानी ''पंच परमेश्वर में मिलता है, जो पहली बार 'सरस्वती' में जून 1916 में प्रकाशित हुई।'' कहा जाता है कि प्रेमचन्द नाम से पहली कहानी ''ममता'' थी जो सन् 1909 या 1910 में 'जमाना' में छपी थी। इन्होंने हिन्दी में कहानियां सन् 1913 के लगभग लिखना शुरू किया।

हमने प्रेमचंद के मनोविकास की रेखाएं निश्चित करने का प्रयत्न किया है। उनके उपन्यासों के माध्यम से ये रेखाएँ स्थिर हो गई हैं। यद्यपि प्रेमचंद की कहानियों की निश्चित तिथि नहीं मिलती। किन्तु अनुमानतः उनका समय निश्चित किया जा कसता है। और इन कहानियों के माध्यम से प्रेमचन्द्र के मनोविकास का और अधिक स्पष्ट परिचय प्राप्त किया जा सकता है।

समय क्रम से प्रेमचन्द की कहानियों को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता हैः

1. **प्रारम्भिक युग** – देश–प्रेम संबंधों भावुकतापूर्ण कहानियां एवम बुन्देलखंड के इतिहास की गौरव पूर्ण गाथाएँ जैसे 'सोजे वतन' क्रम की कहानियाँ और 'रानी सारन्धा' 'राजा हरदौल', विक्रमादित्य का तेगा' आदि। भारतीय मन और भारतीय प्राचीन व्यवस्था के उदात्त स्वरूप को चित्रित करने वाली कहानियां जैसे 'शंखनाद', 'पंच परमेश्वर' आदि।

2. **विकास युग** – भारतीय ग्राम जीवन के विभिनन प्रसंग और सामाजिक, राजनैतिक ओर साम्प्रदायिक जीवन की कहानियां।

3. **यथार्थोन्मुख कहानियाँ** – सन् 1930 के राजनैतिक आन्दोलन के दिनों के चित्रण एवम् अनेक यथार्थवादी कहानियाँ।

'सप्त सरोज' संग्रह की कहानियाँ आदर्शोन्मुखी हैं। इनमें से पंच परमेश्वर और 'बड़े घर की बेटी' तो प्रेमचन्द की श्रेष्ठ कहानियों में गिनी जाती है। स्वयं प्रेमचन्द इसे अपनी श्रेष्ठ कहानियों में शुमार करते थे। अगर इन दोनों को प्रेमचन्द की प्रारम्भिक कहानियों का नमूना मान लें, तो किन्हीं निश्चित निष्कर्षो तक पहुंच सकना सम्भव होगा प्रेमचन्द के पहले हिन्दी कहानी घटना प्रधान थी, नीतिवादी थी। प्रेमचन्द के साथ इनकी वैज्ञानिकता को प्रश्रय मिला, जीवनापेक्षी दृष्टि आ गई, कुछ निश्चित आदर्श आ गये। यह ठीक है कि ये आदर्श अतीत का अवलम्ब लेकर चल रहे थे। 'पंच परमेश्वर' में एक की ग्राम–व्यवस्था का यशगान है। 'बड़े घर की बेटी' संयुक्त परिवार प्रथा के बड़प्पन प्रकट करती है। इसी प्रकार की कहानियाँ 'नवनिधि' में संग्रहीत हैं। अन्तर इतना हैं, कि इन कहानियों के द्वारा अतीत की आदर्श समाज व्यवस्था पर प्रकाश नहीं पड़ता, बल्कि इनमें सामन्ती युग के शौर्य पूर्ण त्याग के चित्र मिलते हैं, जहां

राजपूती आन पर न मिटने का मृज्युन्जय संकल्प सर्वत्र प्रभावशाली ढंग से व्यक्त हुआ है। 'रानी सारन्धा', 'राजा हरदौल', 'विक्रमादित्य का तेगा' आदि ऐसी ही कहानियां है।

प्रेमचन्द के मनोविकास के अध्ययन के लिये आवश्यक है कि 'सप्त सरोज' की कहानियों में प्रेमचन्द का मन जिस दिशा में जा रहा है, उसका स्पष्ट स्वरूप जान लिया जाय। यह तो एकदम निर्विवाद सत्य है कि 'सप्त सरोज' की कहानियाँ आदर्शोन्मुख हैं, किन्तु इन कहानियों में प्रेमचन्द समय की यथार्थता से अत्यन्त आत्मीयता से परिचित मिलते हैं। जहाँ 'बड़े घर की बेटी', 'पंच परमेश्वर' और 'परीक्षा' कहानियों में वे एकदम आदर्शवादी हैं, वहाँ 'सज्जनता का दण्ड', 'नमक का दरोगा', और 'उपदेश' कहानियाँ ऐसी हैं जिनमें वे यथार्थ की निर्भीकता से उधारकर घ्झार देने का संकल्प लेकर सामने आये हैं। 'सज्जनता का दण्ड' में प्रेमचन्द की उक्ति है। –

''इन्जीनियरों का ठेकेदारों से कुछ ऐसा ही सम्बन्ध है, जैसे मधुमक्खियों का फूलों से। अगर वे अपने नियत भाग से अधिक पाने की चेष्टा नकरें तो उनसे किसी को शिकायत नहीं हो सकती। यह मधु–रस कमीशन कहलाता है। रिश्वत लोक और परलोक दोनों का ही सर्वनाश कर देती है।''

यथार्थ के संबंध में यही व्यंग्यात्मक दृष्टि सर्वत्र मिलती है। अगर ध्यान से देखें तो इस कहानी 'सज्जनता का दण्ड' का आदर्शवादी अन्त उसके यथार्थवादी पहलू को भी स्पष्ट कर देता है। सरदार साहब की तनज्जुली के सम्बन्ध में उनकी पतनी कहती हे, ''हँसना ही चाहिए। रोये तो वह जिसने कौड़ियों पर अपनी आत्मा भ्रष्ट की हो, जिसने रुपयों पर अपना धर्म बेचा हो। यह बुराई का दण्ड नहीं है। यह भलाई और सज्जनता का दण्ड को सानन्द झेलते हैं। लेकिन 'सेवा सदन' में यह यथार्थवादी आभास एकदम उभरकर सामने आ जाता है। कृष्णचन्द्र अपनी भलाइयों पर पछता रहे थे।'' 'सज्जनता का दण्ड' में सरदार साहब प्रेमचन्द के आदर्शवादी मन का आश्रय लेकर पथ भ्रष्ट होने से बच जाते हैं, लेकिन जरा देर बाद ही कृष्णचन्द्र अपनी सज्जनता और भलाई की इतने वर्षो की जमी जमाई साख को एक घड़ी में धूल में मिला देता है।

इसी प्रकार 'नमक का दारोगा' कहानी में पिताजी का अपने पुत्र को उपदेश और पुत्र के पुलिस द्वारा गिरफ्तार होने पर समाज में होने वाली प्रतिक्रिया में प्रेमचन्द के यथार्थवादी मन की झाँकी बड़ी स्पष्ट दीख पड़ती है। (स.स. पृ. 54)

'सौत' कहानी में नारी–जीवन के त्याग और करुणा का बड़ा ही मार्मिक चित्र मिलता है। नारी अपने पति की तुष्टि के लिये कितना बड़ा त्याग कर सकती है यह गोदावदी के चरित्र द्वारा स्पष्ट हो जाता है, लेकिन नारी का यह त्याग पारिवारिक जीवन में कितना बड़ा व्यवधान पैदा कर देता है और फलस्वरूप 'सौत' कहानी मं नारी–जीवन के त्या और करुणा का बड़ा ही मार्मिक चित्र मिलता है। इस काहनी को को एक सीमा तक आप यह मान सकते हैं, यद्यपि इसमें नारी की यथार्थ स्थिति का आभास स्पष्ट झलकता है। नारी की यथार्थता का आभस देते–देते प्रेमचन्द समाज की यथार्थता को भी विद्युत की ही भांति व्यक्त कर ही देते हैं। ''सौत की गोदावरी'' ईर्ष्या, निष्ठुरता और नैराश्य की हुई अबला हैं।'' उसके जवीन की सफल भव्यता और करुणा उसी के अन्तिम रूप से व्यक्ति किये गये भावों से प्रकट है, ''स्वामिन् संसार में आपके सिवा मेरा और कौन था। मैंने अपना सर्वसव आपके सुख की भेंट कर दिया। अब आपका सुख इसी में है कि मैं इस संसार से लोप हो जाऊँ।'' समाज की यथार्थता संबंधी

वाक्य एक ही है – अब अपने अनेक देशवासियों की तरह वे भी शारीरिक व्याधियों से गस्त रहने लगे। उसी प्रकार 'उपदेश' काहनी में भी कहानीकार की दृष्टि उन उपेक्षित क्षेत्रों में जाती है जिन्हें सहायता की सच्ची आवश्यकता है, और सहायता की जो आवश्यकता जन सुधारक ने महसूस नहं की है। इस कहानी में प्रेमचंद की उस व्यंग्यात्मक शेली के दशन होते है जिसका अवलम्ब लेकर प्रेमचन्द ने अपने समय के यथार्थ की सजीव तस्वीर अंकित की है सारी कहानी की सजीवता इसी व्यंग्यत्मकता के कारण है। कहानी का अंत एक गहरे रहस्य का उद्‌घाटन करता है। कहानी का नयाक – जो जनसवी होने का दावा करता है अब वे ही अनेक अनुभवों से मुजरने के बाद, जिस निष्कर्ष पर पहुंचता है, वह उसी के शब्दा सुनिये, ''मुझे अब अपनी स्वार्थाधंता स्पष्ट दीख पड़ती हैं मैं आप अपनी ही दृष्टि से गिर गया हूँ। मैं सारी जाति के उद्धार का बीड़ा उठये हुए हूँ, सारे भारतवर्ष के लिए प्राण देता फिरता हूँ, पर अपने घर की खबर ही नहीं।''

नवनिधि की कहानियों में अधिकांश ऐतिहासिक हैं। ये कहानियां हमारे अतीत के गौरव की परिचाक है। इनमें 'राजा हरदौल' और 'रानी सारंधा' को प्रेमचंद ने अपनी श्रेष्ठ कहानियों में गिना है। इस संग्रह की कुछ कहानियां ऐसी हैं, जा ऐतिहासिक नहीं हैं। 'अमावस्या की रात्रि' का वातावरण ऐतिहासिक है, लेकिन काहनी की आत्मा एक सामाजिक है। इसमें हमारे उस समाज का चित्र है, जो पैसे को मानवता से ऊपर मानते हैं प्रेमचन्द का आदर्शवादी मन अभी आश्श –सम्पन्न है, तभी तो इस कहानी के अन्त में लक्ष्मी के आराधक वैद्यजी के अन्तःकरण से निकली हुई यह बात मिलती है –''मुक्ति अत्यन्त शोक है, मैं सदैव तुम्हारा अपराधी हूँ। किन्तु तुमने मुझे शिक्षा दे दी। ईश्वर ने चाहा तो अब ऐसी भूल कदापि न होगी।'' किन्तु तुमने मुझे शिक्षा दे दी। ईश्वर ने चाहा तो अब ऐसी भूल कदापि न होगी।'' 'ममता' और 'पछतावा' भी हृदय परिवर्तन की कहानियां हैं। 'पछतावा' में अवश्य किसान जीवन की दुरवस्था और जमीदार के अत्याचार दिखाये गये हैं।

इसी समय की दो कहानियां महत्वपूर्ण है – एक है 'यही मेरी मातृभूमि है', दूसरी है – 'शिकारी राज कुमार'। दोनों यथार्थवादी रचनाएँ हैं, यानि दोनों में जीवन के वास्तविक स्वरूप को एकदम अगोपन करके उपस्थित किया गया है। दोनों कथाओं में एक और विशेष बात है। दोनों कथाएँ वास्तव को कल्पना के आवरण में ढंककर उपस्थित करती है। 'यही मेरी मातृभूमि है' में एक ऐसे प्रवासी भारतीय को कहानी है, जो पूरे साठ वर्ष बाद अपनी जन्मभूमि को लौटता है। वह अमेरिका चला गया था। वहां उसने व्यापार में बहुत अपनी जन्मभूमि को लौटता है। वह अमेरिका चला गया था। वहां उसने व्यापार में बहुत सा धन कमाया तथा धन के आनन्द भी खूब मनमाने लूटे। मातृभूमि का उत्कृष्ट प्रेम उसे सब कुछ त्याग करके भारत लौटने के लिये विवश करता है। वह यह इच्छा लेकर लौटता है कि मैं अपनी मातृभूमि का रजकण बनूँ। भारत लौटने पर उसे अत्यन्त दुःख हुआ, उसकी आंखें में आँसू भर आये, और वह खूब रोया क्योंकि यह मेरा देश न था वह देश न था, जिसके दर्शनों की इच्छा सदा मेरे हृदय में लहराया करती थी। यह तो कोई और देश था। यह अमेरिका या इंग्लैंड था, मगर प्यारा भारत नहीं था। अंग्रेजी सभ्यता के आवगमन ने देश में जो विकृतियां ला दी हैं, उन्हें देख–देखकर प्रवासी विक्षुब्ध हो उठता है। जगह–जगह दुराचार के अड्डे बने हुए थे यह सब तो उसका देश नहीं था। लेकिन कुछ स्त्री पुरुषों को भक्ति भावना से विह्वल गीत गाते हुए, गंगा–स्नान को जाते देखकर प्रवासी को जान पड़ा कि नहीं यही मेरी मातृभूमि है। कहानी में कलात्मकता का अभाव है, अत्यन्त भावुकता के कारण कहानी प्रभावपूर्ण नहीं हो पाई है, किन्तु कहानी एक सत्य को असंदिग्ध रूप में हमारे सामने रख देती है कि भारतीय संस्कृति विलुप्त हुई जा रही

है, उसका जो कुछ अंश बाकी है, गाँव के सरल और अत्यन्त विश्वासी लोगों में सीमित रह गया है।

'शिकारी राजकुमार' कहानी भी कल्पनात्मक शैली में लिखी गई है, किन्तु यथार्थ के संकेत इतने अधिक स्पष्ट हैं कि कथा का उद्देश्य असंदिग्ध रूप से प्रकट हो जाता है। सन्यासी राजकुमार शिकारी से तीन बातें कहता है। पहली है, ''ये सम्भवतः डाकू राह चलते यात्रियों का शिकार करते हैं। ये बड़े भयानक हिंसा पशु हैं। इनके अत्याचार से गांव के गांव बर्बाद हो गए और जितनों को इन्होंने मारा है, उनका हिसाब परमात्मा ही जानता हैं यदि आपको शिकार करना हो तो इनका शिकार कीजिए।'' दूसरी बात है, ''यहाँ न्याय सुवर्ण और रत्नादिकों के मोल बिकता है, यहाँ की न्यायप्रियता द्रव्य पर निर्भर है। धनवान दरिद्रों को पैरों तले कुचलते हैं, और उनकी गुहार कोई नहीं सुनता।''.....

तीसरी बात है – यह बड़े मन्दिर के महन्त हैं, साधु हैं। ..... ''सहस्त्रों सीधे सादे मनुष्य इन पर विश्वास करते हैं। इनको अपना देवता समझते हैं।'' .... और इनके यहां नर्तकियां के दल के दल चले जाते हैं तथ मद्यपान भी चलता है। इन दृश्यों की दिखाकर संन्यासी उपदेश देता है : कि तुम्हें प्रजापालक बनना चाहिए, प्रजा को सुख पहुँचाना चाहिए।

ये दोनों कहानियां कला की दृष्टि से भले ही बहुत अच्छी न हों लेकिन इनमें से प्रेमचन्द का मन झांकता हुआ मिलता हैं, जो अन्याय के प्रतिकार में मानवीयतावादी ह्यूमेनिस्टक दृष्टिकोण लेकर चलता है। मृत्यु के पीछे कहानी भी ऐसी है जिसमें प्रेमचन्द ने कहानी की कलात्मकता की रक्षा भले ही पूरी–पूरी न की हो, लेकिन जिसमें उनके मन की झांकी अत्यन्त स्पष्ट मिल जायेगी। एक सीमा तक चाहें तो इस कहानी को प्रेमचंद की आत्मकथा भी कह सकते है। हंसराज रहबर ने इसी रूप में उसे अपनी पुस्तक में उद्धृत किया है। कहानी एक वकालत पास आदमी की है, जो वकालत–पेशा अख्तियार करके बड़ा आदमी होने के बजाय पत्र का सम्पादक बन जाता है और उसके द्वारा सत्य और न्याय की वकालत में अपना जीवन दे डालता है। इस कहानी के कुछ अंश महत्वपूर्ण हैं। वकालत के पेशे के बारे में ईश्वरचन्द्र कहता है, ''छल और धूर्तता इस पेशें का मूल तत्व है। इसके बिना किसी तरह निर्वाह नहीं। अगर कोई महाशय जातीय आन्दोलन में शरीक भी होते हैं, तो स्वार्थसिद्धि के लिये अपना ढोल पीटने के लिए।'' अर्थ–ग्रस्थ सामाजिक व्यवस्था के दोषों को प्रेमचन्द बहुत पहले पहचान चुके थे और समाज की दुरवस्था और अर्थ की पूंजीवादी व्यवस्था के कार्यकारण संबंध को जान चुके थे। तभी आगे चलकर कहा गया है कि देश में धन और श्रम का संग्राम छिड़ा हुआ था, ईश्वरचन्द्र की सदय प्रकृति ने उन्हें श्रम का सपक्षी बना दिया था। धनवदियों का खण्डन और प्रतिवाद करते हुए उनके खून में गरमी आ जाती थी, शब्दों से चिनगारियां निकलने लगती थीं और अपने कर्त्तव्यपालन में अडिग ईश्वरचद्र की मृत्यु के बाद उनके स्मारक बनने लगे। कहीं छात्रवृत्तियां दी गई, कहीं उनके चित्र बनवाये गए पर सबसे अधिक महत्वशील वह मूर्ति थी जो श्रमजीवियों की ओर से प्रतिष्ठित हुई थी। इस प्रकार प्रेमचन्द की कहानियों का प्रारम्भ काल भी कोरमकोर आदर्शवादी नहीं था। यद्यपि इस समय प्रेमचन्द की मानसिक बनावट में आदर्शवादिता को बड़ा अंश मिलता है, जो कहीं मध्यवर्गीय समझौतावादिता के रूप में प्रकट हुआ है, और कहीं भारतीय नीतिवादिता की प्रवृत्ति के रूप में (कुछ कहानियों का अन्त मोटे टाइप में अलग से छपा रहता है, जैसे : यही ईश्वरी न्याय है, यह सच्चाई का उपहार है, यही महातीर्थ है आदि।) और कहीं सुधारवादी युग के प्रभाव में सुधारवादिता के रूप में, लेकिन प्रेमचन्द की आदर्शवादिता कल्पना और रोमान्स से आग्रस्त नहीं है। उसमें यथार्थ के भतर गहरे पैठकर

उसके आन्तरिक स्वरूप को पहचानने का तीव्र आग्रह सर्वत्र मिलता है। इस यथार्थ और आदर्श के मेल को प्रेमचन्द सदा साथ लेकर चले हैं, इसी मेल को वे आदर्शोन्मुख यथार्थवाद कहते हैं। पश्चिमी आलोचना की स्वर्ण–तुला पर साहित्य को तौलने वाले इस प्रकार के मिल को न मानें लेकिन प्रेमचन्द साहित्य में यह सर्वत्र मिलता है। प्रेमचन्द की प्रारम्भिक कृतियां वर्णनात्मक शैली का अवलम्ब लेकर चली हैं। प्रेमचन्द के सामने उर्दू के उन लेखकां का आदर्श था, जिन्होंने विस्तार को कथा की आत्मा मानकर 'आजाद कथा' जैसी रचनाओं की सृष्टि की थी। इसीलिये प्रेमचन्द ने भी इसी शैली को अपनाया। स्पष्ट ही इसके कारण कथा की प्रभावकता नष्ट हो जाती है, जो सांकेतिक शैली द्वारा संभव है, किन्तु यह विस्तार कहानी के कथारस को अक्षुण्ण रखता है। प्रेमचन्द की प्रारम्भिक कृतियों में वर्णनात्मकता के द्वारा कथा–रस की रक्षा की गई है। ऐसी कहानियों में 'बड़े घर की बेटी', 'पंच परमेश्वर' और ऐतिहासिक कहानियों का उल्लेख किया जा सकता है। किन्तु कुछ कहानियां ऐसी भी हैं, जैसे ''यह मेरी मातृभूमि है, और ''शिकारी राजकुमार '' जो भावुकता के खण्ड चित्रों से अधिक कुछ भी नहीं हैं, लेकिन इन कहानियों का महत्व इस कारण है कि ये प्रेमचन्द के मन की झांकी प्राप्त करने में मदद देती है। प्रारम्भिक काल को लगभग सन् 1920 तक माना जा सकता है।

इसके बाद प्रेमचन्द की कहानियों का वह युग प्रारम्भ होता हैं, जिसमें प्रेमचन्द की दृष्टि में विस्तृत आ गई थी, और महज भावुकता ही नहीं, बुद्धिवाद का आग्रह भी उनकी कृति में मिलने लगा था। इस समय की कहानियों को यदि विषय की दृष्टि से देखें, तो निम्नलिखित विषयों की प्रधानता मिलेगी। नारी जीवन विशेषकर विधवा समस्या, लेकिन सामान्यतः परिवार और समाज में हिन्दु नारी का स्थान, साथ ही नारी के त्याग और बलिदान के भव्य और करुण चित्र, हिन्दु समाज में अछूतों की दयनीय स्थिति और इस माध्यम से एक और सवर्णो के अत्याचार और दूरी ओर धर्मावलम्बियों के पाखण्डपूर्ण आचार का पर्दाफाश किया गया है, विवाह और प्रकम–समस्या : हिन्दू विवाह पद्धति के साथ जुड़े हुए दहेज के अभिशाप हिन्दू परिवार में नर–नारी के सम्बन्ध और प्रेम के उस शाश्वत स्वरूप का दिग्दर्शन जो जीवन को एक अनोखी चमक प्रदान करता है, और जिसके बिना नर–नारी का मिलन महज एक विलास है, इससे अधिक कुछ भी नहीं, धार्मिक पाखंड, जिसके साथ अनिवार्य सहचर के रूप में साम्प्रदायिक वैमनस्य जुड़ा हुआ है, ग्राम–जीवन के चित्र जो दो प्रकार के हैं, एक वे जो गांव के जीवन के आत्मीय और आत्मिक विभूति को प्रकट करते हैं। दूसरे वे, जिनमें गांव की बदलती हुई आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था के कारण ग्रामीणों के जीवन में घिर आये विक्षेप–व्यवधान बड़ी सजीवता और मार्मिकता से अंकित किये गये हैं, मध्यम वर्ग के अनेक चित्र, नई आर्थिक व्यवस्था के साथ आ गये विभिन्न वर्गो की झांकियां, राजनैतिक समस्या के विभिन्न पहलू, जिनमें अंग्रेज अफसरों के दम्भ और भारतीयों की निपट गुलामी के दृश्य मिलेंगे, जो अपने भविष्य को न्यौछावर करके अपने देश और देशवासियों की हित–चिन्ता में संलग्न रहते हैं ऐसे समाज सेवियों के पारिवारिक चित्रों के द्वारा उनकी महानता व्यति की गई है। वे नेता मिलेंगे जो समाज–सेवा के आवरण में अपने स्वार्थो को ढांककर चलते हैं।

इस काल की कहानियों पर और आन्तरिक दृष्टि डालने के पहले प्रेमचन्द के वे विचार जान लेना चाहिए, जो उन्होंने अपनी कहानी–संग्रहों की भूमिका में दिये हैं। 'प्रेमद्वादशी' की भूमिका में वे कहते हैं, ''ऐसी कहानी जिसमें जीवन के किसी अंग पर प्रकाश न पड़ता हो, जो सामाजिक रूढ़ियों की तीव्र आलोचना न करती हो, जो मनुष्य में सद्भवों को दृढ़ न करें, या जो मनुष्य में कुतूहल का भाव जागृत न करे, कहानी नहीं है।'' प्रेमचन्द 'सर्वश्रेष्ठ कहानियों के अपने प्राक्कथन में स्वयं स्वीकार करते हैं कि यथार्थ का आवरण आवश्यक है। 'प्रेम पीयूष'

संग्रह की भूमिका में प्रेमचन्द के वाक्य हैं, ''वर्तमान आख्यायिका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और जीवन के यथार्थ स्वाभाविक चित्रण को अपना ध्येय समझती है।''

प्रेमचन्द ने अस्सी प्रतिशत उन लोगों की बात अपनी कहानियों में चित्रित की है, जो गांवों में बसते हैं, और जिनका जीवन किसी प्रकार की वर्जजनाओं से आक्रान्त नहीं है, बल्कि मुक्त प्रवाह की भांति है। इन्हीं अस्सी प्रतिशत लोगों के दुख–सुख समस्याओं को प्रेमचन्द ने अपनी कहानियों का विषय बनाया है। 'कहानियों के माध्यम से वे सामाजिक रूढ़ियों की तीव्र आलोचना करते हैं, उनकी कहानी का प्रतिपाद्य या तो सामाजिक विवेक होता है, या कोई दार्शनिक तत्व। लेकिन अंततः वे मनुष्य में सद्भावों को दृढ़ करना चाहते हैं कहानी की सफलता के लिये वे कुतूहल जागृत करना आवश्यक समझते हैं। कहनी की कला प्रेमचन्द के अनुसार ऐसी है जो कल्पना के प्रयोग से यथार्थ का भ्रम उत्पन्न करती है और अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिये यथार्थ का संकलित और संचयित रूप उपस्थित करती है।

इस विवेचन से स्पष्ट हो जायागा कि प्रेमचन्द अपनी कहानी–कला के माध्यम से अपने युग का यथार्थ, समुचित विवेचना के साथ इस प्रकार उपस्थित करते हैं कि इस बौद्धिक विवचेन द्वारा सामाजिक रूढ़ियों की तीव्र आलोचना हो सकें, और यह आलोचना केवल यथार्थवादी न होकर किन्हीं आदर्श संकेतों से युक्त हों जिससे मनुष्य में सद्भाव दृढ़ हो सके। इस स्पष्टीकरण के आधार पर हमें प्रेमचन्द संबंधी उस कथन को समझ लेना चाहिए, जिसमें कहा गया है कि प्रेमचन्द आदर्शवादी हैं। प्रेमचन्द साहित्य को आदर्श और यथार्थ की पारिभाषिक शब्दावली के द्वारा समझना और समझाना संभव नहीं है। प्रेमचन्द एक साथ आदर्श और यथार्थ को लेकर चलते हैं। वे विषय विवेचन में एकदम यथार्थवादी हैं लेकिन साहित्य की सोद्देश्यता में विश्वास करेन के कारण वे एकांत यथार्थवादी नहीं हो पाते। वे यथार्थ को किसी कुशल सर्जन की भांति चीर–फाड़कर रखने के बाद, निदान के लिये औषधि–निर्देश करते चलते हैं। इसलिये प्रेमचन्द को आदर्शवादी कहने वालों को भ्रम की गुंजाइश बनी रहती है। अन्यथा प्रेमचन्द कहीं भी न हो एकांत रूप से आदर्शवादी हैं और न आज के अर्थ में यथार्थवादी। प्रेमचन्द की इस समय की कहानियों में यथार्थ के प्रति झुकाव अधिक मिलता है। इस समय तक प्रेमचन्द की दृष्टि में विस्तार और विचारों में परिपक्वता आ चुकी थी और यथार्थ को देखने की वह दृष्टि उन्हें प्राप्त हो चुकी थी, जो आगे चलकर ह्यूमेनिज्म के रूप में व्यक्त हुई हैं। अन्याय, अत्याचार, शोषण और ऐसे ही अन्य ''आमनवीय'' तत्वों के प्रति अब उनका मन अधिक सजग हो गया था, और वे यथार्थ की आदर्श में परिणति दिखाने का मोह छोड़ चुके थे। लेकिन मनोरचना अभी उतनी उग्र और क्रान्त्योन्मुख नहीं बन पाई थी जितनी आगे चलकर 'मंगलसूत्र' के थोड़े से पृष्ठों में झांकती है इस प्रकार इस कला की कहानियों में यथार्थवादी के तीन रूप मिलते हैं : आदर्शोन्मुख यथार्थवाद, जैसे 'ममता', 'मुक्तिधन' आदि कहानियों में है, यथार्थवाद, जो इस समय की अधिकांश कहानियों में मिलता है, लेकिन जिनमें कहानीकार का मन किसी प्रकार के राग–द्वेष के अतिरेक को प्रश्रय नहीं देता, और वह घोर यथार्थ, जो एक हृदय–विदारक चीख की तरह प्राणों के मर्म तक पहुंच जाता है, जिसके साथ मानो प्रेमचन्द का ह्यूमनिस्टिक मन जुड़ा हुआ हैं। ऐसी कहानियों में 'सद्गति', 'पूस की रात', 'कफन' आदि है।

इस समय की कहानियों में कुछ कहानियां ऐसी हैं, जिनमें प्रेमचन्द की शैली के विविध रूप मिलते हैं। मोटेराम काल्पनिक पात्र किसी समय प्रेमचन्द के लिये मुसीबत बन गया था, क्योंकि किसी व्यक्ति से उसकी अनुहार मिलती थी और इन सज्जन ने प्रेमचन्द पर मानहानि का दावा भी किया था। इस पात्र के द्वारा प्रेमचन्द ने पोंगापंथी बाह्य तत्वों की ऐसी शैली में

खिल्ली उड़ाई है जो शैली डिफेन्स के ''पिकनिक पेपर्स'' में मिलती है, या स्पष्ट की ''गुलिवर्स ट्रेवल्स'' में मोटेराम शास्त्री के चरित्र की चरन बाकी सत्याग्रह' कहानी में है। यह कहानी न केवल ब्राह्मणत्व पर बल्कि पाखंडी नेतागिरी की तिलमिलाती चोट है। कुछ अन्य कहानियां स्केच के ढंग की हैं, साहब जिसमें बड़े भाई का बड़ा विनोदपूर्ण चित्रण है, या 'लाटरी' जिसमें लाटरी मिलने की प्रत्याशा किन रूपों में प्रकट होती हैयह बड़ी ही सजीवता से चित्रित किया गया है। तीसरी प्रकार बड़ी कहानियों में 'दो बैलों की कथा' है। यह कहानी पशु मनोविज्ञान का वही स्वाभाविक चित्र उपस्थित करती है।

प्रेमचन्द का यथार्थवादी रुख उनकी उस प्रसिद्ध कहानी 'शतरंज के खिलाड़ी' से नजर आ जाता है, जो वाजिद अली शाह के जमाने के पतनोन्मुख समाज की करुण कथा कहती है इस कहानी में प्रेमचन्द अत्यन्त कलात्मक ढंग से सामन्ती खण्डहारों में तन की कगार पर खड़े हुए जन जीवन की दयनीय तस्वीर देते हैं।

प्रेमचन्द की कहानियों का अन्तिम विकास उनकी राजनैतिक आन्दोलन सम्बन्धी कहानियों में मिलता हे। ये कहानियां सन् 1930–32 के भारतीय आन्दोलन की विभिन्न तस्वीरें प्रस्तुत करती हैं। इन कहानियों में जनता के अदम्य उत्साह के चित्र मिलेंगे। बायकाट और पिकेटिंग के विभिन्न दृश्यो के माध्यम से जनता के जीवन को आवृत्त करने वाली देशभक्ति की लहर के अनेक प्रसंग मिलेंगे, देश के नाम पर अपने भविष्य के सपनों को साकार करने और करने वाले नवयुवकों के बलिदान की कथाएं मिलेंगी और समझदार लोगों के विचार कथोपकथनों द्वारा स्वराज्य की कल्पनाएँ मिलेंगी। इन कहानियों को यथार्थवादी कहानियों की श्रेणी में मानना चाहिए, यद्यपि यह यथार्थवाद 'कफन', 'पूस की रात', 'सद्–वृत्ति के यथार्थ से भिन्न है।

प्रेमचन्द की कहानियों का संक्षिप्त परिचय उनके उपन्यासों के अध्ययन का पूरक हैं, उपन्यासों के अध्ययन में उनके मन की विकास–प्रथा मिलती हैं, कहानियों का संक्षिप्त भाव उस मनोरचना को और अधिक स्पष्ट रूप में उपस्थित करता है। जिनमें सामाजिक असमानता, वर्ग–वैष्मयता, आर्थिक शोषणआदि का चित्र ही नहीं मिलतावरन! मनवतावाद एवं प्रगतिशील जागरूप चेतना का स्वर भी झंकृत होता है। कथाशिल्प के नये प्रयोग भी उनकी कहानियों में मिलते हैं। कुल मिलाकर प्रेमचंद को आधुनिक कहानी का प्रमुख पुरस्कारकर्ता कहा जा सकता है।

गबन की व्याख्या–

---

1. जब तक गले में जुआ नहीं पड़ा है, तभी तक यह कुलेंले हैं। निकम्मों को राह पर लाने का इससे बढ़कर और कोई उपाय नहीं।'

संदर्भ– प्रस्तुत गद्य प्रेमचंद द्वारा रचित उपन्यास गबन से लिया गया है।

प्रसंग– प्रस्तुत उपन्यास का नायक रमानाथ जो कि युवा होने के साथ दायित्वों से दूर भागता है। उसके व्यवहार से उसके माता–पिता दोनों बहुत दुखी हैं। ऐसे में रमानाथ की माँ उन्हें अपने पुत्र को सही रास्ते पर लाने के लिए विवाह करने की सलाह देती है। प्रस्तुत पंक्तियाँ उस समय के संवाद को व्यक्त करती हैं।

व्याख्या– जागेश्वरी और दयानाथ का परिवार एक मध्यम वर्गीय परिवार है ऐसे में युवा पुत्र पिता का दाया हाथ कहा जाता है किन्तु रमानाथ जो कि कथा का नायक है किन्तु अपने दायित्वों के प्रति उदासीन है। सारा समय सैर करना, शतरंज खेलना, मित्रों से कपड़े और बाइक उधार लेकर लोगों में रोब जमाना उसका शौक है । ऐसे में एक पिता की चिंता को देखकर माँ यह सुझाव देती है कि उसका विवाह कर देने से संभव है उसे जिम्मेदारी का एहसास हो जाए। विवाह होने से उसे पैसे कमाने की फिक्र होगी, पत्नी की जिम्मेदारी उसे जिन्दगी के प्रति गंभीर बनाएगी। वह सैर सपाटा करना , दिन भर कुलेंले करना सब भूल जाएगा। ऐसे निकम्मों को राह पर लाने का एक यही रास्ता है।

विशेष– प्रस्तुत संदर्भ में लेखक ने एक युवा किन्तु गैर जिम्मेदार पुत्र के पिता की पीडा एवं विवाह को जिम्मेदार होने का मूल मंत्र बताने का प्रयास किया है।

2. लज्जा ने सदैव वीरों को परास्त किया है । जो काल से नहीं डरते, वे भी लज्जा के सामने खड़े होने की हिम्म्त नहीं करते। आग में कूछ जाना, तलवार के सामने खड़ा हो जाना, उसकी अपेक्षा कहीं सहज है। लाज की रक्षा ही के लिए बड़े–बड़े राज्य मिट गये हैं, रक्त की नदियाँ बह गई हैं, प्राणों की होली खेल डाली गई हैं।

संदर्भ– प्रस्तुत गद्य प्रेमचंद द्वारा रचित उपन्यास गबन से लिया गया है।

प्रसंग– प्रस्तुत गद्य में उस समय की घटना का वर्णन लेखक ने किया है जब रमानाथ ने देशभक्त के लिए झूठी गवाही दी और जालपा ने उसे धिक्कारा। तब वह जज साहब के सामने जाकर अपना जुर्म कुबूल कर पुलिस का भंडाफोड़ कर देना चाहता है ओर इस इरादे से वहाँ जाता भी है किन्तु अपने किए गुनाह की ग्लानि उसे जज साहब के सामने जाने से रोकती है। वह लज्जावश जज साहब के सामने जाने का साहस नहीं जा पाता। लेखक ने इसी प्रसंग में लज्जा को वर्णित किया है।

भावार्थ– लज्जा इंसान का आवरण है। इसी लज्जा की रक्षा हेतु के लिए कई देश आपस में भिड़ गए, अपने लज्जा की रक्षा हेतु कई वीरांगनाओं ने उत्सर्ग किया। यही लज्जा आज रमानाथ के हिस्से आई है अपनी झूठी गवाही में कई लोगों को फसाने के बाद जब उसे अपनी गलती का एहसास होता है तो वह जज के सामने अपने गुनाह को कुबूल करना चाहता है , वह निश्चय कर लेता है कि वह जज साहब को सब साफ–साफ बता देगा कि वह केसे पुलिस के चंगुल में फंसा और उनके कहने पर झूठी गवाही देने पर विवश हुआ। किन्तु इतना सब सोचने के बाद भी जब वह जज साहब की कोठी पर पहुँचता है तो लज्जा उसके आड़े आ जाती है । उसे लगता है कि कैसे वह जज साहब के सामने कहेगा कि उसने यह सब मजबूरी में किया। लेखक कहते हैं लज्जा ने सदा वीरों को परास्त किया है इतिहास गवाह है कि लाज के कारण ही कई युद्ध हुए, खून की नदियाँ बही,जानों से होली खेली गई। इसी लज्जा ने आज रमानाथ को भी जज साहब के सामने जाने से रोक दिया। उसे जज साहब के सामने जाने से बेहतर जेल जाना लगा।

विशेष– प्रस्तुत गद्य में लेखक ने लज्जा के महत्व को प्रतिपादित किया है । व्यक्ति चाहे कितनी ही गलतियाँ क्यों न कर ले किन्तु लाज के सामने एक दिन वह परास्त हो ही जाता है।

3. रूदन में कितना उल्लास, कितन शांति, कितना बल है। जो कभी एकांत में बैठकर किसी की स्मृति, किसी के वियोग में सिसक-सिसककर और बिलख-बिलखकर नहीं रोया, वह जीवन के ऐसे सुख से वंचित है जिस पर सैंकड़ों हँसियां न्यौछावर है। हँसी के बाद मन खिन्न हो जाता है, आत्मा क्षुब्ध हो जाती है। रूदन के पश्चातएक नवीन स्फूर्ति, एक नवीन जीवन, एक नवीन उत्साह का अनुभव होता है।

संदर्भ- प्रस्तुत गद्य प्रेमचंद द्वारा रचित उपन्यास गबन से लिया गया है।

प्रसंग- हँसी और रूदन दोनों ही जीवन की महत्वपूर्ण अवस्थाएं हैं, किन्तु प्रायः हम रूदन को तिरस्कृत कर हँसी को महत्व देते हैं। प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने रूदन के महत्व को दर्शाते हुए कहा है कि हँसी के बाद जहाँ मन खिन्न हो जाता है वही रूदन के बाद मन का बोझ उतर सा जाता है। और एक स्फूर्ति मन में आती है।

भावार्थ- प्रेमचंद का संपूर्ण लेखन आदर्श और यथार्थवाद से ओत-प्रोत रहा है। प्रस्तुत पक्तियों के माध्यम से लेखक ने जीवन के दार्शनिक भाव को उजागर किया है। भौतिक संसार में जीने वाले लोग हम सदा जीवन में हँसते रहना चाहते हैं, और रूदन से दूर भागते हैं। लेखक ने यहाँ रूदन के महत्व को प्रतिपादित करते हुए कहा है कि रूदन में स्फूर्ति है इसके बाद मानव में उल्लास हो आता है, मन को एक प्रकार की शांति मिलती है। और इस अनुभव को केवल वही व्यक्ति समझ सकता है जो कभी जीवन में एकांत में बैठकर रोया हो तभी उसे यह तृप्ति का एहसास हो सकता है अन्यथा व्यक्ति जीवन क`बड़े सुख से वंचित रहा है। क्योंकि कहावत है-'हांसी का घर खासी, खांसी का घर रोग' अधिक हँसने से दिल भारी हो जाता है आँखों से आँसू आने लगते हैं वहीं रूदन के बाद लगता है मन पर पड़ा कोहरे का बोझ उतर गया है। और जीवन को एक नई स्फूर्ति एक नया आनंद मिला है।

विशेष- लेखक ने जीवन के यथार्थ को उजागर कर सुख और दुख दोनों के ही महत्व को प्रतिपादित किया है।

4. यह विशुद्ध उल्लास न था, इसमें एक शंका का समावेश था। यह उस बालक का आनंद न था, जिसने माता से पैसे मांगकर मिठाई नी हो बल्कि उस बालक का जिसने पैसे चुराकर ली हो। उसे मिठाइयां तो मिली परन्तु दिल कांपता रहता ळै कि कहीं घर चलने पर मार न पड़ने लगे।

संदर्भ- प्रस्तुत गद्य प्रेमचंद द्वारा रचित उपन्यास गबन से लिया गया है।

प्रसंग- प्रेमचंद का साहित्य उनके व्यक्तित्व की ही तरह आदर्श का अनुगमन करता है। उनके अनुसार आभूषण पर अनावश्यक व्यय करना भारत जैसे देश के लिए सार्थक नहीं है। जहाँ असंख्य लोग दो जून रोटी और कई हाथ रोजगार को तरसते हों वहाँ पैसों की आवश्यकता रोजगार खड़े करने में है। किन्तु कथा की नायिका का जेवर के प्रति मोह रमानाथ को विवश कर देता है और वह अपनी पत्नी को खुश करने हेतु उधार जेवर लेकर आता है किन्तु आमदनी उतनी न होने से वह मन में भयभीत भी है । एक तरफ पत्नी को खुश देखने का मोह दूसरी ओर उधार गहने खरीदने का भय, जिसकी तुलना लेखक ने एक ऐसे बच्चे से की है ।

भावार्थ– रमानाथ जिसके गले माता–पिता ने विवाह का जुँआ बांध दिया इसी जुएं के कारण आज रमानाथ अपनी पत्नी जालपा जो विवाह में चंद्रहार न आने पर कुपित है को खुश करने हेतु अपनी हैसियत से ज्यादा पैसे खर्च कर उसे गंगू सर्राफ से एक हार और शीशफूल कर्ज पर लेकर आता है। किन्तु पत्नी को यह ताहफा देते समय उसके मन में वह खुशी नहीं है जो होना चाहिए था उसमें कहीं भय मिला था। उसकी स्थिति ठीक ऐसी थी जैसे एक बालक जो चोरी से पैसे ले जाकर मिठाई खाता है । ऐसे में उसे मिठाई मीठी तो लगती है किन्तु उसकी मिठास का सुख वह पूरी तरह नहीं उठा पाता। इसमें वह आनंद नहीं जो माँ से पैसे लेकर वह मिठाई खाता। संभवतः माँ के देखने पर पिटाई का भय इसमें शामिल है। वह इस आनंद को खुलकर नहीं जी पाता उसी प्रकार रमानाथ के सामने एक और पत्नी के जेवर पाने पर खुशी से झूमता चेहरा दिखाई देता है दूसरे पल उधार लिए गहनों का कर्ज न चुका पाने से होने वाली रूसवाई का भय उसे खुलकर उत्साहित नहीं होने देता।

विशेष– प्रेमचंद ने ग्लानि के भाव को उजागर किया है व्यक्ति की मानवीयता है कि यदि वह कोई गलती करता है तो वह संसार से चाहे भाग ले किन्तु स्वयं से नहीं भाग सकता।

5. वह लालसा जो आज सात वर्ष हुए उसके हृदय में अंकुरित हुई थी, जो इस समय पुष्प और पल्लव से लदी खड़ी थी, उस पर वज्राघात हो गया। आज ही के दिन पर तो उसकी समस्त आशाएं अवलंबित थीं। दुर्देव ने आज वह अवलंब भी छीन लिया।

संदर्भ– प्रस्तुत गद्य प्रेमचंद द्वारा रचित उपन्यास गबन से लिया गया है।
प्रसंग– प्रस्तुत गद्य में लेखक ने जालपा के माध्यम से नारी के मनोविज्ञान का सुंदर चित्रण किया है। नारी मन कोमल होता है बचपन से जो झवि उसके भीतर घर कर लेती है उसकी आकृति लंबे समय तक उसके मन–मस्तिष्क में समा जाती है। जालपा का बचपन भी गहनों के बीच व्यतीत हुआ है अतः उनके प्रति उसका मोह होना स्वाभाविक है। वह गहनों को ही अपने वैवाहिक जीवन की आत्मप्रतिष्ठा का प्रश्न बना लेती है। और विवाह में चंद्रहार न मिलने पर उसे जीवन ही व्यर्थ लगने लगता है विवाह की सारी परंपराएं उसे बेमानी लगने लगती है।
भावार्थ– जालपा जिसका बचपन खिलौने के बजाय गहनों के साथ खेलते बीता, बचपन में दादी उसे खिलौने के बजाय गहने उपहार में देती। माँ के पास चंद्रहार देखकर उसने माँ से जब वैसा ही चंद्रहार लेने की जिद की तो माँ ने उसे यह कहकर बहला दिया कि यह जेवर विवाह पर ससुराल से आता है बस फिर क्या था जालपा ने तभी से उस दिन की बाट जोहना आरंभ कर दिया। किन्तु विवाह में जब गहनों की पेटी आई तो जालपा की नजर बेसब्री से चंद्रहार को खोज रही थी जब उसे पता चला कि गहनों में चंद्रहार नहीं आया तो मानो विवाह का सारा उत्साह जाता रहा।एसकी दशा उस हरियाए पौधे की तरह हो गई जिस पर अचानक बड़ा बोझ ड़ाल दिया हो। मानो उसके सारे सपने ध्वस्त हो गए। उसे लगता है कि अभी वह सारे गहने उठाकर बाहर फैंक दे। किन्तु लोक लाज के भय से वह ऐसा नहीं कर पाती। और अंदर जाकर शिव की प्रतिमा को उठाकर फैंक देती है। उसकी आशा और सपनों की तरह मूर्ति भी टूटकर चूर–चूर हो जाती है। बस वह तभी से यह निर्णय कर लेती है कि आज के बाद वह कोई गहने धारण नहीं करेगी। मन को समझाते हुए कहती है जो सुंदर न होउसे गहनों की आवश्यकता है मैं तो वैसे ही काफी सुंदर हूँ मुझे गहनों की क्या जरूरत.... ?
विशेष– प्रेमचंद ने नारी मनोविज्ञान का सुंदर चित्रण किया है। नारी की आभूषण प्रियता और लालसा पूरी न होने पर उसका कोप स्वयं अपने पर उतारना नारी का सहज स्वभाव रहा है।

प्रेमचंद साहित्य और फिल्मांकन

Øê¡ ìæð âæçãU'Ø ¥æñÚU çâÙð×æ Îæð ¥Ü»-¥Ü» ·¤Üæ M¤Â ãñ´U ¥æñÚU ©UÙ×ð´ ÂØæü# ¥'ÌÚU Öè ãñU, §Uâ Õæì âð §´U·¤æÚU ÙãUè´ ç·¤Øæ Áæ â·¤Ìæ ×»ÚU §UÙ×ð´ §UÌÙæ Öè ¥'ÌÚU ÙãUè ãñ ç·¤ âæçãUç'Ø·¤ ·ë¤çÌØæð´ ·¤æ çÈ¤Ë×æ´·¤Ù Ù ç·¤Øæ Áæ â·ð¤Ð Âý'Øð·¤ çÈ¤Ë× ·ð¤ çÜ° ÂÅU·¤Ílæ ·¤è ¥æßàØ·¤Ìæ ãUæðÎè ãñU, ¥ÌÑ ¿éçÙ'Îæ ¥æñÚU Áèß'Ì ÂÅU·¤Ílæ¥æð´ ·¤æ ØçÎ çÈ¤Ë×æ´·¤Ù ç·¤° ÁæÙð ÂÚU çß¿æÚU ç·¤Øæ ÁæØ Ìæð ×ñ´ â×ÛæÌè ã¡êU ç·¤ ØãU ·¤æØü ¥çŠæ·¤ ×éçà·¤Ü ÙãUè´ ãñUÐ çÈ¤Ë× §Uç]ãUlæâ ×ð´ §Uâ·ð¤ ·¤§üU ©UÎæãUÚU‡æ ×æñÁêÎ ãñU´, ¿æãðU ßãU ÖæÚUÌèØ çâÙð×æ ·ð¤ ÿæð˜æ ×ð´ ãUlæð´ Øæ çßE-çâÙð×æ ·ð¤ ÿæð˜æ ×ð´Ð ¥ç¹Ü ÖæÚUÌèØ SÌÚU ÂÚU ÖæÚUÌ ×ð´ âæçãUç'Ø·¤-ë¤çÌØæð´ ÂÚU ¥æŠæçÚUÌ çÈ¤Ë×ð´ Õæ´,Üæ Öæáæ ×ð´ â'ØÁèÌ ÚUlæØ ß «¤ç'ß·¤ ƒæÅU·¤ Áñâð çÙÎð¡üàæ·¤æð´ Ùð ÕÙæ§ZUÐ §Uâ Âý·¤æÚU ¥âæŠæçÚU‡æ Õæ´,Üæ çÈ¤Ë×ð´ Îð·¤ÚU âæçãUç'Ø·¤ ·ë¤çÌØæð´ ·¤æð Ù ·ð¤ßÜ ÖæÚUÌ ×ð´ ßÚUUÙ÷ çßE SÌÚU ÂÚU â×æÙÙèØ SÍæÙ çÎÜæØæÐ

©UÂ‹Øæâ °ß´ ·¤Ílæ â×ýæÅU Âý×¿Î, ×æðãUÙ ÖßÙæÙè ·ð¤ çÙ×˜æ´‡æ ÂÚU çÈ¤Ë× ©Ulæð» Ù»ÚUè ×é´Õ§üU Âãé¡U¿ðÐ ¥æ× â×æÁ Ùð Öè Âý×¿‹Î ·ð¤ §Uâ ¥æ»×Ù ·¤æð â×æÙ ¥æñÚU ¥æàæ ·¤è ÎëçCU âð Îð¹æÐ ©UÙ·¤è ¹éÜð çÎÜ âð Âýàæ'âæ ·¤è ÌÍæ ©UÙ·ð¤ ¥æ»×Ù ·¤æð çÈ¤Ë×è Îéç]ÙØæ ·ð¤ çÜ° àæéÖ Üÿæ‡æ ×æÙæÐ âæÍ ãUè Âý×¿Î Áè Öè ¥Ù'Ì â'ÖæßÙæ¥æð´ ·ð¤ Âéü ÌñØæÚU ·¤ÚU ×é´Õ§üU Âã¡éU¿ðÐ Îðàæ ·ð¤ ãUæÜæÌ ©UÙâð çÀUÂð Ù ÍðÐ ßð ÁæÙÌð Íð ç·¤ Îðàæ §Uâ â×Ø ¥æçÍü·¤ Ì'»ãUæÜè ·ð¤ Îæñ]ÚU âð »éÁÚU ÚUãUæ ãñU °ðâð ×ð´ ¥æ× ¥æÎ×è ·ð¤ çÜ° ¥ÂÙè ÁM¤ÚUÙÌæð´ ·¤æð ÂêÚUæ ·¤ÚUUÙæ ÕÇ‚æ Îéc·¤ÚU ÍæÐ °ðâð ×ð´ ©UÙâð âæçãU'Ø ·¤æð ¹ÚUè]·¤ÚU ÂÉ¸UÙð ·¤è ©U ×èÎ ÚU¹Ùæ ÃØÍü ãñU Ìæð €Øæð´ Ù ßð çÈ¤Ë×æð´ ·ð¤ ×æŠØ× âð ÕðãUÙÌÚU âæçãU'Ø ÁÙÌæ ·¤æð ©UÂÜŽŠæ ·¤ÚUæ°¡, ØlçÂ ×æØæÙ»ÚUè ·ð¤ È¤Üð ÁæÜ âð ßð ÖÜè Öæ¡çÌ ÂçÚUç¿Ì ÍðÐ

ν~xy ×ð´ ©UÙ·ð¤ ÂýÍ× ©UÂ‹Øæâ ·¤æð çÈ¤Ë× ·ð¤ çÜ° ¿éÙæ »ØæÐ â'ÖßÌÑ ©Uâ·¤æ Ùæ× Òç×ÜÓ Íæ Áæð ¥Á'Ìæ çâÙðÅUæðÙ ×´éÕ§üU ·ð¤ ÕñÙÚU ÌÜð ÕÙè, çÁâ×ð´ ç×Ü-×æçÜ·¤ mUæÚUæ ×ÁÎêÚUæð´ ÂÚU ç·¤° »° ¥'Øæ¿æÚUæð´ ·¤æð Îàæ×üØæ »Øæ ÍæÐ ¥æÁ ·ð¤ Îæñ]ÚU ·¤è çãU'â·¤ çÈ¤Ë×æð´ ·¤æð ŠØæÙ ×ð´ ÚU¹·¤ÚU Õæì ·¤ÚÔ'U Ìæð Òç×ÜÓ ×ð´ ·¤æð§üU Öè °ðâæ ÎëàØ Ù Íæ çÁâð ÂÚUÎð ÂÚU çÎ¹æØæ Ù Áæ â·ð¤Ð ×»ÚU §Uâð çãU‹Îè çâÙð Á»Ì ·¤æ ÎéÖæü,Ø ·¤ãð'U Øæ Âý×¿Î ·ð¤ Öæ,Ø ·¤è çßÇU]ÕÙæ ç·¤ çÈ¤Ë× ·ð¤ çÚUÜèÁ ãUæðÙð ·ð¤ ÂãUÜð ãUè ©Uâ ÂÚU ÂýçÌÕ'Šæ Ü»æ çÎØæ »ØæÐ ÇðUÉ¸U ßáü ·ð¤ Õæì ÁÕ ÂýçÌÕ'Šæ ãUÅUæ, Ìæð ©Uâ·¤æ Ùæ× Òç×ÜÓ âð ÂçÚUßçÌüÌ ·¤ÚU Ò»ÚUèÕ ×ÁÎêÚUÓ ãUæð ¿é·¤æ ÍæÐ ·¤æÚU‡æ Âý×¿Î ·¤æ ¥æÎàæü ØÍæÍüßæÎ ç×Ü×æçÜ·¤æð´ ·¤æð ÚUæâ Ù ¥æØæ, çÁâ×ð´ °·¤ ¥æðÚU ç×Ü ·ð¤

×æçÜ·¤ ·¤è ·¤æÜè ·¤ÚUÌêÌæð´ ·¤æ Ù»A ç¿UæÌ Ìæ Ìæð ÎêâÚUè ¥æðÚU ©Uâ·¤è ¥æÎàæü ÕãUÙ Áæð ç×Ü ·ð¤ ÎçÜÌ ¥æñÚU àææðçáÌ ×ÁÎêÚUU âð Ù ·ð¤ßÜ Œæ¿æÚU ·¤ÚUÌè ãñU ÕçË·¤ ©Uâ·ð¤ âæÍ ç×Ü·¤ÚU ¥ÂÙð Öæ§üU ·ð¤ ç¹ÜæÈ¤ ×ÁÎêÚUæð´ ·¤æ âæÍ Öè ÎðÌè ãñUÐ ßæSÌß ×ð´ ØãUæ¡ Âýð×¿´Î ·¤æ ¥æÎàæü ØÍæÍüßæÎ ¥æñÚU ÙæÚUè Áæç Ì ·ð¤ Âýç Ì ©UÙ·¤æ ŸæhUæ Öæß Ìæ, Áñâæ ç·¤ ©UÙ·¤è ãUÚU ·¤ãUæÙè ¥æñÚU ©UÂ‹Øæâæð´ ×ð´ ÚUãUÌæ ãñUÐ ×»ÚU Âýð×¿´Î ·ð¤ ¥æÎàæüßæÎ ¥æñÚU ØÍæÍüßæÎ ÂÚU ¥ÍüßæÎ ÖæÚUè ÂÇ, »ØæÐ ·ð¤ßÜ ·é¤ÀU Ìàæü·¤æð´ ·¤è ÕéçhU ·¤æ [illegible]ØæÜ ÚUU¹Ìð ãéU° çÜÎðüàæ·¤ Ùð Üð¹·¤ ·¤è âãU×çÌ ·ð¤ çÕÙæ ·¤ãUæÙè ×ð´ Áæð ÂçÚUßÌüÙ ç·¤Øæ ßãU Âýð×¿´Î ·ð¤ çÜ° Öè ÂãU¿æÙæ ×éçà·¤Ü ãUæð »ØæÐ ÕÙæÚUâ ×ð´ ÁÕ ©U‹ãUæð´Ùð §Uâ çÈ¤Ë× ·¤æð Îð¹æ Ìæð ¥ÂÙð ç×˜æ âð ØãU ·¤ãUÙð ÂÚU çßßàæ ãUæð »° ãUæð´ »°- ÒØãU Ìæð âèŠæð-âèŠæð Âýð×¿´Î ·¤è ãUˆØæ ãñUÐÓ (Âýð×¿´Î ÚUU¿ÙæßÜè Öæ» v~ ÂëDU vyy) çÜÎðüàæ·¤ ·ð¤ §Uâ ÃØßãUæÚUU Ùð ©U‹ãð´U ·¤æÈ¤è ¥æãUÌ ç·¤ØæÐ ¥ÂÙð Îé¹è ×Ù ·¤è ßðÎÙæ ·¤ãUÌð Öè Ìæð ç·¤ââð ¥ÌÑ ÁñÙð‹Îý ·¤æð çÜ¹ ÖðÁè Âæ̀è ç·¤ Òßð Áæð ¥æàææ Üð·¤ÚU ØãUæ¡ ¥æ° Íð ç·¤ çÈ¤Ë× ·ð¤ ×æŠØ× âð âæçãUˆØ âðßæ ·¤ÚUÔ´U»ð ××ÚU Îð¹æ ×é´Õ§üU ×ð´ çÈ¤Ë×æð´ ÂÚU ÃØæßâæçØ·¤Ìæ ãUæßè ãñU ãñU, ÁãUæ¡ Ù ¿æãUÌð ãéU° Öè ©U‹ãð´U ·¤§üU âÛæÛæñÌð ·¤ÚUÙð ÂÇ, ÚUãðU ãñ´UÐ §Uâè Ìæð ©UÙ·¤è ÂãUÜè ·¤ãUæÙè ßæÜè ãUè ¥‘ÀUè ãñU ÁãUæ¡ ßð ¥ÂÙè §U‘ÀUæÙéâæÚU çÜ¹ Ìæð â·¤Ìð ãñ´UÐ ¥Ìè çãUÌè çâÙð×æ ·¤æð ßð ãUæò·¤ Üð¹·¤æð´ ·¤è ÏÚUæðãUÚU ×æÙÌð ãéU° ÁñÙð‹Îý ·¤æð çÜ¹Ìð ãñ´U (ÁñÙð‹Îý ·¤æð çÜ¹æ Â˜æ w} Ùß[illegible] ÕÚU, v~xy)Ð ÕãUÚUãUæÜ çÈ¤Ë×æð´ ·ð¤ âÈ¤ÜÌæ ÂÚU Âýð×¿´Î L¤·ð¤ ÙãUèÐ

¥Õ ÕæÚUè ¥æ§üU ©UÙ·ð¤ ©UÂ‹Øæâ ÒâðßæâÎÙÓ ÂÚU ¥æŠææçÚUÌ çÈ¤Ë× ÒÙßÁèßÙÓ ·¤èÐ ×ãUæÜÿ×è çâÙðÅUæðÙ ·ð¤ ÌãUÌ ÕÙè §Uâ çÈ¤Ë× ×ð´ Âýð×¿´Î ·¤æð ·¤æÈ¤è ¥æàææ°¡ Íè´Ð çÙÑâ´ÎðãU ãUæðÙè Öè ¿æçãU° Íè, €Øæð´ç·¤ ÕæÚUÌèØ âæçãUˆØ ×ð´ ßðàØæ¥æð´ ·¤æð ¥Õ Ì·¤ ©UÂðÿææ ¥æñÚU çÌÚUS·¤æÚU ·¤è ÎëçCU âð ãUè Îð¹æ »Øæ Ìæ, ××ÚU Âýð×¿´Î Ùð ©U‹ãð´U âßü ÂýÍ× °·¤ ÙæÚUè ·ð¤ M¤Â ×ð´ ÂãU¿æÙ Îð ¥ÂÙè ·¤ëçÌ âð ØãU âæçÕÌ ·¤ÚUÙð ·¤æ ÂýØæâ Öè ç·¤Øæ ç·¤ ßðàØæ¥æð´ ×ð´ Öè ÕæßÙæ°¡ ¥æñÚU â´ßðÎÙæ°¡ ãUæðÌè ãñ´U ßð Öè â×Á ·¤è çãUÌ-ç¿´Ì·¤ ãUæð â·¤Ìè ãñ´Ð ÌÖè Ìæð çÈ¤Ë× ·ð¤ Âýèç×ØÚU ·ð¤ ÎæñÚUæÙ ßð ÕÇ,ð ÖæßßçuÜ ÍðÐ ©UÙ·¤æ ×æÙÙæ Ìæ ç·¤ ÒÒØÌ ×ðÚUÕ §Uâ ©UÂ‹Øæâ mUæÚUæ â×æÁ ·¤æ ·é¤ÀU ©UÂ·¤æÚU ãUæð â·¤Ìæ ãñU Ìæð ×ñ´ SßØ´ ·¤æð ·ë¤ÌæÍü ×æÙê¡»æÐÓÓ (v} ×§üU v~xy ·¤æð Âýð×¿´Î mUæÚUæ ÁñÙð‹Îý ·¤æð çÜ¹æ Â˜æ Ò×æŠæéÚUèÓ ¥»SÌ ×æãU ×ð´ Âý·¤æçàæÌ) çÈ¤Ë× ·¤è ÂëDUÖê× âéŠææÚUßæÎè ÎëçCU·¤æð‡æ ÂÚU ¥æŠææçÚUÌ ÍèÐ ßðàØæ¥æð´ ·¤è â×Sæ¥æð´ ·¤æð â×Á ·ð¤ â×ÿæ Üæ·¤ÚU ©U‹ãð´U â×Á ×ð´ ©U¿¿Ì â[illegible]×æÙÁÙ·¤ SÍæÙ ÂýÎæÙ ·¤ÚUæÙæ Ìæ, ××ÚU ¥È¤âæðâ! çÈ¤Ë× ·ð¤ ÌñØæÚU ãUæðÌð-ãUæðÌð ©Uâ·¤æ ×é[illegible]Ø ÜÿØ ¹æð »Øæ Âýð×¿´Î ·ð¤ ç×° ÂéÙÑ ˜ææâÎè ÚUãUèÐ §Uâ ÂÅ·¤Ìæ ·ð¤ âæÍ ç·¤ ßãUè ÃØßãUæÚU ãé¥æ Áæð ©UÙ·¤è ¥‹Ø ·¤ëçÌØæð´ ·ð¤

âæÏ ãéU¥æÐ ÕçË·¤ ØãUæ¡ Ìæð ßð SßØ´ ãUè ·é¤ÀU ÂÜ ·¤æð ¥¿´çÖÌ ãéU° ç·¤ §Uâ ·ë¤çÌ ·ð¤ Üð¹·¤ ßð ¹éÎ ãñ´U Øæ ·¤æð§üU ¥æñÚUU? ßð Ìæð §Uâ ·¤Îæ ·ð¤ ×æŠØ× âð ßñàØæ¥æð´ ·¤è çSÍçÌ ×ð´ âéŠææÚUU ÜæÙæ ¿æãUÌð Íð â×æÁ ×ð´ ©UÙ·ð¤ Âýçì âæÈ¤-âéÍÚUUæ ÎëçCU·¤æð‡æ ÎðÙæ ¿æãUÌð Íð, ×»ÚUU çÈ¤Ë× ×ð´ Ìæð ©Uâð ÂêÚUUæ ‚Üñ×ÚUUæ§UÁ ·¤ÚUU çÎØæ »ØæÐ ÎðãU ÂýÎàææüÙ ¥æñÚUU Öæð´ÇðU Ùæ¿»æÙæð´ âð çÈ¤Ë× ·¤æð §UÌÙæ ÖÚUU çÎØæ ×æÙæð ßð âÕ âÈ¤Ü çÈ¤Ë× ·¤è ÁM¤ÚUUÌ ãUæð´Ð

§UÙ ƒæÅUÙæ¥æð´ Ùð ©U‹ãð´U ØãU °ãUâæâ ·¤ÚUUæ çÎØæ ç·¤- ÒçÈ¤Ë× ×ð´ ÇUæØÚUÔUU€ÅUÚUU ãUè âÕ ·é¤ÀU ãñU, Üð¹·¤ ¿æãðU ·¤Ü× ·¤æ Õæÿææææ ãUU €Øæð´ Ù ãUæð, ØãUæ¡ Ìæð ÇUæØÚUÔUU€ÅUÚUU ·¤è ¥âÜÍæÚUUè ãñUÐ ÁãUæ¡ ×ñ´ ØãU ·¤ãUÙð ·¤æ âæãUâ Öè ÙãUè´ ·¤ÚUU â·¤Ìæ ç·¤ ×ñ´ ÁÙ-M¤ç¿ ÁæÙÌæ ã¡êUÐ ©UËÅðU ÇUæØÚUÔUU€ÅUÚUU ØãU ·¤ãðU»æ ç·¤ ¥æÂ ÙãUè´ ãU× ÁæÙÌð ãñ´UÐ ãU×Ùð ÁÙÌæ ·¤è M¤ç¿ ¥æñÚUU âÜæãU ÜðÙð ·ð¤ çÜ° ØãU ÃØßâæØ ÙãUè´ ¹æðÜæ ãñU? ŠæÙ ·¤×æÙæ çÙ×æüÌæ çÙÎðüàæ·¤ ·¤è »ÚUÁ ãñUÐ ÒÒ×ðÚUÔU Üð¹Ù ×ð´ Ìæð ¥æÎàææüßæÎ ãñU, §´UÅUÚUUÅðUÙ×ð´ÅU ßñËØê ÙãUè´ÐÓÓ

ν~x} ×ð´ Ìç×Ü ×ð´ ÒâðßæâÎÙÓ ·¤æ çÙ×æü‡æ ç·¤Øæ »Øæ, çÁâ×ð´ ÂêÚUUè çÙDUæ ÕÚUUÌè »§üÐ ×ðÚUUæ Ìæ˜ÂØü ãñU ç·¤ Âýð×¿´Î ·ð¤ âæçãUˆØ ·¤è ¥æ˜×æ ·¤æð §Uâ çÈ¤Ë× ×ð´ ÕÚUU·¤ÚUUæÚUU ÚUU¹æ »ØæÐ ØãU çÈ¤Ë× â´»èÌ ÂýŠææÙ ãUæð·¤ÚUU Öè ¥ÂÙð âéŠææÚUUßæÎè ÜÿØæð´ ·¤æð ¥ÿæé‡Ø ÚUU¹Ùð ×ð´ âÈ¤Ü ÚUUãUèÐ ¥È¤âæðâ! §Uâ ¹éàæè ·¤æð ×ãUâêâ ·¤ÚUUÙð ·ð¤ çÜ° ÌÕ Âýð×¿´Î Áèçßì Ù ÍðÐ

ν~yν ×ð´ çÈ¤ÚUU âÚUU·¤æð ÂýæðÇUU€àæÙ Ùð ×´éÕ§üU ×ð´ ©UÙ·¤è ©UÎêü ·¤ãUæÙè Ò¥æñÚUUÌ ·¤è çÈ¤ÌÚUUÌÓ ÂÚUU ÒSßæ×èÓ Ùæ× âð çÈ¤Ë× ÕÙæ§üU, çÁâ×ð´ ×êÜ ·¤ãUæÙè ·¤è ¥æ˜×æ ·¤æð ÕÙæ° ÚUU¹Ùð ·¤æ â¿ðÌ ÂýØæâ ç·¤Øæ »ØæÐ ÕæÜçßßæãU ÂÚUUSÂÚUU ¥æçÎü·¤ ÖðÎ ÌÍæ ×çãUÜæ ·¤è ©U“æçàæÿææ ¥æñÚUU Èñ¤àææÙÂÚUUSÌè âð ©UÆUè â×SØæ¥æð´ ·¤æð ÎàææüØæ Ìæð »Øæ, ×»ÚUU §Uâ çÈ¤Ë× ·¤è ÂÅU·¤Íæ ÿæè‡æ ß ·¤×ÁæðÚUU âæçÕÌ ãéU§üÐ °·¤ ¥æðÚUU ÙæØ·¤ ß ÙæçØ·¤æ ·ð¤ ÂçÚUUßæÚUUæð´ ·¤æ ÂÉ¸Uæ-çÜ¹æ ãUæðÙæ, ÎêâÚUUè ¥æðÚUU ¥æŠæéçÙ·¤ ãUæð·¤ÚUU Õæç¢ßæãU Áñâè ÂÚU´UÂÚUUæÐ °·¤ ß»ü âéâ´Âó Ìæð ÎêâÚUUæ çßÂó ·¤è ÂèÉ¸æ ÛæðÜÌæ çÁâ·ð¤ çÌÚUUS·¤æÚUU ·¤æ ·¤ãUè´ ·¤æð§üU ¥´Ì ÙãUè´Ð â´ÖßÌÑ Øð çß´»çÌØæ¡ Õæñçh·¤ ß»ü ·¤æð ·¤¿æðÅU »§ZÐ ßãUè´ §´UçÎÚUUæ Áñâè ×çãUÜæ ·¤æ, Áæð ©U“æ çàææçÿæÌ ¥æñÚUU Èñ¤àææÙÂÚUUSÌ ãñU, Õ¿ÂÙ ·ð¤ çßßæãU ·¤æð ÙæÂâ´Î ·¤ÚUUÙæ SßæÖæçß·¤ ÍæÐ ØãUæ¡ Üð¹·¤ Ùð ©Uâ·¤è §Uâ ÀUæðÅUè-âè »ÜÌè ·¤æð ·¤æÈ¤è çßSÌëÌ ·¤ÚUU·ð¤ çÎ¹æØæ ¥æñÚUU ©Uâð âÁæ SßM¤Â çÖ¹æçÚUUÙ ÕÙæ·¤ÚUU Ùæ×·¤ ·ð¤ Âæâ Âãé¡U¿æØæÐ °·¤ ÂÉ¸Uè-çÜ¹è ÙæçØ·¤æ ·¤æð ÀUæðÅUè-âè ÖêÜ ·¤è §UÌÙè ÕÇ¸è âÁæ, ¥Ìßæ Âýð×¿´Î ·¤æ ¥çÌ¥æÎàææüßæÎ àææØÎ Ìàææë·¤ ÙãUè´ ÙãUè´ Âæ°Ð ©U‹ãð´U ØãU Ìç·¤ØæÙêâè çß¿æÚU, Âýð×¿´Î ·ð¤ ÃØçQ¤˜ß âð ×ðÜ ¹æÌæ ÙÁÚUU ÙãUè´

¥æ°Ð ÂêÚUè ·¤è ÂêÚUè çßáØßSÌé Âý»çÌàæèÜÌæ ·ð¤ çßL¤hU çÂÌëâžææˆ×·¤ â×æÁ ·¤è ÂñÚUßè ·¤ÚUÌè ÙÁÚU ¥æ§üUÐ ÂçÚU‡ææ×SßM¤Â ØãU çÈ¤Ë× Öè Ìàæü·¤æð´ ·¤æ çÎÜ Ù Áè̐ â·¤èÐ

Ü»æÌæÚU Îæð-ÌèÙ çÈ¤Ë×æð´ ·¤è ¥âÈ¤ÜÌæ ·ð¤ Õæî Âýð×¿Î ·¤è âæçãUˆØ ·ë¤çÌØæð´ ·ð¤ çÈ¤Ë×æ´ÌÚU‡æ ·¤æ çâÜçâÜæ Í×-âæ »ØæÐ çÙÎðüàæ·¤æð´ ·¤æ ÖÚUæðâæ àææØÎ ©UÙ ÂÚU ©UÆU-âæ »Øæ ÍæÐ ©U‹ãð´U ØãU ÖØ âÌæÙð Ü»æ ç·¤ Ù ×æÜê× Âýð×¿Î ·¤è ·ë¤çÌØæð´ ÂÚU ¥æŠææçÚUÌ çÈ¤Ë×ð´ ¿Üð´ Ù ¿Üð´Ð ×ë¯Øé ·ð¤ v® ßáü Õæî v~y{ ×ð´ °·¤ ÕæÚU ÂéÙÑ ÖßÙæÙè ÂýæðÇU€àæÙ ·ð¤ ÕñÙÚU ÌÜð ÒÚ´U»ÖêçׄÓ ÂÚU ÕÇ¸ð SÌÚU ÂÚU çÈ¤Ë× ÌñØæÚU ·¤è »§üU, çÁâ×ð´ ×êÜ ·ë¤çÌ ·¤è çÙ·¤ÅUÌæ ·¤æ ŠØæÙ ÚUU¹æ »ØæÐ Öæáæ ¥æñÚU â´ßæÎæð´ ·ð¤ â´ÎéÜÙ ·ð¤ ÕæßÁêÎ ØãU çÈ¤Ë× ßæÌæßÚU‡æ ·ð¤ ÂýSÌéç̷¤ÚU‡æ ·¤è ÎëçCU âð ·¤×ÁæðÚU âæçÕÌ ãéU§üUÐ

Áñâæ ç·¤ ãU× ÁæÙÌð ãñU´, çâÙð×æ °·¤ ¿æÿæéá ×æŠØ× ãñUÐ ØãUæ¡ ×Ùæðßñ™ææçÙ·¤ ß Öæáæ§üU âæñ´ÎØü ßæÜð ©UÂ‹Øæâæð´ ·¤æ çÈ¤Ë×æ‹ÌÚU‡æ ¿éÙæñÌèÂê‡æü ¥ßàØ ÚUUãUÌæ ãñU ç·¤‹Ìé Ùæ×éç·¤Ù ÙãUè´Ð â̈Áèß ÚUUæØ, »æðÎæÙ, Õ»ü×ñÙ Áñâð ÕÇ¸ð çÙÎðüàæ·¤æð´ Ùð §UÙ ×Ùæðßñ™ææçÙ·¤ Ì‰Øæð´ ·¤æð ÕÇ¸è âÈ¤ÜÌæÂêßü·¤ çÈ¤Ë×æØæÐ çÈ¤ÚUU Öè ·¤§üU çÈ¤Ë×æð´ ×ð´, çßàæð»á ·¤ÚUU Üæð·¤â´S·ë¤çÌ ÂÚUU ¥æŠææçÚUÌ çÈ¤Ë×æð´ ×ð´, ßñâæ Öæáæ§üU âæñ´ÎØü Îð¹Ùð ×ð´ ÙãUè´ ¥æÌæ Áñâæ ©UÂ‹Øæâæð´ ×ð´ ¥æÌæ ãñUÐ ÂýæØÑ çÙÎðüàæ·¤ ·ë¤çÌØæð´ ×ð´ çÜ¹æÚUU ÜæÙð ·ð¤ çÜ° ·é¤ÀU °ðâæ ÂçÚUßÌüÙ ·¤ÚUU ÕñÆUÌð ãñ´U ç·¤ Öæáæ ·¤æ ×æñçÜ·¤ âæñ´ÎØü ãUè â×æ# ãUæð ÁæÌæ ãñUÐ

¥Õ Ò»æðÎæÙÓ ·¤æð ãUè Üð´, çÁâ Ù ·ð¤ßÜ Âýð×¿Î ·¤æ âÕâð ¥‘ÀUæ ©UÂ‹Øæâ ×æÙæ »Øæ, ßÚUUÙ÷ »ýæ×è‡æ ÁèßÙ ÂÚU ¥æŠææçÚUÌ âßüŸæðDU ß Üæð·¤çÂýØ ×ãUæ·¤æÃØ ·ð¤ M¤Â ×ð´ Îð¹æ »ØæÐ §UÌÙæ ãUè ÙãUè´ ÒÂÎðüÚU Âæ´¿æÜèÓ âð Ò»æðÎæÙÓ ·¤è ÌéÜÙæ ·¤è Áæ̂è ãñUÐ ÒÂÎðüÚU Âæ´¿æÜèÓ ÕÙæÌð â×Ø â̂ØÁèÌ ÚUUæØ ·ð¤ â×ÿæ ØãU ¿éÙæñÌè Íè ç·¤ §Uâð ×êÜ ©UÂ‹Øæâ âð ŸæðDU âæçãUˆØ ·¤ÚUU çÎ¹æØæ ÁæØ ÌÍæ »ýæ×èÙ §Uâ ÎëçCU âð àææð¿ÙèØ âæçãUˆØ ãñUÐ ØÍæ ·¤çß ŸæèÂÌ ÙÚUU ÂÚU Ò»æðÎæÙÓ çÈ¤Ë× ·¤æð Âýð×¿Î ·¤è ÂýçÌ ŸæðDU´ÚU¿ÙæÐ ç·¤ÌæÕ ×ð´ (Šææ×üØé» w{ ÁÙßÚUè v~{y ÂëDU yx)Ð ç·¤‹Ìé ØãU ·ñ¤âè ŸæðDUÚU¿Ùæ Íè ç·¤ âÁèß ÂæÙæ ·¤ç»ÚU ÙæÐ ©Uâ»æ çÈ¤Ë× ·¤æ ·¤ÚUèÕ ¥æñÚU âÈ¤Ü Íæ, çÈ¤Ë× ©UÂ‹Øæâ ·¤è ¥æ¹ç·¤ ·¤æð Â·¤Ç¸ ÂæÙð ×ð´ ©UÙÌè ãUè ¥âÈ¤Ü ÚUUãUèÐ çÙÎðüàæ·¤ ç˜æÜæð·¤ ÁðÙÚUè ÂÅUÍæ ×ð´ ßãU ·¤âæßÅU ÙãUè´ Üæ ÂæØæ ©Uâ»æ ·ð¤ ÂæÆU·¤æð´ ·¤è ÌÚUãU ØãU çÈ¤Ë×æð´ ·ð¤ Ìàæü·¤ ÙãUè´ Áñâæ Âæ§üUÐ çÈ¤Ë× ·¤æ ÂýßæãU °·¤Î× ×ÂÚUÌ Âæ ÚUÂÚU ÚUUãUæÐ ÚUUãUæ- Á»ãU ÂÚU ·¤ãUæÙè ·ð¤ çÕ¹ÚUæß Ùð ©Uâð ¥æñÚU çß·ë¤Ì ÌÍæ ©Uâ·ð¤ ç¿˜æ‡æ·¤Ù ·¤æð çÙÂýæ‡æ ÕÙæ çÎØæÐ Øç çÈ¤Ë× ãUæðÚUè ¥æñÚU Šæç̂Øæ ·ð¤ ¥æÂÂæ ãUè ƒæê×Ìè ÌÕ Ìæð ¥æñÚU Öè ©U××èÎ ·¤è Áæ â·¤Ìè ÍèÐ ×»ÚU ãUæðÚUè, Áæð °·¤ ×ãUæÙÌ·¤æàæ ç·¤âæÙ ãñU ßãU ©Uâ â×Ø ·ð¤ ·é¤¿·¤ ·¤æð ÙãUè´ ÌæðÇ¸,

ÂæØæÐ ßãU çßßàæÌæ çÈ¤Ëx xð´ ·¤ãUè´ çÎ¹æ§üU ÙãUè´ ÎèÐ âèŠæè-âè ÕæÌ Îè ç·¤ ÃØæßâæçØ·¤Ìæ Ùð çÈ¤Ëx ·¤è ¥æ^xæ ·¤æð çß·ë¤Ì ·¤ÚU çÎØæ ÍæÐ â´ßðÎÙæ ·¤è ÎëçCU âð Âæ˜ææð´ xð´ Öè §UÌÙæ Èð¤ÚUÕÎÜ ·¤ÚU çÎØæ Íæ ç·¤ ©U‹ãð´U ÂãU¿æÙ ÂæÙæ ×éçà·¤Ü ãUæð »ØæÐ »æðÕÚU Áñâæ Âæ˜æ ×ãU×êÎ ·¤æð °·¤ çßÎêá·¤ ·¤è Öêçx·¤æ ¥æñÚU ãUæðÚUè ¥æñÚU ŠæçÙØæ ·¤è Öêçx·¤æ ÚUæÁ·é¤×æÚU ¥æñÚU ·¤æçxÙè ·¤æñàæÜ Áñâð ©U^·ë¤CU ¥çÖÙðÌæ¥æð´ mUæÚUæ ¥çÖÙèÌ ·¤è »§üUÐ ·¤ãU â·¤Ìð ãñU´ ç·¤ §UÙ Âæ˜ææð´ ·ð¤ âæÍ ÂêÚUæ-ÂêÚUæ ‹ØæØ ÙãUè´ ãéU¥æÐ ×»ÚU çÈ¤ÚU Öè °·¤ ·¤×è Ìàæü·¤æð´ ·¤æð ØãU Öè ¹Üè ç·¤ ãUæðÚUè, Áæð Îé¹ ·ð¤ ÿæ‡ææð´ xð´ ÃØçÎì ãUæð Â%è ·¤æð ÂèÅUÌæ Íæ, Ìæð âé¹ ·ð¤ ÂÜæð´ xð´ Âýð× ·¤æ §UÁãUæÚU Öè ·¤ÚUÌæ ÍæÐ ×»ÚU çÈ¤Ëx xð´ Áæð Ìàææ»Øæ »Øæ ©Uââð Ìæð ØãUè ÂýÌèÌ ãUæðÌæ ãñU ç·¤ ÙæØ·¤ ×æÙæð ã¡UâÙæ ãUè ÖêÜ »Øæ ãñUÐ Áèßß ·ð¤ â´ƒæáæðZ âð Í·¤æ-ãUÚUæ ØãU ÙæØXXX Ìàæü·¤æð´ ·¤è Ââ´Î Ù ÕÙ â·¤æÐ ŠæçÙØæ, Áæð ßæSÌß xð´ °·¤ ÌðÁçSßÙè Âæ˜æ Íè, ×»ÚU çÈ¤Ëx xð´ ©Uâ·¤æ ßãU ¥Î Ø âæãUâ, ¥âæŠææÚU‡æ ××Ìæ, ßãU ßðÎÙæ ©UÌÙè §Uü×æÙÎæÚUè âð ÙÁÚU ÙãUè´ ¥æ§üUÐ Öæáæ ·¤æð Öè âÁèß ÕÙæÙð ¥æñÚU SÌæÙèØ Ú´U» ÎðÙð ·¤æ çßàæðá ÂýØæâ ÙãUè´ ç·¤Øæ »Øæ, Áñâæ ç·¤ â^ØÁèÌ ÚUæØ ¥ÂÙè çÈ¤Ëxæð´ ·ð¤ Âæ˜ææð´ ·ð¤ °·¤-°·¤ â´ßæÎ ÂÚU ¥Í·¤ Ÿæ× ·¤ÚUÌð ÍðÐ Ø|çÂ Üæð·¤»èÌ ¥æñÚU â´»èÌ ·¤è ÎëçCU âð Â´. ÚUçßàæ´·¤ÚU Ùð àææS˜æèØ â´»èÌ ·¤æð ÕÇ¸è âÈ¤ÜÌæ âð ÂýSÌéÌ ç·¤ØæÐ

çãU‹Îè çâÙð×æ ·¤æ ØãU ÎéÖæü,Ø ãUè ·¤ãUæ Áæ»æ ç·¤ âßæðüžæ× ©UÂ‹Øæâ ÂÚU ßñâè ×ãUæÙ çÈ¤Ëxð Ù ÕÙ â·¤è, Áñâè ©UÚ×êÎ ÍèÐ â´ÖßÌÑ çÙÎðüàæÙ xð´ ãUè ·¤ãUè´ ·¤æð§üU ·¤×ÁæðÚUè ÚUãUè ãUæðÐ ¥æÜæð¿·¤æð´ ·¤è ©UçQ¤ Îè, ÒÒ·¤æàæ! Âýð×¿´Î ·¤è çÈ¤Ëxæð´ ·¤æð Öè ·¤æð§üU â^ØÁèÌ ÚUæØ Áñâæ ·¤ËÂÙæàæèÜ çÙÎðüàæ·¤ ç×Ü ÂæÌæ Øæ ÒãUèÚUæ ×æðÌè ·ð¤ ·ë¤c‡æ ¿æðÂÇ¸æ ãUè ç×Ü ÁæÌð Ìæð ©UÙ·¤è ·ë¤çÌØæ¡ Öè ¥jéÌ ·¤ãUÜæÌèÐÓÓ

Ò»ÕÙÓ ·¤æ âæñÖæ,Ø ·¤ãð´U ç·¤ ©Uâð çÙÎðüàæ·¤ ·ð¤ M¤Â xð´ ÌæðÕæÚUæ ·ë¤c‡æ ¿æðÂÇ¸æ ç×ÜðÐ Ìæð ÕñÜæð´ ·¤è ·¤Íæ ÒãUèÚUæ ×æðÌèÓ ·¤æ ßð âÈ¤Ü çÈ¤Ëxæ´·¤Ù ·¤ÚU ¿é·ð¤ ÍðÐ ¥Õ ¥ÂÙè ·¤Üæ^x·¤Ìæ çÎ¹æÙð ·ð¤ çÜ° ÕÇ¸æ ÈÜ·¤ ©UÙ·ð¤ âx×ÿæ ©UÂÜŽŠæ ÍæÐ ©U‹ãUæð´Ùð Âýð×¿´Î ·ð¤ Âýàæ´â·¤æð´ ·¤æð çÙÚUæàæ ÙãUè´ ãUæðÙð çÎØæÐ ν~{{ xð´ çÙ×æüÌæ Ÿæè âæðÙÌæçÜØæ ·ð¤ âæÍ ç×Ü·¤ÚU Ò»ÕÙÓ ·¤æ çÙ×æü‡æ ¥æÚU´Ö ç·¤ØæÐ ç·¤‹Ìé Ü»Ìæ ãñU Âýð×¿´Î ·¤æð Õ Õ§üU çÈ¤Ëx Ü»ÚUè Sßè·¤æÚU ãUè ÙãUè´ ·¤ÚUÙæ ¿æãUÌè Íè, Øæ âæçãU^Ø ©U‹ãð´U ÀUæðÇ¸Ùæ ãUè ÙãUè´ ¿æãU ÚUãUæ ÍæÐ ¥¿æÙ·¤ ·ë¤c‡æ ¿æðÂÇ¸æ ·¤æ çÙŠæÙ ãUæð »ØæÐ çâÙðÁ»Ì ·ð¤ Nè·¤æÚU ×é¹Áèü Ùð ©UÙ·ð¤ ¥ŠæêÚUÔ ·¤æ× ·¤æð ¥ÂÙð ãUæÍ xð´ çÜØæ ¥æñÚU ØãU Öè XØæÜ ÚU¹æ ç·¤ çÈ¤Ëx ·ð¤ âæÍ ·¤ãUè´ ¥‹ØæØ Ù ãUæðÐ ·¤ãUæÙè, Âæ˜æ ¥æñÚU ¿çÚU˜æ ·¤æð âæßŠææÙè ·ð¤ âæÍ â×ðÅUæÐ ©UÂ‹Øæâ ·¤è ¥æ^xæ ·¤æð ¥ÿæé‡Ø ÚU¹æ »ØæÐ Âýð×¿´Î ·¤æ ©UgðàØ Íæ ×ŠØß»èüØ ÂçÚUßæÚU ·¤è çÎ¹æßð ·¤è

Âýßëçžæ ¥æñÚU ©UâÂ·ð¤ ÎécÂçÚU‡ææ×æð´ ·¤æð çÎ¹æÙæÐ Ò»ÕÙÓ ·¤è ÙæçØ·¤æ ¥ßàØ ÎëÉ¸UÂýçÌ™æ Íè, ×»ÚU ÙæØ·¤ ÉéUÜ-×éÜÐ ØãUè §Uâ ·¤ÍæÙ·¤ ·¤æ ×æñçÜ·¤ ¥æñÚU Ùßèù ÂãUÜê ÍæÐ ¥Õ Ì·¤ çãU‹Îè çâÙð×æ ·ð¤ ÙæØ·¤ ãUè âßüàæçQ¤×æÙ, âßü»é‡æâ Âóæ ¥æñÚU ¿çÚU˜æßæÙ ãéU¥æ ·¤ÚUÌð ÍðÐ ÂãUÜè ÕæÚU ÙæØ·¤ ·¤è ·¤æØÚUÌæ ·¤æð ©UÁæ»ÚU ç·¤Øæ »ØæÐ Âæ˜æ ÚU×æÙæÍ ·¤æð âéÙèÜÎžæ Ùð âÁèß ·¤ÚU çÎ¹æØæÐ âæŠæÙæ Öè ÁæÜÂæ ·¤è Öêç×·¤æ ×ð´ âÈ¤Ü ÚUãUèÐ ÚU×æÙæÍ ·¤è ÛUæêÆUè »ßæãUè ÂÚU ·ý¤æ´çÌ·¤æÚUè ·¤æ ÚU×æÙæÍ ÂÚU Áêìæ Èñ¤·¤Ùæ Áñâð â´ßðÎÙàæèÜ ÎëàØæð´ ·¤æð ÕÇ¸è ãUè ¹êÕâêÚUÌè ·ð¤ âæÍ ÂýSÌéÌ ç·¤Øæ »ØæÐ â´ßæÎ ¥æñÚU Öæáæ ·¤è ÎëçCU âð Õæð Ì·¤ÚUÓ´U Ìæð çÙÎðüàæ·¤ Ùð §Uâð ÁèßßÙ ·ð¤ çÙ·¤ÅU ÜæÙð ·¤æ âÈ¤Ü ÂýØæâ ç·¤Øæ ãñU, ÂýßæãUÌæ âÌÌ ÕÙè ÚUãUè §UÙ âÕ Õæð´æð ·¤æð ÎëçCU»Ì ÚUU¹Ìð ãéU° ãU× ·¤ãU â·¤Ìð ãñ´U ç·¤ Ò»ÕÙÓ °·¤ âÈ¤Ü çÈ¤Ë× âæçÕÌ ãéU§üUÐ

ÕèâßŸ´ âÎè ×ð´ ¥ÂÙð Ü¹Ù¤ Âýßæâ ·ð¤ ÎæñÚUæÙ ßãUæ¡ ·¤è â´S·ë¤çÌ ¥æñÚU ÖæáæØè ÌãUÁèÕ âð ÂýÖæçßÌ ãUæð·¤ÚU Âýð×¿¢Î ·¤è °·¤ ¥‹Ø ·¤ëçÌ Áæð ×êÜÌÑ Ò×èÚU ¥æñÚU ç×Áæü·¤ÓÓ ·ð¤ Ùæ× âð çÜ¹è »§üU Íè ¥æñÚU Õæð ×ð´ ÒàæÌÚUÏ´UÁ ·ð¤ ç¹ÜæÇ¸èÓ ·ð¤ Ùæ× âð Üæð·¤çÂýØ ãéU§üU, ·ð¤ ÎæðÙæð´ Âý×é¹ ÂæˆæÚUÏ´UÁ ·ð¤ àææñ·¤èÙ ã´ñÐ ·¤ãUæÙè ·ð¤ ¥´Ì ×ð´ ÎæðÙæð´ ãUè ¥æÂâ ×ð´ ÜÇ¸·¤ÚU ×ÚU Áæð Ìð ãñ´U, ÁÕ ç·¤ ÈèË× ×ð´ °ðâæ ÙãUè´ ãUæð´ Ìæ ãéU¥æÐ çÙÎðüàæ·¤ â^ØÁèÌ ÚUæØ ·ð¤ âÂæÙ ÂÚU Ò»ÕÙÓ ¿éÙæñÌè Íè ç·¤ ßð ·ñ¤âð ÎæðÙæð´ ·¤æð çÜçÂ¸Øæð´ ·¤æ ç¹Üæ¸Øæð´ ·¤æð ×ÚUÌð ãéU° ÎàææüÌ ã´UÜ Âæ˜ææð´ ·¤è ©UÎêü ÁéÕæÙ ¥æñÚU Ìãk âæèèÕ âð Ì„é·¤ ÚU¹Ìè ÍèÐ ¥æñÚU ÚUæÕ §UÙ ÎæðÙæð´ âð ãUè ·¤æÈ¤è ÎêÚU ÍðÐ çÈ¤Ë×´·¤Ù ×ð´ ç·¤âè Âý·¤æÚU ·¤è ˜æéçÅU Ù ãUæð §Uâ Õæ‹ ·¤æð ×gðÙÁÚU ÚU¹Ìð ãéU° ©U‹ãUæð´Ùð ÂãUÜð Ìæð §UÙ ¿çÚU˜ææð´ ÂÚU ×ãUèÙæð´ àææðŠæ ç·¤Øæ ¥æñÚU ÂæØæ ç·¤ ×èÚU ·¤è Â%è ¿æãUÌè Íè ç·¤ ßãU ’ØæÎæ âð ’ØæÎæ ƒæÚU âð ÕæãUÚU ÚUãðU, Ìæç·¤ ©Uâð ¥ÂÙð Âýð×è âð ç×ÜÙð ×ð´ ·¤æð§üU ÕæŠææ Ù ÚUãðUÐ ßãUè´ ç×Áæü ·¤è ÕèÕè ·¤æ ©Uâ·¤è àææÌ´ÚU´Á ·¤è ÜÌ Øæñ§ ÚU§ß ·¤æ ¥ßâÚU Öè ÙãUè´ ÎðÌè ÍèÐ ¥ÌÑ ç·¤ÂèÛ ·¤è ÈæÅUÙæ ·¤æð ÙØæ ×æðÇ¸, ÎðÌð ãéU° ©U‹ãUæð´Ùð ç×Áæü ·¤æð Ù ·ð¤ßÜ ÙÅé´â·¤ ÕÙæØæ, ÕçË·¤ ©UâÂð â´Õ´ŠæÌ âéL¤ç¿Âê‡æü ÎëàØæð´ ·¤æð Öè âÈ¤ÜÌæ âð çÙM¤çÂÌ ç·¤ØæÐ §Uâ ÕæÌ ·¤æ Öè ŠØæÙ ÚU¹æ ç·¤ Âæ˜æ ·ð¤ â[?]×æÙ ×ð´ ç·¤âè Âý·¤æÚU ·¤è ·¤×è Ù ¥æÙð Âæ°Ð ç¿ÌæÙ´ÏÌæ »é#æ Ùð çÜ¹æ ãñU, ÒÕèçÕØæð´ ·¤æð ÚUç¥ÂÅ¼æ ¿æçãU° ¥æñÚU ¹æçÌÚU ·¤æð àæÌÚU´ÁÐ ÎæðÙæð´ ·ð¤ çÜ° ØãU ¥ÿæÏ ÂýÚUæð´ ·¤æ ÙÙè ç¹Ü·¤æè ¥ÂÙè °ãUâæâ âð ¥æÏ ãUæðÙð ·¤æ ÂÌæ ÙãUæÚUÌð ·¤æ ÚUæðÙð ãñ´UÐ (â^ØÁèÌÚUæØ ·¤æ çâÙð×æ Âë. ~x-~y) §Uâ â´Õ´Šæ ×ð´ ÙæòØÂæÜ çÜ¹Ìð ãñ´U ç·¤ ÒØãU çÈ¤Ë× âð€âÂèØÚU ·¤è ç·¤âè ÎëàØ ·¤è â×æÙ ãñUÐ ·ð¤ßÜ $x^{®®}$ àæŽÎ ÕæðÜð Áæð ãñ´U Üðç·¤Ù ©UÈ¤! €Øæ-€Øæ ÙãUè´ ãUæð ÁæÌæÐÓ (Î §UÜÙÚU ¥æ§üU-Âë. wzv) Âýð×¿¢Î ·¤è °·¤ ¥‹Ø ·¤ãUæÙè Áæð çÜ¹è Ìæð $v\sim xv$ ×ð´ »§üU Íè, ç·¤‹Ìé $z^{®}$ âæÜ ÕæÎ ©Uâ·¤æ çÈ¤Ë×æ´·¤Ù ·¤æ çß¿æÚU ¥æØæÐ ·¤æÚU‡æ çÈ¤Ë× ·¤è ·¤Íæ

§UÌÙè ÁèßʹÌ ¥æñÚU ·¤æÜÕæðŠæ·¤ Ìè ç·¤ Âæ¡¿ âÎè Õæî Öè ÖæÚUUÌèØ â×æÁ ×ðʹ ©Uâ·¤è âæÌü·¤Ìæ ÕÚUU·¤ÚUUæÚUU ÌèÐ ©U‹ãUæðʹÙð âÎ÷»çÌ ·ð¤ ÁçÚUU° ß»üßñá Ø ·¤æð ©UÆUæØæÐ ÎçÜÌ ¥ˆØæ¿æÚU ·ð¤ Ù»Á ØÎæÌü ·¤æð â×æÁ ·ð¤ âæ×Ùð ʹØæðʹ ·¤æ ˆØæðʹ ÚUU¹æÐ àææðçáÌæðʹ ÂÚUU ¥ˆØæ¿æÚUU, ©UÙ·ð¤ ƒæÚUU ·¤è ×çãUUÜæ¥æðʹ ÂÚUU â×êçãUU·¤ ÕÜæˆ·¤æÚUU, ©U‹ãðʹU Ù»Á ·¤ÚUU »æ¡ß ×ðʹ ƒæé×æÙæ ¥æçÎ ßëçžæØæ¡ ¥æÁ Öè ÁæÚUUè ãñ´UÐ §UâèçÜ° Âýð×¿¢Î ·ð¤ âæçãUˆØ ·¤æð çßÈâæçãUˆØ ·¤è ×ãUæÙ ÚUU¿Ùæ¥æðʹ ×ðʹ ç»Ùæ ÁæÌæ ãñUÐ

Ò·¤È¤ÙÓ, ÒÂêâ ·¤è ÚUUæÌÓ, ÒÆUæ·é¤ÚUU ·¤æ ·é¤¥æ¡Ó, Òâßæ âðÚUU »ðã¡êUÓ, ¥æçÎ ©UÙ·¤è âßæðü^·ë¤CU ÚU¿Ùæ°¡ Ìèʹ çÁâ×ðʹ ÁÙ·¤L¤‡ææ ·¤æð âÁèß M¤Â âð ÂýSÌéÌ ç·¤Øæ »ØæÐ ©UÙ·¤è çßàæðáÌæ Ìè ç·¤ ©U‹ãUæðʹÙðð â×æÁ ·ð¤ ©UÂðçÿæÌ Âæ˜ææðʹ ·¤æð ©UÆUæ·¤ÚUU ©UÙ·¤è ÕÎÌæ×è ß ¥ˆØæ¿æÚUU ·ð¤ Âýç â×æÁ ·ð¤ ×Ù ×ðʹ ©UÙ·ð¤ Âýçî âãUæÙéÖêçî Á»æ ÌèÐ ÒâðßæâÎÙÓ °ßʹ Ò»æðÎÙÓ ×ðʹ ßðàØæ ·¤è ßðÎÙæ ·¤æ ç¿˜æ‡æ ¥æñÚUU ç·¤âæÙ ·¤è ÂèÇ¸æ ·¤æð ÕðãUÎ ØÌæÌüÌæ ·ð¤ âæÍ ÎàææüØæÐ ¿¡êç·¤ Âýð×¿¢Î ØÌæÌüßæÎè Üð¹·¤ Ìð, §UâèçÜ° ¥ÂÙð Âæ˜ææðʹ ·¤æð çÕÙæ ¥ÌÚU Øæ çÕÙæ ÕéÚUUæ ÙãUè´ ÕÌæÌð ÌðÐ ©UÙ·¤è §Uâè çßàæðáÌæ âð ÂýÖæçßÌ ãUæð·¤ÚUU ç¿ÎæÙ¢ÎÁè çÚUÌð ãñU, ÒÒ©UÙ·ð¤ âæçãUˆØ ×ðʹ Õýæræ‡æ- Õýæræ‡æ Ü»Ìð ¥æñÚUU ¥ÀêÌ-¥ÀêÌÐÓÓ (âˆØÁèÌ ÚUUæØ çâÙð×æ-¬) ©Uâè ÌÚUUãU âçÌ ·ð¤ çÜ° àØæ× ÕðÙð»Ü ·¤ãUÌð ãñU, ÒÒâÎ÷»çÌ ÁÕÎüSÌ Ìæ·¤Ì ·ð¤ âæÍ ãUÚU×æÚUÔU âæ×Ùð ¥æÌè ãñUÐ ¥æÂ §Uâ×ðʹ °·¤ ¹æâ ÌÚUUãU ·ð¤ Î×Ù ·¤æð ÂêÚUUè Ù»ÁÌæ ·ð¤ âæÍ ÎðÌð ãñU, Áæð Ìàææü·¤æðʹ ·ð¤ â×ÿæ ·¤æð×Ü ¥æñÚUU çßÇU Õæð¢êæü ÎëçCU·¤æð‡æ ÁUæðÇ¸, ÁæÌè ãñUÐÓÓ

©UÂÚUUæðQ¤ çßßð¿Ùæ âð ØãU çÙc·¤áü çÙ·¤Ü·¤ÚUU ¥æÌæ ãñU ç·¤ Âýð×¿¢Î âæçãUˆØ âð ãUè çãU‹Îè çÈ¤Ë×æðʹ ÚUUæ ¥æÚU¥ÖæÐ ØãU ¥æñÚUU Õæî ãñU ç·¤ ©UÙ×ðʹ ·¤ÍæÙ ãUè çÈ¤Ë×ðʹ ©U^·ë¤CU âæçÕÌ ãéU§Z, ¥çŠæ·¤æ´àæ ØãU ÂçÚU‡ææ× ÙãUèʹ Ìð Âæ§Z, çÁâ·¤è ©U×èÎ ·¤è Áæ ÚUUãUè ÌèÐ §Uâ×ðʹ Îæðá Ü¹Ù·¤ ·¤è ÂÅUÚU·¤Ìæ ·¤æð ÌðÙæ ×ðÚUè ÙÁÚU ×ðʹ ‹ØæØæðç¿Ì Ù ãUæð»æÐ çÈ¤ÚU €Øæ ßÁãU ãUæð â·¤Ìè ãñU? ç·¤âè çÈ¤Ë× ·¤æð âÈ¤Ü ãUæðÙð ·ð¤ çÜ° ÂÅU·¤Ìæ ·ð¤ âæÍ-âæÍ ©Uâ·¤æ çÈ¤Ë×æ´·¤Ù, Âæ˜æ ¿ØÙ, Ì·¤Ùè·¤è âéçßŠææ ·ð¤ âæÍ ØãU Öè ×ãUÙð ÚUU¹Ìæ ãñU ç·¤ ·¤Ìæ ×ðʹ ÂýSÌéÌ ÎðàæÂ·¤æÚU, ßæÌæßÚUU‡æ ¥æñÚUU Öæáæ, Âæ˜ææð´ ·¤è ¥ÂÙè ¿çÚUˆæ ·ð¤ Âýç âʹÁèß» ¥æçÎ ·¤æð ÖÜè-Öæ¡çÌ â×Ûæ ÜðÙæ ¿æçãU°Ð §Uâ·ð¤ âæÍ çÙÎðüàæ·¤ ·¤æð Öè §Uâ Õæî ·ð¤ Âýç âÁ» ÚUãUÙæ ãUæð»æ ç·¤ ·¤ãUè´ ×êÜ ·¤Ìæ ×ðʹ ÁM¤ÚUÌ âð ʹØæÎæ ÂçÚUßÌüÙ ãUæðÙð âð ÂÅU·¤Ìæ ·¤×ÁæðÚU Ù ãUæð Áæ°Ð

çâÙð×æ, â×æÁ ·¤æ ¥Ùé»æ×è ÙãUè´ ãñU, §Uâ Õæî ·¤æ Öè ØæÜ ÚUU¹æ ÁæÙæ ¿æçãU°Ð ©Uâ·¤è ¥ÂÙè Sßì´˜æ âžææ ãUæðÌè ãñUÐ çÙÎðüàæ·¤ çâÈü¤ §UâçÜ° ¥ÂÙè ·¤Üæ ·¤è ¥çÖÃØçQ¤ ¹æð Îð ç·¤ ßãU ç·¤âè »ÒÖèÚU Üð¹·¤ ·¤è ·ë¤çÌ ãñU ©Uç¿Ì ÙãUè´ ãñUÐ ×æÙæ ç·¤ Üð¹·¤ ·¤è ·ë¤çÌ ·¤æ ¥çSÌˆß ãñU,

×»ÚU ©Uâ×ð´ Öè ÂçÚUßÌüÙ ·¤è »´éÁæ§Uàæ ãUæðÌè ¿æçãU°Ð àæð€âçÂØÚU Áñâð ×ãUæÙ ÙæÅU·¤·¤æÚU ·ð¤ ÙæÅU·¤æð´ ×ð´ Öè ÕÇ¸ð-ÕÇ¸ð ÂçÚUßÌüÙ ãéU°, ©U‹ãð´U â×Ø ·ð¤ ¥ÙéM¤Â ÕÙæØæ »ØæÐ ×»ÚU §Uâ ÂçÚUßÌüÙ ·ð¤ ÆUæðâ ·¤æÚUU‡æ ×æñÁêÎ ãUæðÙð ¿æçãU° Ù ç·¤ ·ð¤ßÜ ÂýØæð» ·ð¤ Ùæ× ÂÚU ÂçÚUßÌüÙ ç·¤Øæ ÁæØÐ ãUæÜ ãUè ×ð´ ¿ðÌÙ Ö»Ì ·ð¤ ©UÂ‹Øæâ ÂÚU Õè ÒÍýè §UçÇUØÅUÓ, àæÚUÌ÷ ¿‹Îý ¿Å÷÷UÅUæðÂæŠØæØ ·¤è ÂÅU·¤Ìæ ÂÚU Õè âÈ¤Ü çÈ¤Ë× ÒÂçÚUÙèÌæÓ, çßÖæ ÚUæÙè ·¤æ Ò¥»Üð ÕÚUâ ×æðãðU çÕÇ¸ÅUØæ ãUè ·¤èÁæð¸Ó ÂýÖæ·¤ÚU ŸææðÇ¸˜æØ ·¤æ Ò·¤æð§üU Ìæð ãUæð ¥hüUÙæÚUUèÈÚUÓ, àæÚUÎ Áæðàæè ·¤æ ãUæSØ ŠØæÚUæßæçãU·¤ ÒÜæÂÌæ»´ÁÓ ¥æçÎ çâhU ·¤ÚUÌð ãñ´U ç·¤ çÈ¤Ë× ¥ñÚU âæçãUˆØ ·¤æ çÚUàÌæ ·¤æÈ¤è ·¤ÚUèÕè ÚUãUæ ãñUÐ Âýð×¿´Î ·ð¤ ÕæÚUÔU ×ð´ ØãUè ·¤ãUæ Áæ â·¤Ìæ ãñU ç·¤ â´ÖßÌÑ Âýð×¿´Î ·¤è ×ãUžææ °·¤ çÈ¤Ë× ·¤Ìæ Üð¹·¤ ·ð¤ M¤Â ×ð´ §UÌÙè

[?] Øæçì ÙãUè´ Âýæ# ·¤ÚU ÂæÌè çÁÌÙè °·¤ âæçãUˆØ·¤æÚU ·ð¤ M¤Â ×ð´ ©U‹ãUæð´Ùð ¥çÁüÌ ·¤è ãñUÐ ¥æç¹ÚU ©UÂ‹Øæâ ·¤è ÎéçÙØæ ·¤æ °·¤ §U·¤ÜæñÌæ â×ýæÅU €Øæ ·¤× ©UÂÜçŽÏæ ãñUÐ

â¿ ØãUè ãñU ç·¤ Âýð×¿´Î ·¤æð çÈ¤Ë×è ÎéçÙØæ âð çÙÚUUæàææ ãUè ãUæÍ ¥æ§üU ç·¤‹Ìé §Uââð Âýð×¿´Î ·ð¤ âæçãUˆØ ·¤æð ÂýoÁæ´ç·¤Ì ÙãUè´ ç·¤Øæ Áæ â·¤ÌæÐ Âýð×¿´Î ¥·ð¤Üð °ðâð âæçãUˆØ·¤æÚU ÙãUè´ ãñU´ çÁ‹ãð´U çÈ¤Ë×è ÎéçÙØæ âð ÜæñÅUÙæ ÂÇ¸U,æ; ¥×ëÌÜæÜ Ùæ»ÚU, ÙèÚUÁ ¥æçÎ ¥‹Ø ŸæðDU ·¤æðçÅU ·ð¤ âæçãUˆØ·¤æÚU, »èÌ·¤æÚU ·¤æð Öè çÈ¤Ë×è ÎéçÙØæ Ùð çÙÚUUæàæ ç·¤Øæ ãñUÐ ×»ÚU ×ñ´ âæð¿Ìè ã¡êU ç·¤ °ðâð âæçãUˆØ·¤æÚUæð´ ·¤æ ÎÁæü ãU×æÚUè ÎëçCU ×ð´ ¥æñÚU Öè ª¡¤¿æ ©UÆUÌæ ¿æçãU° €Øæð´ç·¤ Øð ßð ·¤Ü× ·ð¤ çâÂæãUè ã´ñU çÁ‹ãUæð´Ùð ÕæÁæÚUßæÎ ·¤æ çãUSâæ ÕÙÙð ·¤è ¥Âðÿææ ¥ÂÙð ÎæçØˆß ÕæðÛæ ·¤æð ÁÙæ° ÚUU¹Ùæ ’ØæÎæ ÕðãUÌÚU â×ÛææÐ

-----------000----------

1.11 इकाई सारांश

नई कहानी के संबंध में निर्विवाद रूप से यह कहा जा सकता है िकवह आधुनिक पश्चिम साहित्य से प्रभावित है, तथा परंपरा से हटका सोचता है। न्तिु यह भी सच है कि प्राचीन कहानी से ही नई कहानी का विकास हुआ है। यह कहानी विस्तुत क्षेत्र अपनाती है। जीपन मर्म ही कहानी का प्राण है। उसकी प्रभावशाली व्यजंना के लिए समय और स्थान के संकलन की आवश्यकता होती है। देश, काल ,पात्र आदि यब गौण तत्व रह गए है क्योंकि विषय–वस्तु और उद्देश्य कहानी का साधन–साध्य है। आधुनिक कहानी में इसी से वास्तविकता का आभास मिलता है, जिसका वास्तविक प्रारंभ प्रेमचंद की कहानियों से होता है। उन्होंने अपनी कहानियों में कथानक के साथ–साथ पात्रों को भी महत्व दिया। चूँकि यह पात्र जीवन के यथार्थ को प्रदर्शित करते हैंअतः प्रेमचंद जनता के एक मात्र प्रतिनिधि कथाकार माने जाते हैं। जिनकी कहानी मात्र मनांरजन ही नहीं करती बल्कि चेतना को झंकृत भी करती है। प्रेमचंद के व्यक्तित्व की तरह ही उनके कृतित्व में भी आदर्श और यथार्थ की मेल हमें दिखाई देता है। किन्तु यही आदर्शवाद उनके फिल्मी साहित्य पर कहीं कमजोर साबित हुआ।

1.12 अपनी प्रगति जांचिए

1. प्रेमचन्द की कहानियाँ ''कहानी संसार का अनमोल रत्न है।'' इस आधार पर प्रेमचंद की कहानियों पर एक लेख लिखिए।
2. रतन परिवार एवं समाज द्वारा प्रताड़ित पात्र है, वर्तमान नारी संदर्भ में हुए परिवर्तन से उसकी तुलना कीजिए।
3. सिद्ध कीजिए गबन एक समस्यात्मक उपन्यास है।
4. कफन कहानी का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
5. प्रेमचंद के साहित्य में हमें सदैव एक लेखकीय दायित्व सजग दिखाई देता है।
6. 'बहनों किसी सम्मिलित परिवार में विवाह मत करना और अगर करना तो जब तक अपना घर अलग न बना तो चैन की नींद मत सोना' इस कथन के आधार पर प्रेमचंद क्या कहना चाहते हैं, स्पष्ट कीजिए।

1.13 नियत कार्य/गतिविधि

1. प्रेमचंद जी की कोई पाँच कहानियाँ पढ़कर उसमें निहित संवेदनाओं पर सार्थक चर्चा कीजिए।
2. वर्तमान समय में नारी संबंधी जागरूकता में आप क्या सकारात्मक परिवर्तन देखते हैं ?
3. प्रेमचंद की भाषा में आए उर्दू शब्दों को जानिए।
4. गबन में निहित समस्याओं को गौर से पढिए तथा वर्तमान समय में उसकी प्रासंगिकता पर चर्चा करें।

5. प्रेमचंद ने अपनी कहानियों में समाज के शोषक वर्ग के प्रति हो रहे अत्याचारों की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है, कोई पाँच ऐसे दृश्य वर्णित कीजिए।
6. प्रेमचंद के फिल्मी साहित्य के बारे में जानकारी हासिलकर उनका नाट्य रूपान्तरण कीजिए।

1.14 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के

1.14.1 चर्चा के लिए बिंदु

1.14.2 स्पष्टीकरण के बिंदु

1.15 बोध प्रश्न

1. रतन के पति थे–

अ– शशिभूषण

ब– इंद्रभूषण

स– चंद्रभूषण

द– रविभूषण

2. ''गहनों का मर्ज इस गरीब देश में जाने कैसे फैल गया, जिन लोगों को भोजन का ठिकाना नहीं वे भी गहनों के पीछे प्राण देते हैं।' उक्त कथन है–

अ– इंद्रभूषण

ब– जालपा

स– प्रेमचंद जी

द– दयानाथ

3. प्रेमचंद की कथा पर आधारित फिल्म है–

अ– शतरंज के खिलाड़ी

ब– तीसरी कसम

स– आशीर्वाद

द– सेहरा

4. 1935 में प्रगतिशील लेखक संघ की अध्यक्षता की–

अ– कमलेश्वर

ब– निर्मलवर्मा

स–ज़हूरबख्श

द– प्रेमचंद

5. प्रेमचंद का उपनाम है–

अ– नवाबराय

ब– गुलाबराय

स– धनपतराय

द– तीनों में से कोई नहीं

1.17 कुछ उपयोगी पुस्तकें

संदर्भ–

1. प्रेमचंद ग्रंथावली
2. मानसरोवर (कहानी संग्रह) प्रेमचंद
3. प्रेमचंद और फिल्मांकन (शोध परख लेख) डॉ. लता अग्रवाल

हिन्दी कथा साहित्य

इकाई की रूपरेखा–

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 कथा साहित्य
1.4 कहानीकार मोहन राकेश
- 1.4.1 मोहन राकेश एक कहानीकार के रूप में
- 1.4.2 कहानी 'मलवे का मालिक' की समीक्षा
- 1.4.3 कथानक के आधार पर –
- 1.4.4 कथोपकथन के आधार पर –
- 1.4.4 चरित्र–चित्रण के आधार पर –
- 1.4.5 देशकाल और वातावरण के आधार पर –
- 1.4.6 भाषा शैली के आधार पर –
- 1.4.7 उद्देश्य के आधार पर –
- 1.4.8 शीर्षक के आधार पर –
- 1.4.9 कहानी की व्याख्या

1.5 कहानीकार फणीश्वरपाथ रेणु
- 1.5.1 फणीश्वरपाथ रेणु कहानीकार के रूप में –
- 1.5.2 कहानी 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' की समीक्षा
- 1.5.3 कथानक के आधार पर –
- 1.5.4 कथोपकथन के आधार पर –
- 1.5.5 चरित्र–चित्रण के आधार पर –
- 1.5.6 देशकाल और वातावरण के आधार पर –
- 1.5.7 भाषा शैली के आधार पर –
- 1.5.8 उद्देश्य के आधार पर –
- 1.5.9 शीर्षक के आधार पर –
- 1.5.10 कहानी की व्याख्या

1.6 इकाई सारांश
1.7 अपनी प्रगति जांचिए
1.8 नियत कार्य/गतिविधि
1.9 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु
1.10. 1 चर्चा के लिए बिंदु
1.11. 2 स्पष्टीकरण के बिंदु

1.12 बोध प्रश्न

1.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

कहानी सुनने ओर कहने की प्रवृत्ति मनुष्य में आरंभ से ही रही है। प्राचीनकाल में राजा–रानी की कहानी दादी–नानी से सुनने की परंपरा फिर गाँवों में अलाव सेकते हुए किस्से कहने और सुनने काफी प्राचीन है। जिसका प्रमुख उद्देश्य सुनने वाले का मनोरंजन होने के साथ–साथ 'फिर क्या हुआ' की जिज्ञासा की पूर्ति करना है । समय के साथ कहानी की विषय वस्तु में अंतर आता चला गया। इसी परिप्रेक्ष्य में आधुनिक कहानी का विकास बीसवीं शताब्दी में हुआ, इस दौर की कहानियों की विशेषता रही कि ये जीवन के बहुत समीप थी। उसमें आलौकिकता, दैवी–संयोग अथवा तिलिस्म घटनाओं की कमी थी। कारण अब कहानी का उद्देश्य मात्र मनोरंजन, उपदेश, कौतूहल एवं घटना वैचित्र्य न होकर मानव जीवन की यथार्थता एवं स्वाभाविकता को प्रदर्शित करना है।

प्रस्तुत इकाई में दो प्रमुख आधुनिक कहानीकार मोहन राकेश एवं फणीश्वरनाथ रेणु की कहानी क्रमशः 'मलवे का मालिक' एवं 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' से छात्रों को अवगत कराया गया है। इसके साथ ही कहानीकारों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से भी दात्र परिचित होंगे।

1.2 उद्देश्य

सफल कहानी लेखक के व्यक्तित्व एवं कृतित्व दोनों की कसौटी होती है। जिस लेखक में सूक्ष्म और गंभीर निरीक्षण शक्ति, संवेदनशील ह्रदय, कल्पना शक्ति की प्रचुरता, व्यापक अनुभूति और अभिव्यजंना शक्ति होगी। वही लेखक कहानी कला की दृष्टि से सफल कहानीकार माना जाता है। प्रस्तुत कहानी का उद्देश्य भी विद्यार्थियों को गद्य की इस विद्या की विशेषताओं से अवगत कराने के साथ–साथ प्रसिद्ध कहानीकार की कहानी कला से परिचित कराना है ताकि वे भी कहानी के सूक्ष्म पहलूओं को समझ कहानी सृजन में अपना योगदान दे सकें। इसके साथ ही आधुनिक कहानी जिस तरह प्राचीन रूढ़ियों से बाहर निकलकर जीवन के यथार्थ से जुड़ी है, अतः आज की युवा पीढ़ी भी अपने जीवनानुभवों को पाठकों से साझा कर सके यही इस इकाई का उद्देश्य है।

1.3 कहानीकार–मोहन राकेश

मोहन राकेशजी के व्यक्तित्व परिचय में अधिक कुछ न कहते हुए कमलेश्वर द्वारा कहे कुछ अंश देना उपयुक्त होगा–

'' अगर कहीं एक ऐसा शख्स दिखाई पड़े जो सिल्क की निहायत लंबं कालर वाली कमीज पहने हो, जिसके कफ कोट की बाहों स छः अंगुल बाहर निकले हों और उनमें एकदम पुरानी चाल के कफ–बटन हों। जिसकी टाई की गांठ ढ़ीली मुट्ठी की तरह गरदन में बेतरतीबी से कसी हो, कीमती कपड़े की पैन्ट जैसे पहनने वाले से पनाह मांग रही हो और गोल्ड–फ्लैक की सिगरेट जला–जला कर खा रहा हो माचिस की तीलियाँ और राख के टुकड़े निहायत साफ–सुथरी

जगहों पर फैंकता जा रहा हो। बात–बात पर आसमान फाड़ ठहाके लगाता हो और लेखक के बजाय किसी बर का रईस पर पहली नजर में एकदम गावदी प्रोपराइटर लगता हो तो समझ लीजिए वह राकेश है। + + + यह मुजरिम पैसों कस दुश्मन है और यह दुश्मन पैसे का भी ऐसा लगता है कि उसका पीछा नहीं छोड़ता..... उनके लिए घर की महत्ता समाप्त हो चुकी है। अ बवह घर में नहीं, मकान में रहता है और अपने दोस्तों पर होटलों में रूप्या पानी की तरह बहाता है।....उस पर सबसे बड़ा इल्जाम यह है कि वह टिकता नहीं निहायत ही गैरजिम्मेदार और अनुशासनहीन व्यक्ति है। संवेगों के आवेश में काम करता है इसलिए सही करते–करते गलत कर बैठता है।..... पर सतह से नीचे उतरते ही जबरदस्त अनुशासन दिखाई देता है वह अनुशासन है दिमाग का और सृजन का। ऊपरी जिन्दगी में वह जितना असंगटित और बिखरा हुआ दिखाई देता है उतना ही संगठित और सुव्यवस्थित है उसके लिखने की प्रक्रिया।....सृजन के इसी संतुलन, संवरण, संगठन और अनुशासन के लिए यह आदमी भागता है, कभ्झी काश्मीर, कभी डलहौजी, कभी शिमला और कभी सुनसान वीरानों में....।''

राकेश जी के बाहरी–भीतरी व्यक्तित्व को कमलेश्वरजी ने जितनी अच्छी तरह व्यक्त किया है उतना अन्यंत्र कहीं नहीं मिलता।

यद्यपि मोहन राकेश की चर्चा एक नाटककार के रूप में अधिक होने लगी थी और सम्भवतः उन्होंने अपने को नाटक विधा पर केद्रिन्त भी कर लिया था, किन्तु एक रचनाकार के रूप में मोहन राकेश को सर्वाधिक प्रतिष्ठा पहले अपनी कहानियों के कारण ही प्राप्त हुई थी। नाटक के क्षेत्र में आते–आते उनकी कहानियों के चार संग्रह भी प्रकाशित हो चुके थे। इंसान के खण्डहर','नये बादल','जानवर और जानवर','एक और जिन्दगी संभवतः यह अध्ययन काफी दिलचस्प होगा कि मोहन राकेश ने कहानीकार के रूप में उत्तरोत्तर विकास करते रहने के बावजूद क्यों नाटक को अपना एकान्तिक क्षेत्र चुन लिया? यह प्रश्न कुछ वैसा ही है जो प्रायः चेखब के पाठकों के सामने उठता है कि कहानीकार चेखण ने नाटककार के रूप में अपने को अधिक समर्पित क्यों किया अथवा नाटककार के रूप में उसे अपनी तत्कालीन असफलता अधिक मारक क्यों प्रतीत हुई? राकेश के संदर्भ में इस प्रश्न का उत्तर शायद इसका ठीक उल्टा होगा–'आषाढ़ का एक दिन' के प्रकाशन (1959) और प्रतिष्ठा ने शायद राकेश को नाटक की ओर अधिक उन्मुख किया। अथवा राकेश ने 1960 तक आते–आते कहानीकार के रूप में अपनी संभावनाओं को एक शिखर तक पहुँचा दिया था और उसके बाद उन्हें अपनी अभिव्यक्ति की तलाश को किसी अन्य विधा में स्थानान्तरित करना क्यों आवश्यक प्रतीत हुआ? 1960 के आस–पास उपन्यास और नाटक दोनों की ओर एक साथ मुड़ने की उनकी आकांक्षा इसी संदर्भ को रेखांकित करती है। अथवा अभिव्यक्ति के लिये कई विधाओं में भटकने की राकेश की बेचैनी इससे कहीं अधिक गहरी थी और उसका ताल्लुक उनकी पूरी रचना प्रक्रिया से था।

मोहन राकेश की कहानियों पर विचार करने का तात्पर्य (जिनका क्षेत्र फलक विषय तथा प्रतिनिधि दोनों दृष्टियों से पर्याप्त विस्तृत है) उनकी सम्पूर्ण रचना प्रक्रिया को इसी संदर्भ में समझना तथा उद्घाटित करना है और राकेश ही सम्भवतः अकेले कथाकार हैं। जिनके माध्यम से नयी कहानी' के पूरे विकास को सबसे अच्छी तरह समझा जा सकता है।

मोहन राकेश ने कहानियाँ लिखना जब शुरू किया वैसे तो उनकी पहली कहानी दोराहा 1947 में प्रकाशित हुई थी, खेकिन ओर 'सौदा', 'मलबे का मालिक' और 'उसकी रोटी' जैसी कहानियों से अधिक आकृष्ट हुए तब तक हिन्दी की आधुनिक कहानी अपनी कई दौर से गुजर चुकी थी। उसे न केवल गुलेरी तथा प्रेमचन्द की विरासत मिली हुई थी बल्कि जैनेन्द्र, अज्ञेय

तथा यशपाल' सन् 50-52 तक आते-आते कहानी हिन्दी साहित्य की एक सम्पन्न विधा बन चुकी थी जिसका तात्पर्य है कि 'कफन', 'जाह्नवी', 'एक रात', 'रोज' तथा 'धर्मयुद्ध' जैसी कहानियाँ प्रकाशित हो चुकी थीं, राकेश की कहानियां इस परम्परा में इससे या इस परम्परा से पृथक्-पृथक कहाँ स्थित है और उन्होंने किस रूप में अपनी विशिष्ट 'पहचान' स्थापित की, यह समझना भी कहानीकार की हैसियत से राकेश के अध्ययन का एक महत्वपूर्ण पहलू है।

यहाँ आकर जिस बात की ओर सबसे पहले ध्यान जाता है, वह यह है कि राकेश की उस दौर की कहानियां 'वस्तु' या प्रविधि किसी भी रूप में कोई असाधारण आकार लेकर नहीं आतीं। इस रूप में वह अपने पूर्ववर्ती जैनेन्द्र या अज्ञेय से सर्वथा भिन्न हैं जो नये आघात के साथ हिन्दी कहानी में प्रविष्ट हुए थे। तब यह स्पष्ट है कि हिन्दी कहानी की कथा-याता में इस मोड़ पर राकेश की कहानियों ने यदि अपना कोई विशिष्ट बिम्ब अंकित किया तो उसका कारण प्रत्यक्षतः प्रभावित करने वाले तत्वों के अलावा कुछ और था। इस स्थल पर राकेश की कहानियां कई स्तरों पर तत्कालीन ऐतिहासिक संदर्भ से जुड़ी हुई दिखायी पड़ती हैं। ऊपर जिन उत्सव घोषित कहानियों का नाम लिया गया है वे सभी कथा प्रविधि तथा वस्तु व्यंजना दोनों ही दृष्टियों से हिन्दी में 'एक शुरूआत' की कहानियाँ हैं और उस दौर के अन्य कहानियों पर भी गौर करें तो पता चलेगा कि तब की हिन्दी कहानी एक प्रकार की व्यक्ति परकता तथा सामाजिक आवेश के दो छोरों पर स्थित थी, बल्कि इसी आधार पर उसका वर्गीकरण भी किया जाने लगा था। जो परम्परा विश्वविद्यालय प्राध्यापन तथा पाठ्यक्रमों में आज तक चल रही है और हिन्दी कहानी का क्रमशः एक 'असामान्य चेहरा' बनने लगा था। राकेश की कहानियों के साथ कहानी को एक सामान्य धरातल पर ले आने वाली परम्परा का प्रारम्भ होता है और जिसका सर्वोत्तम रूप केवल राकेश की कहानियों में दिखायी पड़ता है, अनुभूतियों के एकान्त को केन्द्र बनाकर मनोवैज्ञानिक ग्रंथियों का उद्घाटन करने वाली कहानी एक ओर जिसका सबसे सपाट रूप इलाचन्द जोशी की कहानियाँ में दिखायी पड़ा दूसरी ओर प्रगतिशीलता के सामाजिक आवेश की कहानियाँ थीं। मोहन-राकेश की कहानियों में इन दोनों का अधिक सहज तथा सामान्य भूमि पर समीकरण दिखाई पड़ता है-उन्होंने हिन्दी कहानी में किसी धमाके के साथ प्रवेश नहीं किया- 'नाटकों के क्षेत्र में वे अपेक्षाकृत धमाके के साथ अवश्य आये' यही कारण है कि जिन्हें हम ''राकेश की कहानियों'' के नाम से पहचानते हैं उनका 'चरित्र' धीरे-धीरे अपेक्षाकृत देर से बना। राकेश ने प्रारम्भ में अपने समय की प्रचलित लगभग सभी प्रवृत्तियों से प्रभावित होकर पर्याप्त सफल तथा निर्वाहपूर्ण कहानियाँ लिखी, वह शुरू से अपनी कोई अलग तथा विशिष्ट पहचान लेकर नहीं आये। उनके पहले कहानी संग्रह 'इंसान के खण्डहर' की कहानियों में और बाद की भी अनेक कहानियों में यह प्रभावित संवेदना आसानी से दिखायी पड़ी जायेगी। इसका एक कारण यह भी था कि मोहन राकेश ने कहानियों के क्षेत्र में किसी गंभीर अवधारणा के साथ प्रवेश नहीं किया। इस सम्बन्ध में स्वयं मोहन राकेश का यह वक्तव्य पर्याप्त उपयोगी प्रतीत होगा-''हम सब..... कॉफी हाउस से लेकर साहित्य तक हर जगह को सिर्फ जुमलेबाजी का अखाड़ा मानते थे .... उस सारे साहित्य को बेकार समझते थे जिसमें जुमलेबाजी का चटखारा न हो .... इसलिए यह अस्वभाविक नहीं था कि अपने ढंग से हम भी अपनी कहानियों में जुमलेबाजी का अभ्यास करते।'' अपनी कहानियों के एक दौर के बारे में राकेश का यह अत्यन्त ईमानदार वक्तव्य है और ''जुमलेबाजी का चटखारा'' लेने वाली राकेश की कहानियाँ ही क्रमशः उनकी कहानियों की नाटकीय स्थितियों तथा नाटकों के प्रखर चुस्त संवादों में बदल गयीं। ''जुमलेबाजी'' का एक अच्छा उदाहरण ''जानवर और जानवर'' संग्रह में

संग्रहीत कहानी 'मिस्टर भाटिया' है। इस कहानी से ऐसी जुमलेबाजी का एक उदाहरण यहाँ लिया जा सकता है।

'शाम को जब मैं लौटकर आया तो भाटिया कालर–टाई लागये, शान से बैठा सेन्ट्रल बैंक की चेकबुक में से बड़ी–बड़ी रकमों के चेक काट रहा था। मुझे देखकर उसने बड़े आदमियों के अंदाज में बैठने का संकेत किया और एक हजार का चेक मेरे नाम लिखकर हस्ताक्षर करके मेरी ओर बढ़ा दिया।

''क्यों भाटिया साहब, नशे के लिए पैसे आज कहाँ से मिल गये ?''

''मैंने नशा नहीं लिया, मैं बिल्कुल होश में हूँ'',

''तब तो मामला और भी खतरनाक है।'' मै बैठ गया। भाटिया ठ्हाका मारकर हँसा और बोला, ''चेक पर तारीख भी देखी है।'' मैंने देखा कि चेक पर पूरे पचास साल बाद की तारीख डाली गई है।

यह पूरी कहानी ऐसे ही चुस्त जुमलों और फिकरेबाजी से भरी हुई है, किन्तु प्रायः रचनाकार के विकास में एक स्थिति ऐसी भी आती है, जब उसकी सहज तथा स्वाभाविक संवेदना और उसकी महत्वकांक्षा में 'अन्तराल' आ जाता है, राकेश की कहानियों के विकास में इन दोनों तटों से टकराहट देखी जा सकती है, शुरू में राकेश ने हर रंग की कहानियाँ लिखी, जिन्हें संवेदना की दृष्टि से भावुकतापूर्ण मानवतावाद कीहानियाँ कहा जा सकता है, उनकी पर्याप्त चर्चित कहानियाँ 'काला रोजगार', 'आर्द्रा' व 'जानवर और जानवर' में यही भावुकतापूर्ण मानवतावाद प्रधान है जिनमें एक साथ शरतचन्द्र तथा प्रेमचन्द की परम्परा काम करती हुई दिखायी पड़ती है। 'काला रोजगार' की लड़की साधना अपने शरीर का रोजगार करके अपने निकम्भे, बीमार और सनकी भाई का पोषण करती है और कहानीकार की मानवता उसके इस काला रोजगार की प्रति पाठक को भावकुल बनाती है, इसी तरह 'आर्द्रा' की मां के स्नेह को अत्यन्त आर्द्र होकर व्यक्त किया गया है। जानवर और जानवर' में भारत को उपनिवेश बनाकर रहने वाली जाति के दम्भ तथा धार्मिक ढोंग को उद्घटित किया गया है। तथाकथित अंगरेजियत का पोषण करने वाली शिक्षा संस्थाओं का दुराचार, जर्जर–परिवेश, अत्यन्त स्फूर्तिपूर्ण शैली में इस कहानी में व्यक्त हुआ है। राकेश की कहानियों के विकास के एक विशेष स्तर का प्रतिनिधित्व यह कहानी करती है। राकेश तब तक बिना किसी ठोस तथा स्पष्ट सामाजिक सूत्र के कहानी लिख ही नहीं सकते थे। यही कारण है कि अपनी समस्त चुस्त वर्णन क्षमता के बावजूद कहानी में एक स्थूल सामाजिक सूत्र रीढ़ बनाकर पेश किया गया है! अंग्रेजी स्कूल का अंगरेज पादरी संचालक जिस तरह विलायती कुत्ते और देशी कुत्ते में फर्क रखता है। चाटुकार अध्यापक दिनोदिन फलते–फूलते हैं, युवती अध्यापिकाएँ अपने शरीर का दानकर सुविधाएँ प्राप्त करती हैं, विलायती कुत्ता दुलार पाता है, देशी कुत्ते को गोली से मार दिया जाता है और गिरजे की प्रार्थना में शामिल न होकर विरोध व्यक्त करने वाले उसके देशी मालिक को नौकरी से बर्खास्त कर दिया जाता है। राकेश की यह कहानी न केवल अपने ऐतिहासिक महत्व तथा बारीक वर्णन क्षमता के कारण स्मरणीय है, बल्कि अनुभूतियों तथा ठोस सामाजिक सन्दर्भ के बीच एक जीवन्त तथा रचनात्मक सेतु भी निर्मित करती हैं। किन्तु यह सेतु वहाँ संचालक पादरी तथा बर्खास्त किये जाने वाले अध्यापक के बीच स्थूलतापरंक संवादों के द्वारा कहानी का अन्तर्निहित अर्थ सतह पर सपाट बनाकर तैरा दिया जाता है।

पाल का गला ऐसे कांप रहा था जैसे वह कोई बहुत सख्त बात कहने जा रहा होः ''पादरी, हम जो गिरजे में प्रार्थना करते हैं उसका कोई मतलब भी होता है?.....मेरा मतलब है पादरी, कि रात को रात हम गरीब जानवरों को गोली से मारते हैं और सुबह गिरजे में जाकर उनकी रक्षा के लिए ईश्वर से प्रार्थना करते हैं। इससे कुछ मतलब निकलता है?''

राकेश की कहानियों के विकास में यह सेतु अक्सर बनता और टूटता रहा है। कभी वे नितान्त व्यथितपरक विषयों तथा अनुभूतियों पर प्रतीकात्मक तथा सांकेतिक कहानियाँ लिखते रहे हैं (जैसे–सेफ्टीपिन', 'जख्म' और 'पांचवे माले का पैलैट' कभी और घोर सामाजिक आवेश की कहानियाँ–जैसे 'परमात्मा का कुत्ता', 'वासना की छाया में' और 'घर का आखिरी सामान'। लेकिन संदर्भ चाहे वैयक्तिक हो या सामाजिक, राकेश की कहानियों की लाश एक सीमा के बाद रुक सी जाती हैं वह अधिक कहरे स्तरों तक उतर कर न तो सामाजिक सन्दर्भो की तालाश करते हैं और न वैयक्तिक सन्दर्भो की। उनकी कहानियों का मुख्य तथा मूल स्वर सफल निर्वाहपूर्ण कहानियों का ही बना रहता है। यही कारण है कि विषय तथा प्रविधि की दृष्टि से राकेश की कहानियों में जितनी विविधता और विस्तार प्राप्त होता है उतना उनके किसी भी अन्य समकालीन में नहीं। आश्चर्य नहीं कि राकेश को एक जमाने में हिन्दी के आलोचक 'डाक बंगले का कहानीकार' कहते थे। अपनी हर यात्रा, हर पडाव और प्रतीक्षा को वह कहानी बना देने में अत्यन्त कुशल थे। उनकी कहानियों में व्यक्त विश्व को अगर दिमागी बिम्बों या महानगर का बस स्टेंड, पहाड़ी–डाक बंगला, समुद्र तट, होटलों के कमरे, रेलवे कम्पार्टमेंट, कुलियों क्लर्को तथा बोहिमियन बुद्धिजीवियों के 'मिले जुले चेहरे' सामने आते हैं। सामाजिक समस्याओं तथा सम्बन्धों से क्रमशः मुक्त होते हुए राकेश वैयक्तिक अन्तर की ओर बढ़ते दिखायी देते हैं।

उनकी कहानियाँ उत्तरोत्तर न केवल वैयक्तिक बल्कि अधिकाधिक व्यक्तिगत होने लगती हैं। उनका 'द्वन्द्व' या 'तनाव' परिवेश से कटे लोगों की अस्तित्ववादी 'ऊब और आतंक' परिवर्तित होने लगता है। यह प्रवृत्ति 'एक और जिन्दगी' तथा 'एक ठहरा हुआ चाकू' जैसी कहानियों में बहुत स्पष्ट हो जाती है, हाँलाकि राकेश वास्तविक अर्थ में अस्तित्ववादी कथाकार कभी नहीं रहे। अकेलेपन, ऊब ओर अजनबीपन को राकेश में अधिक व्यापक सन्दर्भो में अपने उपन्यासों तथा नाटकों में उठाया–विशेष रूप से अपने उपन्यास 'न आने वाला कल' तथा नाटक 'आधे–अधूरें' में। किन्तु अस्तित्ववादी प्रश्नों को ठीक–ठाक अस्तित्ववादी सन्दर्भो में न उठा पाने के पीछे दो कारण प्रमुख थे। एक तो राकेश अपनी कहानी के 'कटाव' को सीधे–सीधें एक सामाजिक 'कटाव' के रूप में ही रखना तथा व्यक्त करना चाहते थे। 'यह अकेलापन है। और उसकी परिणति भी किसी तरह के 'सिनिसिज्म' में नहीं झेलने की निष्ठा में है। व्यक्ति और समाज को परस्पर विरोधी एक दूसरे से भिन्न और आपस में कटी हुई इकाइयाँ न मानकर उन्हें एक ऐसी अभिन्नता में देखने का प्रयत्न है जहाँ व्यक्ति समाज की विडम्बनाओं का और समाज व्यक्ति की यत्रणाओं का आइना है।

और दूसरी ओर, वह अस्तित्ववादी प्रश्नों से उस स्तर पर जाकर जूझ नहीं पाते थे, जिस स्तर पर अस्तित्ववादी चिन्तक मानव–नियति से जुड़े हुए प्रश्नों से जूझते या उन्हें झेलते हैं। राकेश की परवर्ती महानियों का अकेलापन, ऊब और संत्रास। बहुत कुछ एक रोमानी स्तर पर ही घटित होता है और उनमें एक प्रकार की आत्मीयता के साथ–साथ आत्म–औचित्य सिद्ध करने की कोशिश भी शामिल रहती है। 'ग्लास टेंक', 'एक और जिन्दगी' तथा 'एक ठहरा हुआ चाकू' आदि में जो 'बोहिमियनिज्म है वह अस्तित्ववादी 'नासिया' तथा 'अजनबीपन' से बहुत

अलग किस्म का है। उनमें यंत्रणाओं का एक रोमानी स्वीकार तथा व्याख्या है। 'जख्म' में जिस व्यक्ति की बोहिमियम दिनचर्या अंकित है, वह आसानी से आरोपित अकेलेपन पर तीखा व्यंग्य बन सकती थी, लेकिन लेखक एक स्तर पर जिन्दगी के प्रति उसके 'सिनिकल' रुख को 'वीरपूजा' के भाव से देखता है।

राकेश की इधर की कहानियों में ''सड़क के बीच चलने का यह साहस'' धीरे–धीरे मानवीय रिश्तों के सवाल से अधिकाधिक उलझता जा रहा था। राकेश के बाद की प्रायः सभी कहानियाँ, उपन्यास और नाटक (आधे–अधूरे) मानव सम्बन्धों को पूरी तरह न जी पाने, उनकी असंगतियों तथा विसंगतियों को समझने, समझाने में संलग्न दिखाई पड़ते हैं। रिशतों के ये 'सवाल' खास तौर पर पुरुष और स्त्री के सम्बन्धों में पैदा होते हैं, 'एक और जिन्दगी' का नायक स्त्री से अपने सम्बन्धों के बारे में एक के बाद एक निर्णय लेता है और हर बार अधिकाधिक अकेला स्त्रियों द्वारा और प्रकारान्तर से अपने परिवेश के द्वारा छले गये एक पुरुष की यंत्रणा का स्वर है। लेकिन राकेश की इस उत्सव घोषित कहानी में, 'आधे–अधूरे' जैसे नाटक में भी, इस अधूरेपन की यंत्रणा का पूरा श्रेय गोया स्त्री को ही दिया जाता है। वही चाहे तो उसकी जिन्दगी को भरा पूरा तथा सदाबहार बना सकती है अथवा उसी से पीड़ित होकर नायक, वन–वन, पर्वत–पर्वत, उदास गुमसुम घुमता तथा उसके गम को शीर्शे में उतारता रहता है। यहां एक तो स्त्री के प्रति पूर्वाग्रह युक्त दृष्टिाकोण परिलक्षित होता है और दूसरी ओर यह दृष्टिकोण घोर रोमांसवादी बन जाता है। यही वजह है कि राकेश की इन कहानियों में मानवीय सम्बन्धों को लेकर पैदा होने वाला, निर्वासन, तात्विक धरातल पर अस्तित्व की ग्रंथियों को नहीं सुलझाने जाता। वे इस निर्वासन को ही विभिन्न आयामों में–प्रतिबिबित करता हुआ उनका 'रोमांस' उप–जाता है। अतः आश्चर्यजनक नहीं है कि राकेश की रचनाएँ एक 'पापुलर टाइप' में ढलकर ही अपनी पूर्णता प्राप्त करती थीं।

इसलिए विकास क्रम के पूरे परिप्रक्ष्य को ध्यान में रखकर उनकी कहानियों का अध्ययन किया जाय तो भाषा के रचाव तथा शिल्प की बारीकी के बावजूद राकेश की कहानियों में एक प्रकार का 'डिजेनेरेशन' दिखाई पड़ेगा। चाहे भावुकतापूर्ण मानवतावाद से परिचालित होकर ही सही–लेकिन उनकी पहले की कहानियों में एक दायित्वपूर्ण स्फूर्ति तथा स्वाभाविकता मिलती है जो क्रमश, आत्म केन्द्रित होती हुई एक गढ़े हुए, इसे सुलझाने की कोशिश में वह वैयक्तिक तथा सामाजिक दोनों स्तर पर अपनी कहानियों में जो ''पापुलर अपील'' पैदा करना चाहते थे.... .....उसने उनके पूरे साहित्य में उन्हें पापुलर तथा अवॉगाई के बीच एक तीसरा व्यक्तित्व दे दिया था जो शायद राकेश को वांछित नहीं था, किन्तु जिससे निकल पाना राकेश के लिए आसान नहीं रह गया था। विभिन्न विधाओं में अपनी 'तलाश' लेकर भटकने की बेचैनी इसी सन्दर्भ से जुड़ी थी।

प्र. कहानी तत्वों के आधार पर 'मलवे के मालिक' की समीक्षा कीजिए –

उत्तर – कहानी के संबंध में भारतीय ओर पाश्चात्य विद्वानों द्वारा अनेक परिभाषाएं प्रस्तुत की गई है एडगर एलन पो के अनुसार –'' कहानी एक प्रकार का वर्णनात्मक गद्य है जिसे पढ़ने में आधे घंटे का समय लगता है।'' हडसन के अनुसार – ''घटनात्मक इकहरे चित्रण का नाम कहानी और साहित्य के सभी अंगों के समान रस आवश्यक गुण है।'' कहानी के विषय में प्रेमचंद जी की परिभाषा को सर्वांगपूर्ण माना जा सकता है–''गल्प ऐसी रचना है जिसमें जीवन के किसी एक अंग या किसी एक मनोभाव को प्रदर्शित करना ही लेख का उद्देश्य रहता है।

उसके चरित्र, उसकी शैली, उसका कथा विन्यास सब उसी एक भाग को पुष्ट करते हैं।'' अतः स्पष्ट है कि कहानी मानव जीवन के किसी एक पक्ष का सरस चित्रण है।

कहानी और नाटक के क्षेत्र में जाना–पहचाना नाम है मोहन राकेश। मोहन राकेश ने विभिन्न परिस्थितियों में मानव जीवन के टूटन, बिखराव पर काफी साहित्य रचा है किन्तु यदि उनकी कहानियों की बात करें तो दो प्रकार की कहानियाँ देखने को मिलती है। एक आदर्शवादी और दूसरे यथार्थवादी। आदर्शवादी कहानियों में वे प्रेमचंद से जुड़ते नजर आते हैं। मलवे का मालिक, मंदी, जंगला उनकी ऐसी ही कहानियाँ है इसमें यथार्थ का आभास भी है तो दूसरी ओर उनकी कटु यथार्थवादी कहानियों में रोटी, नये बादल, परमात्मा का कुत्ता आदि कहानियाँ है जिनमें वे सामाजिक विषाक्ता एवं विरूपता का चित्रण करते हैं। जीवन की उलझनों को लेकर भी उन्होंने कई कहानियाँ लिखी है जैसे– जानवर और जानवर, मिसपॉल, ग्लास टेंक, फौलाद का आकाश इसमें जीवन मूल्यों का प्रश्न प्रमुख है इस दृष्टि से हम कह सकते हैं कि मोहन राकेश चतुर्दिक प्रतिमा के साहित्यकार हैं।

उनकी कहानी मलवे का मालिक समाज की ऐसी ही एक आदर्शवादी कहानी है जिसमें देश के विभाजन के दौर की पीड़ा का वर्णन है। कहानी तत्वों के आधार पर मलबे को मालिक कहानी की समीक्षा इस प्रकार है –

1. **कथानक** –कहानी का कथानक उस दौर की घटना है जब अमृतसर और लाहौर के नाम पर लोगों के बीच विभाजन हुआ। कई लोग अपने परिवार को दंगों में खोकर अमृतसर जाने को विवश हुए। मुस्लिम लाहौर में और हिन्दु, सिक्ख अमृतसर में आ बसे। ऐसे ही एक मुस्लिम परिवार की वेदना को लेखक ने इस कहानी के माध्यम से पाठकों की समझ को प्रस्तुत किया है। गनी मियाँ जो किन्हीं कारण से उस वक्त लाहौर से बाहर होने की वजह से बच गये किन्तु उसका सारा परिवार विभाजन की आड़ में चल रही नफरत की आँधी की भेंट चढ़ गया। गनी मियाँ एक सीधा–सादा व्यक्ति है। बस्ती में उसके सभी के साथ अच्छे ताल्लुक हैं इसलिए उसका शक किसी पर नहीं जाता वह बेचारा इसी भ्रम में है कि उसके बहु–बेटे और पोतियाँ दंगाईयों के हाथ मारे गए हैं। जबकि सच्चाई यह है कि उनके ही निकट का भरोसेमंद आदमी रक्खे पहलवान ने मकान के लोभ में उसके परिवार का सफाया किया है। साढ़े छ : बरस बाद गनी मियाँ जब वापस लाहौर लौटते हैं तो उन पुरानी यादों को ताजा करने के लिए पुनः पुरानी बस्ती में अपने मकान पर आते हैं जो अब मलबे में बदल चुका है अब जिसका मालिक वही उनके बेटे का कातिल रक्खे पहलवान है। मोहल्ले के सारे लोग इस हादसे से परिचित हैं सिवा गनी मियाँ के अतः गनी मियाँ को देखते ही उन्हें अंदेशा होता है कि गनी मियाँ हकीकत जान गए हैं अब एक बार फिर यहाँ हंगामा होगा जबकि होता यह है कि गनी मियाँ रक्खे पहलवान से मिलते है तब उसकी हालत किसी रंगे हाथों पकड़े गए चोर की भांति होती है। गनी मियाँ फिर भी यही सोचते हैं कि रक्खे पहलवान उनके परिवार के अधिक निकट था अतः उनकी पीड़ा से दुखी होकर उसका यह हाल हुआ है। वह उल्टे उसे तसल्ली देकर अपने शहर लाहौर लौट जाते हैं।

समीक्षा – प्रस्तुत कहानी का कथानक यथार्थवादी घटना पर आधारित है। जिसके माध्यम से कहानीकार ने समाज में परस्पर बढ़ती धर्मान्धता, वर्गवाद, क्षेत्रवाद के नाम पर लोगों की स्वार्थभावना, अपनों से छल, धोखा देकर सीधे–सादे लोगों को तबाह करना आदि घटनाओं को एक सूत्र में पिरोया हैं ये समस्त घटनाएं समकालीन है अतः पाठकों के अधिक करीब होने से कथानाक के महत्व का प्रतिपादित करती हैं। साथ ही पाठक के मन में एक चिंतन प्रस्तुत

करती है कि क्या इस तरह की प्रवंचना उचित है....? क्या किसी के साथ इस तरह के विश्वासघात की कोई सजा नहीं होनी चाहिए....? जिस तरह पूरा अमृतसर जानता है कि गनी मियाँ के परिवार की किसी हादसे में मौत नहीं हुई थी बल्कि वह रक्खे पहलवान की साजिश का शिकार हुआ था किन्तु आतंक के भय से किसी ने भी इसके खिलाफ आवाज नहीं उठाई। आम जीवन में हम भी कई अनाचार और अत्याचार देखकर खामोश रहते हैं केवल आतंक के डर से । इस कहानी के माध्यम से लेखक ने यह चिंतन समाज को दिया है कि इस तरह की खामोशी समाज में व्यभिचार को बढ़ावा देती है। इस दृष्टि से कहानी 'मलवे का मालिक' एक सार्थक एवं प्रासंगिक कहानी सिद्ध होती है।

2 कथोपकथन – कथोपकथन अर्थात संवाद किसी भी कहानी के प्राण होते हैं क्योंकि कहानी पठनीय विद्या है। पात्रों द्वारा कहे गए संवाद ही कहानी को जीवंत और रोचक बनाते हैं। संवाद जितने छोटे और प्रभावशील होंगे कहानी उतनी ही सार्थक होगी, मोहन राकेश मूलतः नाटककार है अतः संवाद कला कौशल में उन्हें महारथ हासिल है। उनके रचे कथोपकथन न केवल संक्षिप्त बल्कि गहरे अर्थ वाले होते हैं, उनमें सहजता बनी रहती है। यथा –

''सब कुछ बदल गया, मगर बोलियाँ नहीं बदली।''

''चुपकर, मेरा वीर ! रोएगा तो तुझे वह मुसलमान पकड़कर ले जाएगा, मैं वारी जाऊँ चुप कर!''

जब गनी मियाँ अमृतसर की अपनी पुरानी गलियों में पहुँचे तो लोग उन्हें हैरत की नजर से देखते हैं तो वे कहते हैं,

'' हाँ! बेटे मैं तुम लोगों का गनी मियाँ हूँ, चिराग और उसके बीवी बच्चे तो नहीं मिल सकते, मगर मैंने कहा कि एक बार मकान की सूरत ही देख लूँ।''

समीक्षा – आलोच्य कहानी में दिए कथोपकथन परिस्थितियों को ध्यान में रखकर गढ़े गए हैं। सभी संवाद पात्रों के अनुकूल एवं सार्थक सिद्ध होते है। इस दृष्टि से हम कह सकते है कि कहानी में कथोपकथन का समायोजन कहानीकार ने बड़े ही उपयुक्त रूप में किया है। संवादों की दृष्टि से कहानी रोचक एवं प्रभावशाली है।

3. चरित्र चित्रण – कहानीकार कहानी में अपनी बात एवं विचारों को संवादों के माध्यम से पाठकों तक पहुँचाता है और इन संवादों को व्यक्त करने का जरिया होता है चरित्र अर्थात पात्र। घटना एवं परिवेश के अनुसार लेखक पात्रों का निर्माण करता है। प्रस्तुत कहानी में दो ही प्रमुख पात्र है। पहला गनी मियाँ दूसरा रक्खा पहलवान, संपूर्ण कहानी इन्हीं दो पात्रों के माध्याम से आगे बढ़ती है। गनी मियाँ जो कहानी का नायक एवं आदर्शवादी पात्र है। अपने साथियों पर उसका भरोसा है। वह घटनाक्रम से अंजान है। इसीलिए कहता है –

''रक्खे! 'उस पर तेरा बहुत भरोसा था। कहता था कि रक्खे के रहते कोई मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। मगर जब आनी आई, तो रक्खे के रोके नहीं रूक सकी।''

ग्नीमियाँ स्वयं को ही इस हादसे का गुनहगार मानते हैं, वे बार–बार इसी अफसोस में जीते हैं और कहते हैं कि–

''हाँ बेटे ! मेरी बदबख्ती थी कि पहले अकेला निकलकर चला गया। यहाँ रहता तो उनके साथ मैं भी ..... और कहते-कहते उसे अफसोस हो आया।''

वही रक्खे पहलवान छल प्रपंच से भरा व्यक्तित्व है। जिसके लिए लेखक कहता है -

''रक्खे मरदूद घर न घाट का, इसे किस माँ-बहन का लिहाज था। जिस रक्खे पर गनी मियाँ और चिरागदीन इतना भरोसा करते थे उसने उसी परिवार को तहस-नहस कर उनके घर को मलवे के ढेर में तब्दील कर दिया। अब उस मलवे पर भी अपना अधिकार जमाए बैठा है।''

समीक्षा - जीवन ऐ लंबी यात्रा है इसके विविध पड़ावों में सच्चे और कुटिल पात्रों से बराबर सामना होता रहता है और हम कभी इनसे लाभान्वित होते हैं तो कभी छले जाते हैं। यही जीवन की सच्चाई है कुल मिलाकर कहानी में कहानीकार ने जीवन के दोनों पक्षों से अवगत कराने हेतु आदर्श एवं यथार्थ का चित्रण गनी मियाँ और रक्खे पहलवान के माध्यम से किया है। दोनों ही पात्र अपने चरित्र को चित्रित करने में सफल रहे हैं। जहाँ गनीमियाँ पाठकों की सच्ची संवेदना समेटने में सफल रहे हैं, वही रक्खे पहलवान लोगों के तिरस्कार का पात्र बना है।

इस दृष्टि से हम कह सकते हैं कि कहानी के पात्रों ने अपने चरित्र का निर्वाह सफलता पूर्वक किया है। चरित्र चित्रण के आधार पर कहानी सफल सिद्ध हुई है।

4. देशकाल और वातावरण - कहानीकार अपनी विषयवस्तु किसी न किसी परिवेश से उठाता है वह शहरी हो या ग्रामीण, पढ़े- लिखे सभ्य समाज से हो या फिर अनपढ़ असभ्य समाज से। कहने का तात्पर्य प्रत्येक कहानी का अपना परिवेश होता है। प्रस्तुत कहानी अमृतसर की गलियों से आरंभ होती है जहाँ गलियों में महिलाएं पीडा डाल कर बैठी हैं। बच्चे खेल रहे हैं। यह दृश्य अमृतसर की गलियों का चित्र हमारे समक्ष चित्रित कर देता है। वहीं गनी मियाँ अपने घर को देखने साढ़े छः साल पश्चात लौटते हैं। इस अंतरल में वे देखते हैं - सब कुछ बदल गया, मगर बोलियाँ नहीं बदली।

अमृतसर का बाज़ार आज भी वैसा ही उपेक्षित है जहाँ बाँस और शहतीरों की ही दुकानें थी जो नफरत की आग में जल गई हैं। जैसा कि कहानी का शीर्षक है 'मलवे का मालिक' लेखक ने कहानी में मलवे का सुंदर चित्रण किया है।

''मलवे में अब मिट्टी ही मिट्टी थी, जिसमें जहाँ-तहाँ टूटी और जली हुई ईटें फंसी थी। लोहे व लकड़ी का सामान उसमें से कभी का निकाल लिया गया था। केवल जले हुए दरवाजे का चौखट न जाने कैसे बचा रह गया उस चौखट को पकड़कर गनी मियाँ बिलखने लगा,

''ओए ! ओए चिरागदीना!''

बरसों पुरानी चौखट जिसकी लकड़ी बुरी तरह भुरभुरा गई है गनी के सिर पर उसके कई रेशे झड़कर बिखर गए, कुछ रेशे गनी की टोपी और बालों पर आ गिरे लकड़ी के रेशों के साथ एक केचुंआ भी नीचे गिरा जो गनी के पैर से छः आठ इंच दूर नाली के साथ बना पटरी पर सरसराने लगा। वह अपने लिए सुराख ढूँढता हुआ जरा सा सिर उठाता मगर दो एक बार सिर पटककर और निराश हो दूसरी ओर मुड़ जाता।

समीक्षा – इस प्रकार लेखक ने कहानी में देश काल और वातावरण को साकार कर दिया है। यह वातावरण पाठकों को कहानी को समझने में सहयोग प्रदान करता है। पाठक कुछ पल कहानी के माध्यम से अमृतसर की गलियों में जाकर तबाही के उस मंजर का मानो साक्षी बन जाता है। साथ ही यह विनाशकारी मानव निर्मित घटनाएं समाज को भीतर ही भीतर आंदोलित करती है। कहानी अपने परिवेश को चित्रित करने में पूर्णतः सफल रही हैं।

5. भाषाशैली– भाषा सदैव से ही भावों की सहचरी रही है। लेखक, कहानीकार की कल्पना को शब्द एवं कल्पना के जरिए पाठकों तक पहुँचाते हैं। इसके लिए लेखक को यह सावधानी रखनी होती है कि वह किस समय क्या सोच के साथ अपनी अभिव्यक्ति दे रहा है वह उसी रूप में पाठकों तक पहुंचे तभी एक रचनाकार की रचना सफल होती है इसमें भाषा ही उसका सशक्त हथियार होती है। इसके लिए लेखक को बहुत सोच विचार कर भाषा का प्रयोग करना होता है।

प्रस्तुत कहानी में मोहन राकेश के समक्ष जो वातावरण था उसके लिए उन्हें गनी मियाँ को आदर्श चरित्र एवं रक्खे पहलवान को प्रपंची पुरूष के रूप में दर्शित करना था। वही मलवे का चित्र भी प्रभावशाली बनना आवश्यक है जिसके लिए लेखक ने सठीक भाषा का चुनाव किया उनकी भाषा चित्र ही नहीं चरित्र को भी रेखांकित करती है यथा – ''उसके घुटने पाजामें से बाहर को निकल रहे थे ..... शेरवानी में तीन चार पैबंद लगे थे।'

''एक दुबला पतला बुड्ढा मुसलमान ही उस वीरान बाजार में आया और वहाँ की नई और जली हुई इमारतों को देखकर जैसे भूल–भूलैया में पड़ गया।''

वहीं रक्खे पहलवान जो शहर का दादा है, चिरागदीन से हाथापाई करते हुए कहता है – ''चीखता क्यों है, भैणके ..... तुझे पाकिस्तान दे रहा हूँ ले।''

अर्थात सभ्य–असभ्य दोनों के लिए ही लेखक ने अनुकूल भाषा का प्रयोग किया है। साथ ही उर्दू एवं आचंलिक भाषा जैसे खँखारता, चहेमगोइयां, तुंरदार, ख़ामख़ाह, खुजलाया, तकसीम, बदबख्ती, भैणके, खानातलाशी, चुन–चुनाहट शब्दों का प्रयोग किया है। वैसे ही गनी मियाँ के लौट जाने पर मलवे, रक्खे का भैंस को हटाना–तत्– तत्– तत् मलवे से आती आवाज .....च्यु .....च्यु.....चिक्...चिक्....चिक् .....चिर्र् र्र् र् र् कुत्ते का भौंकना ..... भ्हँ . ....भ्हँ .... भ्हाँ .... भ्हाँ..... कहानी में प्रभाव उत्पन्न करता है।

समीक्षा – लेखक ने कहानी में चाहे घटना हो, पात्र हो अथवा, जीव सभी के लिए यथायोग्य भाषा का प्रयोग कर कहानी की रोचकता को बनाए रखा है। अतः भाषा शैली सरल, सरस होने के साथ–साथ अपना प्रभाव बनाए रखने में सफल रही है।

कहानी 'मलवे का मालिक' मानव की उस कामान्धता को दर्शाती है जहाँ रक्खा पहलवान मकान के लोभ में चिरागदीन एवं उसके परिवार को नष्ट कर देता है। मकान के मलवे में तब्दील होने पर भी उस पर अपना अधिकार जताए बैठा है। जहाँ इंसान उसकी इस करनी पर मौन है वहाँ कुत्ता उसके इस कृत्य पर उससे एतराज व्यक्त करता है।

6. उद्देश्य – कहानी मानवीय रिश्तों के बीच के छल को उजागर करती है। आज का लघु मानव अपने निहित स्वार्थ के लिए किसी को बड़े से बड़ा दर्द देने में भी नहीं हिचकता। इसका प्रतिनिधि पात्र है रक्खे पहलवान । अंत में लेखक ने कुत्ते के माध्यम से जानवर की वफादारी

को दर्शाया है कि जानवर में इंसान को पहचानने की क्षमता आदमी से अधिक है। कहानी पाठकों के मन में संवेदना उत्पन्न करने में सफल रही है। अतः उद्देश्य की दृष्टि से कहानी मलवे का मालिक एक सफल कृति कही जा सकती है।

7. शीर्षक – कोई भी कहानी अपने कलेवर के कारण अपना शीर्षक तय करती है। प्रस्तुत कहानी में मलवे का स्पष्ट चित्रांकन हुआ है, गनी मियाँ का फलता फूलता मकान रक्खे पहलवान की कुटिलता के कारण मलवे में तब्दील हो गया। तक भी रक्खे पहलवान को चैन नहीं वह उस मलवे पर भी अपना अधिकार जमाकर बैठ जाता है। कहानी अपने शीर्षक के साथ न्याय करने में सफल रही है।

मलवे का मालिक (मोहन राकेश)

व्याख्या

1.''सब कुछ बदल गया बदल गया, मगर बोलियाँ नहीं बदली!'' बुड्ढ़े मुसलमान ने धीमे स्वर में अपने से कहा और छड़ी का सहारा लिए खड़ा रहा। उसके घुटने पाजामें से बाहर निकल रहे थे और घुटनों के थोड़ा ऊपर ही उसकी शेरवानी में तीन–चार पेबंद लगे थे। गली से बच्चा रोता हुआ बाहर आ रहा था। उसने उसे पुकारा, इधर आ बेटे! टा इधर! छेख तुझे चिज्जी देंगे आ! और वह अपनी जेब में हाथ डालकर उसे देने के लिए कोई चीज ढूँढ़ने लगा। बच्चा क्षण भर के लिए चुप कर गया, लेकिन फिर उसनक ओंठ बिसोर लिए और रोने लगा। एक सोलह–सत्रह बरस की लड़की गली के अंदर से दौड़ती हुई आई और बच्चे की बाँह पकड़कर उसे घसीटती हुई गली में ले गई बच्चा रोने के साथ –साथ अपनी बाँह छफड़ाने के लिए मचलने लगा। लड़की ने उसे बाँहों में उठाकर अपने साथ चिपका लिया और उसका मुँह चूमती हुई बोली, ''चुपकर, मेरा वीर! रोएगा तो तुझे वह मुसलमान पकड़कर ले जाएगा, मैं वारी जाऊँ, चप कर!''

शब्दार्थ –

पैबन्द – चीथेड़े का जोड़

चिज्जी – चीज वस्तु

ओंढ बिसोना – मुंह बनाना (नाखुशी जाहिर करना)

मेरा वीर – मेरा भाई

वारी जाऊँ – न्यौछावर होना (खुशी जाहिर करना)

संदर्भ – प्रस्तुत पंक्तियाँ नई कहानी आंदोलन के सशक्त हस्ताक्षर , हिन्दी रंगमंच की दिशा को प्रभावित करने वाले हिन्दी नाटकों को बंद कमरों से बाहर निकाल कर नए दौर से जोड़ने वाले, जीवन और जगत की उलझनों को कहानियों के माध्यम से पाठकों से सांझा करने वाले समृद्ध कहानीकार मोहन राकेश हैं।

प्रसंग – मोहन राकेश का संपूर्ण साहित्य जीवन के यथार्थ को चित्रांकित करता है फिर चाहे वह साहित्य आदर्शवादी हो अथवा यथार्थवादी। प्रस्तुत पंक्तियाँ देश विभाजन के दौरान में हुई क्षति की झाँकी प्रस्तुत करती है। अमृतसर और लाहौर में पंजाबी और मुस्लिम समुदाय के बीच हुई वैमनस्यता से कई परिवारों को अपना घर बार छोड़कर दूसरे स्थान पर जाना पड़ा। दंगाईयों

की कुट्टिल चालों में कई परिवार भी हताहत हुए और उनका बसेरा मलवे के ढेर में बदल गया। ऐसा ही एक परिवार था गनी मियाँ का, जिसे आपसी प्रेम ने छला और यह परिवार बिखर गया रह गए अकेले गनी मियाँ। जो लाहौर में रहते हैं। लाहौर से अमृतसर साढ़े छः बरस बाद आना हुआ था वे अपना घर जिससे उनकी यादें जुड़ी थी उसे देखने का लोभ संवरण न कर पाए। गनी मियाँ अपने घर को उन गलियों को जिनमें काफी लंबा वक्त बिताया है देखना चाहते है। वहाँ के बदले परिवेश का वर्णन इन पंक्तियों में किया हे।

भावार्थ – गनी मियाँ साढ़े सात बरस बाद अमृतसर की उन गलियों में घूमते हैं तो पाते हैं, इतने बरसों में आस–पास का सारा वातावरण बदल गया है। तब के और अब के लाहौर में काफी अंतर देखने को मिल रहा है, अगर कुछ नहीं बदला है तो वो है वहाँ के लोगों की बोलियाँ, आज भी उनका वही अंदाज है। गनी मियाँ छड़ी का सहारा लिए खड़े हैं। एक तो बुढ़ापा ऊपर से अपने पूरे परिवार को खो देने को दर्द, बसा–बसाया व्यवसाय उजड़ने से आर्थिक हालात भी बिगड़ गए हैं परिणाम उनका पजामा घुटनों के पास से फटा है जहाँ से घुटने बाहर निकले दिखाई दे रहे है वहीं शेरवानी में भी जगह–जगह पेबंद लगे हुए है। मगर अपने अतीत की स्मृतियों में खोए गनी मियाँ अपने घर की ओर बढ़े जा रहे है। तभी उन्हें एक छोटा बच्चा रोता हुआ दिखाई दिया। गनी मियाँ ने उसे प्यार से पुचकारते हुए अपने पास बुलाया और लाड़ से उसे कुछ चीज देने का प्रलोभन देते हुए जेब में हाथ डालते हुए सिक्का खोजने लगे बच्चा उनकी बात सुनकर कुछ देर रोना भूल गया किन्तु थोड़ी ही देर में उन्हें अपरिचित जान वह पुनः रोने लगा। तभी उस बालक की बहन दौड़ते हुए आती है और बच्चे को जबरदस्ती घसीटती हुए अंदर ले जाती है। वह अपने मचलते भाई को उस अजनबी व्यक्ति का भय दिखाती है। वह भी जाति, धर्म के आधार पर कि – 'चुपकर मेरा वीर! रोएगा तो तुझे' वह मुसलमान पकड़कर ले जाएगा, मैं वारी जाऊँ चप कर!

गनी मियाँ आहत हो जाते हैं, जातिवाद के नाम पर बच्चों में यह भाव उन्हें दुखी कर जाता है वे मायूस हो जेब से निकाला सिक्का वापस जेब में डाल लेते हैं। उन्हें यह देखकर अफसोस होता है कि नफरत की वो आग जो साढ़े छः बरस पहले यहां लगी थी वह अभी भी बरकार है यहाँ तक कि बच्चों के मन में भी इस तरह की भावना भरी जा रही है। क्षोभ और दुख में गनी मियाँ का गला खुश्क हो गया। अल्ला को याद करते हुए उनके मुंह से सिर्फ इतना ही निकला 'या मालिक'।

विशेष – प्रस्तुत कहानी घटना प्रधान कहानी है 'मलबे का मालिक' जो अपने शीर्षक को सार्थक करती है। कहानी में विभाजन के दौर की समस्या और लोगों के मन में परस्पर एक दूसरे के प्रति जो नफरत की आग पैदा की है उस ओर समाज का ध्यान आकर्षित किया है। भाषा सरल एवं संवेदना से परिपूर्ण है।

2. खिड़कियों में से झाँकने वाले चेहरों की संख्या पहले से कहीं बढ़ गई थी। उनमें चेहमेगोइयाँ चल रही थीं कि आज कुछ न कुछ जरूर होगा ...चिरागदीन का बाप गनी आ गया है इसलिए साढे सात साल पहले की घटना आज खुल जाएगी। +.....+.....+शाम के वक्त चिराग ऊपर के कमरे में खाना खा रहा था, जब रक्खे पहलवान ने बुलाया कि एक मिनट आकर जरूरी बात सुन जाए.....+...+ चिराग हाथ का कौश्र बीच में ही छोड़ कर नीचे उतर आया उसकी बीबी जुबैदा और दोनों लड़कियाँ किश्वर और सुल्ताना खिड़कियों से नीचे झांकने लगी। चिराग ने ड्योरी से बाहर कदम रखा ही था कि पहलवान ने उसकी कमीज के कालर से पकड़कर खींच लिया और उसे गली में गिराकर उसकी छाती पर चढ़ गया। चिराग उसका छुरे

वाला हाथ पकड़कर चिल्लाया+....+...+....जबैदा के नीचे पहुँचने से पहले ही उसने चिराग को पाकिस्तान दे दिया।

शब्दार्थ –मलवा – मिट्टी का ढ़ेर ड्योढ़ी – दहलीज

बादशाह – राजा शागिर्द – प्यादा, चमचा

दबदबा – रूतबा जद्दोजहद – झुमाझटकी

संदर्भ – प्रस्तुत पंक्तियाँ नई कहानी आंदोलन के सशक्त हस्ताक्षर , हिन्दी रंगमंच की दिशा को प्रभावित करने वाले हिन्दी नाटकों को बंद कमरों से बाहर निकाल कर नए दौर से जोड़ने वाले, जीवन और जगत की उलझनों को कहानियों के माध्यम से पाठकों से सांझा करने वाले समृद्ध कहानीकार मोहन राकेश हैं।

प्रसंग – देश के विभाजन की त्रासदी है कि इस हादसे ने अपनों के प्रति मन में भय और शंका को जन्म दे दिया। गनी मियाँ साढ़े सातः बरस बाद पुनः लाहौर से अमृतसर आते हैं तो अतीत की स्मृतियाँ उन्हें अपनी पुरानी गलियों में ले जाती है, किन्तु वहाँ के लोग गनी मियाँ को संदेह की नजर से देखते हैं, महिलाएं बच्चे उन्हें देख घर के भीतर जाकर खिड़कियों से झांक रही हैं गनी मियाँ जो अब तक अपने परिवार के साथ हुए हादसे के कारण से वाकिफ नहीं है। सभी लोग इस संभावना से सहमें हुए हैं कि गनी मियाँ का घटना के कारणों से अवगत होने पर संभव है फिर कोई हंगामा खड़ा हो जाए।

व्याख्या – गनी मियाँ जब मलबे में तब्दील अपने घर पर खड़ा हो अपनी बरबादी पर आँसू बहा रहा है। गली के लोग सहमें हुए अपने घर की खिड़कियों में झांक रहे हैं उनमें सरगर्मियाँ तेज हो रही हैं, दर असल जिस वक्त गनी मियाँ के परिवार के साथ हादसा हुआ था वो वहाँ नहीं थे। आज साढ़े छः वर्ष बाद जब वे लौटे हैं। लोगों को लग रहा है कि आज उस घटना का सारा राज खुल जाएगा कि उनका बेटा चिराग अच्छा भला शाम के वक्त घर में बैठा भोजन कर रहा था। गनी मियाँ और उनका बेटा चिरागदीन बहुत भरोसा करता था रक्खे पहलवान, पर इसलिए उसकी एक आवाज पर खाते से उठ आया। तब हिन्दुओं का उस इलाके पर काफी दबदबा था। रक्खे पहलवान गली का बादशाह था, और चिरागदीन मुसलमान था। चिरागदीन ने ड्योढ़ी से बाहर कदम रखा ही था कि पहलवान ने उसे कमीज के कॉलर से खींचकर जमीन पर पटक दिया और उस पर चढ़ बैठा, चिरागदीन चीखता रहा मुझे बचाओ मुझे बचाओ मगर रक्खे पहलवान को जरा भी तरस नहीं आया बोला – ‘‘चीखता क्यों है, मैंण के टके तुझे पाकिस्तान दे रहा हूँ ले।’’ और चिराग की पत्नी जुबैदा के वहाँ पहुंचने से पहले ही छुरे से कई वार कर उसे पहुँचा दिया पाकिस्तान। लोग सोच रहे थे जब गनी मियाँ को यह सब पता चलेगा तो उनके क्रोध से फिर कोई हंगामा खड़ा होगा।

विशेष – जाति और धर्म के नाम पर बीज बोए जाने की विडम्बना को लेखक ने बड़े ही मार्मिक ढ़ंग से व्यक्त किया है।

3. गनी ने लक्षित किया कि पहलवान के ओंठ सूख रहे हैं और उसकी आँखों के इर्द–गिर्द दायरे गहरे हो आए हैं, तो वह उसके कंधे पर हाथ रखकर बोला, ‘‘ जी हल्का न कर, रक्खिआ! जे होनी थी सो हो गई। उसे कोई लौटा थोड़े ही सकता है..? खुदा नेक की नेकी रखे और बद की बदी माफ करे। मेरे लिए चिराग नहीं तो तुम लोग तो हो, मुझे आकर

इतनी तसल्ली हुई कि उस जमाने की कोई तो यादइगार है। मैंने तुमको देख लिया, तो चिराग को देख लिया। अल्लाह तुम लोगों को सेहतमंद रखे। जीते रही औश्र खुशियाँ देखो और गनी छड़ी पर दबाव देकर उठ खड़ा हुआ। चलते हुए उसने फिर कहा, रक्खे पहलवान, याद रखना।''

शब्दार्थ इर्द–गिर्द – आस–पास

नेक की नेकी, बद की बदी – अच्छे की अच्छाई, बुरे की बुराई

सेहतमंद – तंदुरुस्त

संदर्भ – प्रस्तुत पंक्तियाँ नई कहानी आंदोलन के सशक्त हस्ताक्षर , हिन्दी रंगमंच की दिशा को प्रभावित करने वाले हिन्दी नाटकों को बंद कमरों से बाहर निकाल कर नए दौर से जोड़ने वाले, जीवन और जगत की उलझनों को कहानियों के माध्यम से पाठकों से सांझा करने वाले समृद्ध कहानीकार मोहन राकेश हैं।

प्रसंग – गनीमियाँ का जब रक्खे पहलवान से सामना होता है और गनीमियां जब भी उसे उसी विश्वास और प्रेमभाव से मिलते है इससे रक्खे पहलवान के मन में ग्लानि का भाव आ जाता है जिसे देखकर भी गनी मियाँ उसके भीतर के छल को नहीं समझ पाते उल्टे सोचते हैं कि उसके मन में उनके बेटे चिराग और उसके लिए पीड़ा है।

व्याख्या – जब गनी मियाँ रक्खे पहलवान को बार–बार ये एहसास दिलाते है कि उन्हें और उनके परिवार को तुम पर बहुत भरोसा था किन्तु जो हुआ उसमें तुम्हारा भी कोई दोष नहीं था। मकान को बचाने के लिए पूरे परिवार ने जान गंवा दी। गनी मियाँ के मुँह से यह बातें सुनते ही रक्खे पहलवान का चेहरा ऐसा हो गया मानो कोई चोर रंगे हाथों पकड़ गया हो। वह अपने कमर व जांघों पर दबाव महसूस कर रहा था। पेट और आतंड़ियों में सांस जकड़ती सी लग रही थी। सारा जिस्म पसीने से भीग गया। आँखों के सामने फुलझड़ियाँ सी चलती दिखाई दे रही थी। उसके इस बदले स्वरूप को गनी मियाँ ने महसूस किया किन्तु उसके सही कारण को न जान सका। उनका निश्चल मन यही समझा कि रक्खे पहलवान उनके दुख से दुखी है। उन्होंने उसे सांत्वना देते हुए यही कहा कि जी हल्का न करो, जो होना था सो हो गया, होनी को कोई नहीं टाल सकता। ईश्वर सबका रखवाला है वह अच्छे की अच्छाई और बुरे की बुराई को कभी नजर अंदाज नहीं करता। चिरागदीन नहीं तो क्या हुआ मैं तुम्हें भी चिराग की जगह समझता हूँ। तुमसे मिलकर भी मुझे उतनी ही शांति मिली है। मैं अल्ला से तुम्हारी सलामती की दुआ मागूँगा।

विशेष – लेखक ने आस्थावादी स्वरूप दिखाया है साथ ही व्यक्ति के कर्म गाहे–बजाहे उसके चेहरे से टपक ही पड़ता है। आइना व्यक्ति के कर्मो का दर्पण होता है। दर्शाने का प्रयास किया है।

कहानीकार फणीश्वर नाथ ''रेणु'' कहानीकार के रूप में

आधुनिक हिन्दी कथा–साहित्य में फणीश्वर नाथ 'रेणु' का अभयुदय एक 'धूमकेतु' की भाँति हुआ।

उनकी सर्वप्रथम कहानी 'बटबाबा' कलकत्ता के 'विश्वमित्र' नामक दैनिक समाचार–पत्र में सन 1946 में प्रकाशित हुई थी, पर उनका लेखन कार्य वस्तुतः सन 1953–54 ई. में ही प्रारम्भ हुआ – ''मैला–आँचल'' के साथ ! इस बीच, पूर्णिया (बिहार) जिलान्तर्गत गांव 'औराही हिगना'' में जन्मे इस युवक ने अपनी तरूणाई नेपाल की मुक्ति के लिये भेंट कर दी। एकतंत्री राजशाही के विरोध में कोईराला बन्धुओं के साथ उसने क्रांति का मार्ग पकड़ा। विद्रोही सेना का साथ दिया और विद्रोहियों द्वारा परिचलित 'नेपाल–रेडियो' का सर्वप्रथम डाइरेक्टर जनरल बना। इसी सक्रिय राजनीति में वह शारीरिक रूप से टूट गया। ऐसी परिस्थिति में सन् 1952–53 ई. में क्षत–विक्षत शरीर को लिये, एक थके हुये यौद्धा के रूप में जब वह घर लौटा तो घर वालों तथा मित्रों ने उसे अस्पताल में 'फेंकवा' दिया मरने के लिये, उन्हीं के शब्दों में – ''पर तभी मुझे लतिका मिली, यह जिन्दगी लतिका की ही दी हुई है, जिसके बल पर मैं लेखक बना।'' 32–33 वर्ष की आयु में, लगभग ढाई शतक में उनके कहानी, संग्रह प्रकाशित हुए 'ठुमरी, आदिम रात्रि की महक, अच्छे आदमी, रेणुजी ने अपनी कहानियों को आँचलिक रूप प्रदान कर आधुनिक कहानी–साहित्य में एक नवीन चेतना का प्रचार एवं प्रसार किया जो उन्हें आज भी जीवित बनाए हुए है।

आँचलिकता बनाम आँचलिक रस, आँचलिकता का उद्‌भव, स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत घोषित गणतंत्रात्मक आस्था से सम्बद्ध जिसमें राजनीतिक स्वातंत्रता के पश्चात् व्यक्ति स्वातंत्रय को महत्ता मिली, अब भारतीयता की तलाश का दौर प्रारंभ हुआ। यही कारण है कि आधुनिक कहानी साहित्य के क्षेत्र में सामान्य रूप से, इतिहास–क्रम की यथार्थ परिस्थितियों से निकल कर आया हुआ मनुष्य पुनः कहानी का केन्द्र बनने लगा। जहाँ तक फणीश्वरनाथ रेणु की कहानियों का प्रश्न है, उनकी आंचलिक कहानियों में भारतीयता की तलाश भी एक विशिष्ट स्तर पर सम्पन्न हुई । स्तर की यह विशिष्टता व्यंजना से इतनी संबंद्ध नहीं है, जितनी 'दृष्टि' से है । आंचलिकता इसी धरातल पर एक संदर्शन विजन बन जाती है। ऐसी दृष्टि सर्वथा भारत की सांस्कृतिक विरासत को खोजती है, पर उसके पीछे फूटते हुए, उगते हुए, उस वर्तमान को नहीं भूलती, जो विलक्षण है। यह विलक्षणतन सबसे पहले धर्मनिरपेक्षता– सेक्यूलरिज्म के धरातल पर दिखाई देती है – जहाँ न हिन्दु है, न मुसलमान, न सिख और न ईसाई : चरित्र केवल मानव है सहज मानव यह उनकी कहानियों का बदला हुआ परिप्रेक्ष्य है, जो उन्हें अन्य कहानीकारों से पृथक पंक्ति में ला खड़ा कर देता है।

प्रश्न है कि आँचलिक कहानी–साहित्य किस प्रकार का ओर कैसा साहित्य है ? अथवा क्या केवल आंचलिक भाषा का होना ही आंचलिकता है वस्तुतः आंचलिक कहानी–साहित्य, गत्यात्मकता का साहित्य है। लोक संस्कृति जो आंचलिकता का मेरुदण्ड है, में अधिक संवेदनशीलता और स्पन्दनशीलता होती है। प्रतिक्षण–प्रतिपल उसमें पुराना गलता है और नवीन उफनता है। यह प्रक्रिया उस समय और अधिक तीव्र हो जाती है, जब ऐतिहासिक परिवेश में संक्रान्ति हो रही हो। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में जो कुछ भी घटित हुआ, वह ऐसा ही था। अतः स्वाभाविक है कि आंचलिक कहानी–साहित्य एक सामयिक कहानी रूप है, परन्तु सांस्कृतिक विरासत की खोज और उगते हुए वर्तमान को चिन्हित करने के प्रयास के रूप में उसकी अपनी विशिष्टता है, उपलब्धि है।

भारत अंचल में बसता है वहाँ का परिवेश, वहाँ संस्कृति ही उसे विश्व फलक पर अनूठा साबित करती है। वहाँ के आंचलिक किस्से, कहानियों के आकर्षण का प्रमुख कारण मानवीय संवेदना है। मानवीय संवेदना कथा का प्राण है। संवेदना के साथ जो सबसे बड़ी बात होगी, वह है दृष्टि की। आंचलिक कहानी को वस्तुतः जो भी सराहना मिली है, वह उसमें प्राप्त मानवीय संवेदना के कारण है। आंचलिक कथाओं के चरित्र जिस राग से अवतरित हुए हैं। वह हिन्दी कहानी की अभूतपूर्व संवेदना थी। आज शहरी परिवेश में जहाँ मानवीय संबंध केवल बर्बर, पाशविक शक्तियों और उद्दाम वासनाओं से परिचालित, भौतिकतावाद की परिधि में बंधे आर्थिक वर्ग सम्बन्धों से जकड़े हुए है। वहीं ये आंचलिक परिवेश रागात्मकता का उद्घाटन मानवीय धरातल पर करते हैं, मानवीय संबंधों का यह नया धरातल अपने आयामों में मूलात्मक है और प्रकृति में रागात्मक। आत्मीय संवेदना से आकलित आंचलिक यथार्थ सहज है, रागात्मक से भीगा हुआ है। यथार्थ की यह भीगी पकड़ अपने परिप्रेक्ष्य में मूलतः रोमानी और काव्यात्मक है। फणीश्वर नाथ रेणु की कहानियों में जो आंचलिकता का रोमानीपन अथवा काव्यात्मकता है वह धरती की गन्ध तथा सोंधापन ही है जो वस्तुतः रस का कारण है। मेरी दृष्टि में परिवेश का जीवन्त तथा सांस्कृतिक स्तर पर प्रस्तुतीकरण आंचलिक रस की अनुभूति का पहला आयाम है।

दूसरा स्तर भाषा है। भारत में यह कहावत बड़ी प्रासंगिकता के साथ कही जाती है–'कोस–कोस पर पानी बदले चार कोस पर वाणी' प्रत्येक अंचल की अपनी विशिष्ट बोली है, अपने विशिष्ट अभिव्यक्ति संकेत हैं, जिनके कारण प्रत्येक 5–6 मील पर भाषा का स्वरूप परिवर्तित होता रहता है। आंचलिक कहानियों में 5–6 मील की विशिष्ट व्यंजना समाहित रहती है जो धरती की गंध उभारने में अत्यनत सहयोगी है। यों भी ध्वनि–वैशिष्ट्य और अर्थ गाम्भीर्य की दृष्टि से लोकभाषाओं के बहुत से शब्द इतने समर्थ होते हैं कि वे भाषा के परिनिष्ठित शब्द के अभाव की पूर्ति ही करते हैं। भाषा विकास के नाते आंचलिक कहानी का यह योगदान भी रहा है। प्रत्येक ँअंचल अपने में एक अनूठी मिठास लिए रहता है वहाँ की अपनी शब्दावली, बात कहने की लय, मिठास नाहक ही आगन्तुक को अपने आकर्षण में बाँध लेती है। मिताली की इस सहज कला को सर्व कला मर्मज्ञ–प्रतिदेव' का शुद्धता का मोह ले बैठा। 'मिताली रानी, ठुमरी ही गाती हो तो विशुद्ध ठुमरी गाओ। सुचिनाथ का वहम। खटमल ही है वह व्यक्ति...? क्या साहित्यक है ? वह क्या बला है ? इस दंभ से रेणजी को सख्त नफरत है।

जहाँ तक कला और अभिव्यक्ति की बात है रेणजी शमशेर सिंह से पूर्णतः सहमत हैं कि, ''बात बोलेगी मैं नहीं। राज खोलेगी बात ही।'' तीन बिंदिया में यह राज छिपा रहता है, सहायक नाद की तरह। आधुनिक कथा साहित्य के साथ गंभीर समस्या है किताबों के हर पृष्ठ और पंक्ति पर यत्र–तत्र सरसों के दानों की तरह बिखरी हुई बिंदियों के बाहुल्य पाठकों की आँखों में किरकिरी से चुभने लगते हैं।

आंचलिकता को निष्पन्न करने में तीसरा तत्व कहानी का रचना–विधान है। इसके अन्तर्गत कथानक और चरित्र दोनों आ जाते हैं। आंचलिक कहानी तथा कथित नई कहानी की भांति कथानक को नकारती नहीं है, अपितु वह तो उसे लोक–कथा की भंगिमा तक ले जाना चाहती है। रेणु के शब्दों में यह नवीनता 'ठुमरी' धर्मिता कही जा सकती है। इसका कारण यह है कि आंचलिक कहानी का सम्वेद्य केवल कहानी नहीं, अंचल भी होता है। कथानक के मध्य अंचल इसी प्रकार अन्तर्मुक्त किया जताा है जैसे गीत में अर्न्तमार्ग। आंचलिक कहानी में जीवन का एक कतरा काटते समय उसके हर जीवन्त रेशे को भी सुरक्षित रखने की कोशिश की जाती है। कहानी कहते–कहते बीच–बीच में कार्य कारणबद्ध कथानक टूट जाता है और वहीं से जवीन

खण्ड के अन्य अनुभूति तत्व गूंजने लगते हैं। वास्तविकता के नये स्तर उभरने लगते हैं और कार्य सम्पादित होने लगता है। यह वैचित्रय कहानी में आंचलिक रस की सृष्टि करता है, अंचल को कथा का सह सम्वेद्य बना देता है।

आंचलिक चरित्रों की भी निजी विशेषता है। मूलतः ये पात्र अंचल की संस्कृति विशेष से विच्छिन्न नहीं हो सकते, अतः अंचल का अंश बनकर उभरते हैं। मानवीय चरित्र भी आंचलिक कहानी में धरती की गन्ध बन जाता है।, परिवेश से एकात्मक बन जाता है इसी तथ्य को रेणु की तीन बिंदिया' कहानी प्रतीत में संकेतित करती है। उसकी जीवन्तता का सूत्र विशुद्धता नहीं, दूसरा ही है .... ''गंध! गीतों से गन्ध का परिवेशन .....। गीत चरित्र है, तो गन्ध अंचल। मानवीय चरित्र और आंचलिक चरित्र यह सम्पृक्ति विशिष्ट है। इसमें चरित्र वैयक्तिक नहीं रह सकता, अर्न्वेयक्तिक बनता है। इसी कारण ऐसी कहानी में मात्र एक पात्र कभी नहीं उभरता, उभरता है प्रतिनिधि अंचल। इन अर्थों में ये प्रतिनिधि पात्र भी कहे जा सकते हैं, परंतु निजी व्यक्तित्व भी इनका भरा पूरा है।''

रेणु एक सजग कलाकार हैं, सजग कथाकार! पर उसकी सजगता से ऐसा लगता है, मानो यह कला के प्रति उतनी नहीं, जितनी धरती की गन्ध के प्रति है। वह रस, रूप, गन्ध सबके प्रति सचेत है और उसकी यही चेतना बड़े सहज भाव से कला में शब्दित हो गयी है, वह जब गाँव में आ जाता है तो यह भी भूल जाता है कि वह लेखक भी है। उस समय उसे न अखबार से सरोकार है, न रेडियो से गाँव उसका संसार है और उस पर फसल अच्छी हो जाये तो खेती करने में कविता करने का आनन्द आ जाए। उसकी इच्छा होती है, यदि बन पड़े तो लिखना–विखना छोड़कर खेती ही करूँ ।

मिट्टी के इसी मोह ने रेणु की कलाधारणा को इस तरह निरूपित किया कि वह हिन्दी–साहित्य में असाधारण बनकर उतरी। उसमें शुद्धता के दम्भ की अस्वीकृति थी तथा आंचलिकता को प्रथम बार कलात्मक अभिव्यक्ति मिली। मूल राग से आँख मिचौली खेलती हुई छोटी–छोटी आंचलिक रागनियां अजाने ही श्रोताओं को मोह लेती। पर मीताली की इस सहज कला को 'सर्व–कला कर्मज्ञ–प्रतिदेव' का शुद्धता का मोह ले बैठा। 'मिताली रानी, ठुमरी ही गाती हो तो विशुद्ध ठुमरी गाओ।' सुचिनाथ का वहम। खटमल ही है वह व्यक्ति। ..... क्या ? साहित्यिक है ? वह क्या बला है ?। इस दम्भ से रेणु को सख्त नफरत है। उसका आदर्श है –– गंध। गीतों से गन्ध का परिवेशन कर सको, ऐसी साधना करो।

कला अथवा अभिव्यक्ति के सन्दर्भ में रेणु शमशेर सिंह के विचारों से सहमत हैं – ''बात बोलेगी मैं नहीं। राज खोलेगी बात ही।'' तीन बिन्दिया में यह राज छिपा रहता है, सहायक नाद की तरह। तभी तो चार तारों से सात स्वर उत्पन्न होते हैं। ..... नाद कभी उत्पन्न नहीं होता। उसके साथ–साथ अन्य नादों का भी जन्म होता है। आधुनिक कथा साहित्य में एक वर्ग डाटवादियों का भी है। उनका मानना है कि –''... किताब में हर पृष्ठ और पंक्ति में यत्र–तत्र सरसों के दानों की तरह बिखरी हुई बिन्दियों के बाहुल्य से पाठकों की आखें किरकिराने लगती हैं। साधारण पाठक अधिकांश ऐसी बिन्दी बूटदार रचनाओं को भली नजर नहीं देखते। वास्तव में यह देखना, सहायक नाद को समझना ही आधुनिक साहित्य के साथ जुड़ी गम्भीर समस्या है। यही देखना कठिन है, पर यही कला का प्राण है, अर्न्तमार्ग है। जीवन का सत्य भी यही है। इस अर्न्तमार्ग, सहायक नाद की उपेक्षा करके कला जीवित नहीं रह सकती। कला का कथ्य वस्तुतः यही है, असली बात यही है।''

रेणु का विचार है कि कला मूलतः शिल्प नहीं है। रेणु शिल्पवादी इसलिए नहीं हैं कि उनका विश्वास कला के सम्वेद्य में है, कथा के कथ्य में है। शिल्प मात्र आवरण है, चमत्कृत कर सकता है, परन्तु मूल प्रश्न तो दूसरा है। इसीलिये गुरू, यन्त्रकार हाराधन से पूछ्ता है --''वाह ! इसका खेल तो बहारदार है। यन्त्र का यत्न भी लेती है या .....? यन्त्र का यत्न माने यंत्र की पूजा। रेणु की दृष्टि में कलाभ्यास साध्य अधिक है, कला साधना है। प्रतिमा भाग्य की बात है। सौभाग्य से यन्त्र तुम्हारा उत्तम है – इसी ओर संकेत करता है।

कला और नैतिकता के संबंध में रेणु स्पष्ट हैं। पूर्ण वाचालता के साथ नैतिकता चाहे वह किसी भी परिप्रेक्ष्य में हो – काम्य है, आदर्श है, और आदर्श से निरपेक्ष होकर यथार्थ भी नही जी सकता। आदर्श और यथार्थ की पारस्परिकता का उद्‌घाटन लेखकीय दायित्व हे। उद्‌घोष या उच्चारण उसका दायित्व नहीं है। कला में यह अभीष्ट भी नहीं है। नैतिकता कला में 'सरसो के दानों' की तरह व्याप्त होनी चाहिए जैसे कि तीन 'बिन्दिया' में समाहित है। वास्तविक अर्थों में यह पारस्पारिकता ही तो अर्न्तमार्ग है। बर्हिमार्ग का समर्थन रेणु कभी नहीं कर सकते – ''मान लीजिये सामाजिक नैतिकता का ह्रास हुआ तो इसका मतलब क्या है कि –अब सदा सत्य बोलो'' – जैसी चीज लिखी जाये ?

आंचलिकता की भारतीयता की तलाश रेणु के कथा–साहित्य में इसी धरातल पर सम्पन्न हुई है। कहानियों के पात्र बदलते सन्दर्भों को जीते–जाते हैं और अचानक कहीं से वह क्षण दस्तक दे जाता है जिससे जीवन की मनोरमता है। भव्यता है, हिन्दुत्व का उदार और विशिष्ट अर्थ प्रतिभाषित है। जीवन के इन उदात्त क्षणों से रेणु को प्यार है और उनके विभिन्न कला–चरित्र इन्हीं क्षणों का संधान करते हैं। उस क्षण में यथार्थ और आदर्श की पारस्परिकता विद्युत, कौंध की भांति सम्पूर्ण व्यक्तित्व को झकझोर देती है तीर्थोदय कहानी की लल्लू की मां और 'लाल पान की बेगम' की बिरजू की माँ का सम्पूर्ण व्यक्तित्व इसी ऊहापोह में व्यतीत होता है।

रेणु आदमी को आदमी बनते देखने के लिये सजग हैं। मनुष्य की सामर्थ्य में उनका अडिग विश्वास है, जिसके पीछे लगती है रामकृष्ण परमहंस की आध्यात्मिक आस्था। परमहंस में उनकी श्रद्धा का संकेत तीन 'बिन्दियां' और 'जलवा' जैसी कहानियों में भी उपलब्ध होता है। ऐसी ही आस्था उनकी रवीन्द्रनाथ ठाकुर में थी। 'यदि तोर डाक सुने फेड ना आसे, तबे एकला चलो रे'।

रेणु की आस्था स्वयं उन्हें राजनीतिक मोर्चे पर ले गयी, अतः कहानी में यह उभार उपयुक्त भी है और स्वाभाविक भी। उनके साहित्य में राजनीति जिस भांति समाविष्ट रही है – वह भी हिन्दी साहित्य के लिये एक आदर्श रहा है। यहाँ राजनीति ही जीवन की पृष्ठभूमि बन जाती है और पात्रों के व्यक्तित्व को उभारती है, चारों ओर घेर कर उनका गला नहीं घोंटती। राजनीति उनके साहित्य को ठोस भौतिक आधार प्रदान करती है, वास्तविकता को एक नया रूप प्रदान करती है जीने की अदम्य लालसा–जिजीविषा, आत्मासात, आत्म विश्वास और आत्मदान–भारतीयता की तलाश के ये बिन्दु रेणु की चेतना के स्वर हैं, उनकी आस्था के आयाम हैं।

रूढ़ि विद्रोह– रेणु की कहानियों में रूढ़ि–विद्रोह की भावना सर्वत्र विद्यमान है पर वह प्रायः मुखर और वाचाल नहीं है। संकेत बहुत है, पर तीन बिंदिया की भांति व्याप्त मात्र अनुभूति के लिये। हिन्दु–समाज परिवार में बेटी को कैसा सम्मान आज मिलता है वह केवल आज की बात हो ऐसा नहीं है। वह जो जैसे एक चिरन्तन रूढ़ि हो – नित्य लीला। किसन

लीला करता है – योगमाया की फेंकी हुई का एक बार नहीं, दस बार फेंको गोद से '– न जाने किस घड़ी में मेरा जन्म हुआ कि जन्म से अब तक सभी दुरदुराते हैं। यही दुरदुराहट 'तम्बे एकला चलो रे' में स्पन्दित है। परिवार की बड़ी बूढ़ी माँ षष्ठी के दिन प्रार्थना करती है–' जै मैया छठी। मनुष दो तो बेटा पशु के बेटी .... ले जा मैया पाड़ा 'दे जा मैयो पाड़ी। .... ले जा, माने उठा लो, बलिदान लो।''

रूढ़ि–विरोध का अन्य प्रमुख स्तर धार्मिक अंधविश्वास और शकुन–अपशकुन के विश्लेषण का है। 'काकचरित' पूर्ण रूपेण शकुन–अपशकुन विचार की कहानी है। जो कुछ भी बुरा भला होता है उसे भारतीय समाज कर्म–फल समझकर शकुन के कंधों पर डालता आया है, कौआ सदैव अशुभ बोलता है, किसान योगमाया की लीला कर रहा है पर राधा का विश्वास –'वह कंस की मां जी यहाँ क्यों आयी हैं? जब से आयी हैं...? गाँव में काग बोल रहे हैं। यह राधा की मानसिक उद्विग्नता का सूचक है, काग बोलने के तथ्य का कम 'काक चरित' में मूल संवेदनात्मक प्रश्न यही उभरता है – क्या यह कौआ ही सारे अशुभ और असगुन का वाहक है ? फिर सोने चोंच मढ़ा दूं रे काग' किस क्षण का गीत है ? इन सब अंधविश्वासों का उतर रेणु 'पुरानी कहानी : नया पाठ' कहानी में संकेतित कर देते हैं। उनके मतानुसार अंधविश्वास, वन्दना आदि सब निरुपाय, असहाय लोगों का उपजाया हुआ भ्रम है।

यथार्थ बोध–दृष्टि की यह सीमा वास्तव में उसके 'कोण' को सीमित करती है। यह सीमा प्रायः सभी आंचलिक कथाकारों में रही है इसलिये आंचलिक कहानी पर दृष्टि कम संवेदना अधिक रही है का आरोप नामवरसिंह जैसे प्रभृत्ति आलोचकों ने लागया है, जिसका विवेचन सैद्धांतिक पक्ष के अन्तर्गत किया जा चुका है। फिर भी उल्लेखनीय है कि इन कथाकारों में यथार्थ बोध गहन रहा है। आंचलिक कहानी का उदय ही वास्तव में यथार्थ की ग्रहणशीलता के एक नये आयाम के साथ हुआ था। यह आयाम था सामान्य जीवन के स्तर से लेकर राजनीतिक स्तर के यथार्थ की लयात्मकता। रागात्मकता ने यथार्थ के विभिन्न स्तरों को एक लय में बांध दिया था और रेणु की ग्रहणशीलता ने उसे पूरी तन्मयता में पकड़ा है। भौतिक एवं अन्तवैयक्तिक परिवेष को उसकी कलम ने दृढ़ता से सहेजा है।

रेणु की यथार्थ दृष्टि ने मूलतः गांव को समेटने का प्रयत्न किया है। इस प्रयास में उन्होंने मस्तान बाबा के आदर्श को निभाया है – 'सदा आँख–कान खोलकर रहो। ..... धरती बोलती है। गाद्द बिरिच्छ भी अपने लोगों को पहचानते हैं।'' फिर भी भला करमा 'आदिम रात्रि की महक' को कैसे न चिन्ह ले। रेणु की दृष्टि कैसे धरती को अनदेखी कर दे। इसीलिये कहानियों में सर्वत्र धरती की गन्ध है, कहीं लाल माटी वाले खेत में बिखरे हुए अक्षत सिंदूर और कहीं धान के झरते फूलों की गन्ध और बांस की झाड़ी में फूली दुद्धी की लता। कहीं गौने की रंगीन साड़ी में कड़वे तेल और लठवा–सिंदूर की गन्ध है, तो कहीं वे नहाई हुई देह की–सी गन्धं सारी कहानियां इस प्रकार की गन्ध से आप्लावित हैं एवं यही गन्ध उन कहानियों में यथार्थ को उभारने में सक्रिय रही है।

इस गन्ध से लेखक की आत्मीयता हैं यह आत्मीयता प्रौढ़ वैचारिक धरातल पर नहीं है, अन्यथा दृष्टि सीमा का दोष न होता। इसका धरातल शिशु की सी सहज, तरल अनुभूति है, जो गाँव की इस चिर–परिचित गंध को फीकी पड़ती देखकर चिंतित ही नहीं, व्याकुल भी हैं। .....'' पिछले साल से ही होली का रंग फीका पड़ रहा है। आठ नौ साल की चुरमुनियां की नन्हीं–सी जान, न जाने किस संकट की छाया को देखकर डर गई है '' क्या रह जाएगा, चुरमुनियां जैसे रेणु की आत्मा है उसी के एक दूसरा रूप है विजया। रेणु ने गांव में सुकून मिलने की बात कही

है और जिवय गाँव के अदृश्य आंचल की बात करती है। कलेजा टूक–टूक होने लगता है तो इमली के बूढ़ा पेड़, बाग–बगीचे, पशु पक्षी सभी उसे ढांढ़स बंधाते हैं। सामाजिक–एतिहासिक पीठिया की अनिवार्य परिणित में गाँव टूटा रहा है, विघटित हो रहा है पर 'सुकून' की तलाश में लेखक उस अदृश्य आंचल को बनाये रखना चाहता है – यही उसका मोह है। ठीक है या गलत–यह तत्व चिन्तन की बात है। पर इसी कारण डॉ. बच्चन सिंह के शब्दों में 'भोगे हुए जीवन की अभिव्यक्ति' बन गई है। रेणु ने इस सामाजिक– ऐतिहासिक पीठिका या यथार्थ के नये आयाम को पहचाना न हो ऐसी बात नहीं है। उनकी दृष्टि यथार्थ की पकड़ में पूर्णतः सजग है।

'रसप्रिया के गायक को अच्छी तरह याद है कि ''पांच साल पहले तक ..... के दिल में हुलास बाकी था।'' पर अब किसके दिल में है...? सिरचन कारीगर है। रंगीन शीतल पाटी और झिलमिलाती चिक बुनने में माहिर है, पर ये काम अब बेकाम का काम है और दो–दो पटेर की पाटियों का काम सिर्फ खंसारी का सत्तू खिलाकर। सिंघाय किसान है 'सिरपंचमी का सगुन' करने का हरख है और चारा क्या है – सिवा इसके कि 'अब हम खेती नहीं करेंगे, माधव की मां। मैंने तय कर लिया है।'' अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्धों का यही कटु बोध गांव के विघटन का मुख्य कारण रहा है।

व्यंग्य यथार्थ–चेतना का प्राण है। कटु यथार्थ की अनुभूति से दंश की तीव्रता कला में व्यंग्य के माध्यम से ही जीवन्त होती है। अमीरी आज के जीवन में एक ऐसा ही कटु यथार्थ है जो ईमानादारी और चरित्र के बल पर अर्जित नहीं होती बेईमानी और चरित्र से ही मिलती है। इस चरित्रहीनता की यथार्थ स्थिति का बोध होता है सितिया उर्फ सीता को यानि प्रदीप कुमारी माया को।

'सब का घर बनवाना खेल ....।' रेणु की श्रेष्ठ कहानियां परिवारिक स्तर पर चरित्रहीनता और उन्मुक्त यौनाचार को झेला है। सुदर्शन और हरबोलवा ने, जो 'आजाद परिन्दे' बनने की इच्छा में समाज की विकृति बन रहे हैं। 'अरे! एक बार कम्पनी में घुसने दे, तब देखना है बापों को। ..... ऐ! देख इधर ..... इसमें तेल लगावेगा आकर तुम्हारा, और हमारा बाप–माँ, मौसा–मौसी सब ! समझे ! ''

यह सामाजिक विकृति कितने विशाल धरातल एवं कितने अमानवीय स्तर पर घटित हो रही है – 'पुरानी कहानी : नया पाठ' कहानी जैसे इसका दस्तावेज है। कोसी में बाढ़ क्या आयी, क्षेत्र के पराजित उम्मीदवार पुराने जन सेवक जी का सपना सच हो गया। ''कौसा का भैया ने उन्हें फिर जन सेवा का अवसर दिया है। आदिम रात्रि की महक, व्यापारियों और बड़े महाजनों ने समझ लिया, 'शुभलाभ का ऐसा अवसर बार–बार नहीं आता। .... सरकारी–गैर–सरकारी अपील कर उन्होंने दिल खोलकर पैसे दिये। .... अनाज ? अनाज कहाँ ? रिलीफ की नावें आयी पर रिलीफ के लिये नहीं, बल्कि पार्टी के प्रचार के लिये। पार्टियों के परस्पर संघर्ष के लिये। ''डॉक्टर और नर्स भी है, पर वे 'इनडोर और आउटडोर खेलों में मस्त हैं ..... फिर बाढ़ के कारणों की जांच।'' पड़ोसी राज्य नहीं पड़ोसी राज्य के कर्णधारों ने ही हमें डुबाया है और अंत में तुर पंचाल। ''..... पढ़िये! पढ़िये ताजा समाचार सारे। राज्य में हाहाकार राज्य की मौजूदा सरकार के खिलाफ अविश्वास के प्रस्ताव की तैयारी।''

रेणुजी सदैव यथार्थ के पोषक रहे हैं, आवरण उन्हें कभी नहीं भाया यही कारण है कि उन्होंने आंचलिक परिवेश को अपने लेखन का विषय बनाया उनके अनुसार गाँव की सादगी ही अंतिम

सच्चाई है। एक स्थान पर इस छल–छद्म की दुनिया से परशिान वे कहते हैं–'' अपने में एक मतिभ्रम सा लगता । मन में बहुत हलचल रहती। सोचता कि क्यों नहीं लोग अपने ऊपर की झिल्लयाँ उतार कर बात करते... ? क्यों जानबुझ कर अपना ही निषेध करते हैं.. ?....जैसे हैं वैसे बनकर जियें तो इनके हितों को क्या क्षति पहुँचेगी ?.... अस्थिरता, अतिवादिता और आक्रोश! उन्नीस साल की उम्र में बहुत विद्रोही हो गया था।''

इसी यथार्थ का सम्पादन रेणु की कहानी में सशक्त है। भोगे यथार्थ के सशक्त सम्पादन का श्रेय बहुत कुछ वास्तव में रेणु के शिल्प को है। कहानी सहज ही एक शिल्प जिजीविषा है।

कथात्मकता उसका बीज है। कथा हीनता में भी रेणुजी ने किस्सागोई के संस्कार संजोये हैं, और संस्कार उनकी कहानियों की तरह ही लोक–कथात्मक है। रेणु का रचनाकार केवल माटी की गन्ध को ही नहीं पहचानता, बल्कि उसके बतियाने में उभरती हुई नाद लहरी को भी पकड़ता है। नाद के प्रति यहाँ आकर्षण 'तीन बिंदिया' के सैद्धान्तिक धरातल पर उभरा है तो 'पुरानी कहानी : नया पाठ' में स्पष्ट व्यवहृत हुआ है। रेणु की कहानियों का कथानक गठित नहीं होता कार्य कारण सम्बन्ध की अनिवार्यता या अपेक्षा में उसकी आस्था नहीं है। उनमें तो प्रभाव बिम्बों की कतार है जिनके कारण ''एक स्तर पर वे कहानियां हैं – जिसमें किस्सा साफगोई का नया संस्कार है, तो दूसरे स्तर पर वे कहानियाँ कम, चित्र अधिक हैं और तीसरे स्तर पर उग्र मधुर स्वरों में बँधे जीवन–राग।'' 'पुरानी कहानी : नया पाठ, कहानी का सारा कथ्य जीवन रागों में बँधा है। राग बदल जाते हैं, तो प्रभाव बिंब बदल जाते हैं। पहले अधेड़ किसान के मन का मीठा पाप ..... 'अरे !सांवरी सुरतिया पर चमके टिकुलिया कि छतिया पर जोड़ी अनार। ..... नागार्जुन की कविता का आलाप .....। लोक गीत का नाद .....'' जा– जा रे! बेईमान तोरा एको न धरम। एको न धरम हाय कुछ न शरम, जा जा रे बेईमान तोरा .... ।'' ..... लता के स्वर का रिकार्ड ''ओ मेरे वतन के लोगों। जारा आँख में भर लो पानी ...। और अन्त में निराला की पंक्ति को दोहराते पढ़ते पागल के स्वरों की गूंज – मिट्टी का ढेला शकरचालो हुआ।'' इन पाँच सांगतिक नादों की योजना ही कहानी के रूप बन्ध को सशक्त बना देती है।

रेणु के शिल्प की एक अन्य विशिष्टता है उसकी बिम्ब योजना और शब्द चयन। योजना के दोनों रूप उसकी शिल्प–चेतना को यथार्थ से जोड़कर प्रगतिशील स्वर दे देते हैं – अंकन की सहजता उसकी शैली का प्राण है। चटकीले रंगों को उभारने का यत्न उसमें बिल्कुल नहीं है। बिम्ब परिवेश से उभारते हैं। बिरजू का बाप घूघंट में झुकी दोनों पतोहुओं को देखता है तो उसे ''अपने खेत की झुकी हुई बालियों की याद'' आती हैं। ''बे नहाई हुई देह की गन्ध' वाले सुरसतिया के घर से लौटता है तो लगता है कि ''तीन जोड़ी आँखे उसकी पीठ पर लगी हुई हैं। आँखें नहीं – डिसटन सिंगल होग सिंगल और पैटसिंगल की लाल–लाल गोल–गोल रोशनी।'' पर शायद ये रोशनी'' पर शायद ये रोश्नी 'सिंगल की भी नहीं है, रेणु की संवेदना, शिल्प और भाषा की है, जो हिन्दी कहानी में सहसा सिंगल बनकर चमक उठी थी और तब से न जाने कितने कथाकारों का पथ निर्देश करती रही है। अतः रेणुजी द्वारा रचित उपरोक्त

कहानियों के आधार पर हम कह सकते हैं कि रेणजी का कहानीकार रूप उतना ही स्तुल्य और सराहनीय है जितना उपन्यासकार रूप।

तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम कहानी की समीक्षा

लोक संस्कृति जो आँचलिकता का मेरूदण्ड है। इसी आँचलिकता को अपनी कहानियों के माध्यम से समाज के केनवास पर लाने वाले आँचलिक कहानीकार फणीश्वरनाथ रेणु हैं। वे एक

सजग कलाकर हैं,उनकी यह सजगता कला के प्रति उतनी नहीं जितनी धरती की गंध के प्रति है। मिट्टी के इसी मोह ने रेणु की कला धारणा को इस तरह निरूपित किया कि वह हिन्दी साहित्य में आसाधारण बनकर उतरी। अपनी कहानियों में उन्होंने गाँव के जनजीवन को समेटने का प्रयत्न किया है। भोगे हुए यथार्थ की सशक्त अभिव्यक्ति उनकी कहानियों में देखने को मिलती है। कथात्कता उसका बीज है। संवेदना, शिष्टता और भाषा की दृष्टि से रेणुजी की कहानियाँ अपनी विशिष्टता के साथ चमक उठती हैं। कहानी के क्षेत्र में रेणु जी का योगदान सराहनीय है। उन्हीं में एक कहानी है 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' जो हमारे अध्ययन का विषय है। कहानी कला तत्वों के आधार पर कहानी की समीक्षा प्रस्तुत है।

1.**कथावस्तु** – प्रस्तुत कहानी फणीश्वरनाथ रेणु की प्रतिनिधि कहानी मानी जाती हैं जो ग्रामीण अंचल के परिवेश की लोक संस्कृति को प्रदर्शित करती है। कहानी का नायक हीरामन एक व्यापारी है जो चोर बाजारी के माल को एक स्थान से दूसरे स्थान को पहुँचाता है। इसी व्यापार के लिए उसने तीन शपथ ले रखी है। यह कहानी उसी गाड़ीवान हीरामन और नौटंकी में नृत्य करने वाली नर्तकी हीराबाई के स्निग्ध संबंधों पर आधरित है। गाड़ीवान जब चोर बाजारी का माल जिसमें सीमेंट और कपड़े की गांठे हैं पूर्णिया जिले के जोगीवानी गाँव से नेपाल के विराट नगर पहुँचाता है तब गाड़ी खाई में गिरने से बाल–बाल बचती हैं दूसरी बार गाड़ी बाँसों को लादकर ले जा रही होती है तो घोड़ागाड़ी से उसकी टक्कर हो जाती है जहाँ फारबिसगंज नौटंकी के नाचने वाली हीराबाई उसकी गाड़ी में सवार होती हैं। बातों के दौरान उसका हीराबाई से मन जुड़ जाता है। उसके बाद उसने तीसरी शपथ ली कि अब कोई जितना भी भाड़ा दे ऐसी लदनी नहीं लादूंगा। हीरामन फारबिसगंज मेले में आता है जहाँ उसका आकर्षण है हीराबाई जिसके लिए बार–बार उसका फारबिसगंज आना–जाना लगा रहता है। रास्ते में जब दूसरे गाड़ीवान उससे पूछते हैं कहाँ जा रहा है वह एक को कहता है छत्तापुर पचीरा, दूसरे को कहता है कुडंमा गांव जा रहा हूँ जब हीराबाई पूछती है छत्तापुर छपीरा कहाँ हैं। तब सही नाम न बोलने पर हीरामन उसकी नादानी पर हंसता है।

जब हीरामन के 'दंगच्छिया' गाँव पहुँचने पर पर्दे वाली गाड़ी को देखकर बच्चे तालियाँ बजाकर गा उठे।

''काली काली डोलिया में काली रे दुल्हनियाँ''

हीरामन खुश हैं, वह स्मृतयों में खोया है। कजरी नदी के साथ–साथ उसकी सड़क जा रही है और परमान नदी का तो महुआ घटवारिन की लोक कथा से संबंध ही है। हीराबाई द्वारा कथा सुनने की रूचि को पूरा करने के लिए हीरामन अपने रास्ते से हटकर ननकपुर की ओर चल पड़ता है। किन्तु अंत में जब हीराबाई, हीरामन से बिदा लेती है तब हीरामन को बहुत दुख होता है क्योंकि वह हीराबाई से दिल लगा बैठा है। जीवन की तीनो घटनाएं ही उसे दुख देने वाली ह। हीराबाई द्वारा छोड़कर जाने की बात सुनकर हीमन को काफी ठेस लगती है और वह तीसरी कसम खाता है कि अब किसी भी नौटंकी वाली को गाड़ी में नहीं बैठाएगा।

फणीश्वरनाथ रेणु ने संपूर्ण कहानी को बड़े ही व्यवस्थित रूप से संयोजित किया है अपनी भाषा, पटकथा, शिल्प के कारण कहानी अत्यंत प्रभावशाली बन पड़ी है तथा पाठकों को बांधे रखने में सफल रही है।

2.पात्र–योजना – प्रायः यह समझा जाता है कि आंचलिक कथाकार का सदैव ग्रामीण परिवेश एवं पात्रों के प्रति झुकाव होता हैं उनका ग्रामीण परिवेश के प्रति व्यक्तिगत लगाव होता है या फिर पूर्वाग्रह, रेणु जी की कहानियों का गंभीरता से अध्ययन करने के पश्चात् हम इस धारणा को नकार सकते हैं क्योंकि उनके पात्रों में हमें विविधता का आभास होता है प्रस्तुत कहानी 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलाम' के चरित्र अपना पोषण शेष तत्वों से प्राप्त करते हैं। इससे कहानी का फलक विस्तृत हो जाता है।

प्रस्तुत कहानी में दो प्रमुख पात्र हैं हीरामन और हीराबाई जिनके नामों में काफी समानता है। इसके अतिरिक्त कहानी में कुछ गौण पात्र भी हैं जैसे – धुनीराम, लालमोहर, पटलदाय प्रभुति आदि। संक्षेप में हीरामन के भाई– भाभी भी इसका अंश बने हैं। हीरामन जो कि पेशे से एक गाड़ीवान है। पूर्णिया का रहवासी चालीस बरस का हट्टा कट्टा काला–कलूटा देहाती नौजवान है, जिसका संसार अपनी गाड़ी और बैलों तक ही सीमित है, उसके पास बैलों के अतिरिक्त बात करने को और कुछ भी नहीं है। हीरामन अपने भाई– भाभी का बहुत सम्मान करता है। विशेषकर भाभी का, इसलिए उनसे डरता भी है। हीरामन का विवाह बचपन में हो चुका है किन्तु गौने से पहले ही पत्नी का स्वर्गवास हो गया। हीरामन को बचपन की इस शादी की कोई स्मृति शेष नहीं है। हीरामन की दूसरी शादी न होने के कई कारण हैं जिनमें प्रमुख यह कि उसकी भाभी चाहती है कि उसका ब्याह किसी कुमारी और कम उम्र की लड़की से हो। वो समझने को तैयार नहीं कि कोई अपनी कुमारी कन्या भला दुजबर को क्यों देगा ? भाभी के आगे भैया भी परबस हैं।

इसी से हीरामन ने तय कर लिया कि वह ब्याह नहीं करेगा। उसकी धारणा है कि ब्याह होने पर गाड़ी चलाना छूट जाएगा। अतः वह सब कुछ छोड़ सकता है गाड़ी चलाना नहीं छोड़ सकता। फिर उसे चोरी का माल ले जाते हुए दो बुरे अनुभव होते है। जिनसे वह बाल–बाल बचता है। फिर उसकी गाड़ी में आती है रूपसी हीराबाई, इतनी रूपवान स्त्री उसने पहले कभी नहीं देखी। किसी पराई नारी जाति से उसका इतना करीब का रिश्ता कभी नहीं रहा। जो उससे बड़े प्रेम से बातें करती है कभी उसे मीता कभी भैयान तो कभी गुरूजी कहकर संबोधित करती है। हीरामन का दिल धड़क रहा है, उसे लगता है कहीं यह प्रेतात्मा तो नहीं। मगर फिर देखता है उसके पैर तो सीधे है यह तो सचमुच की स्त्री है यहाँ कहानीकार ने पात्र की अल्हड़ता एवं सादगी को बड़ी ही खुबसूरती से प्रदर्शित किया है। नारी संसर्ग से दूर रहा हीरामन नारी स्वभाव और उसके सौंदर्य से अनभिज्ञ है। इसीलिए उस रूपसी का इतना निकट होकर बातें करना उसे प्रेम का न्यौता देने सा लगा।

रात दिन सामान ढ़ोने वाला हीरामन आज हीराबाई को ढोकर बहुत खुश है। उसे यह सब स्वप्न लग रहा है उसे लगता है वह अपनी दुल्हन को ही गाड़ी में ले जा रहा है, गाँव वाले बच्चे, महिलाएं सभी तालियाँ बजाकर उसका स्वागत कर रहे हैं।

कहानीकार ने हीरामन और हीराबाई के सहज–सरल व्यक्तित्व को बड़ी ही स्वाभाविकता से चित्रित किया है। जिनमें कहीं भी बनावटीपन नहीं लगा। सारे पात्र प्राकृतिक लगते हैं।

3. संवाद, कथोपकथन –

फणीश्वरनाथ रेणु एक प्रसिद्ध आँचलिक कथाकार हैं। उनकी कहानियों में अँचल विशेष को ही चित्रित किया जाता है, वे उसी अंचल के अनुसार संवादों की रचना भी करते हैं जिससे कहानी के परिवेश में स्वाभाविकता एवं सहजता आती है। तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम में भी इस तरह के संवादों की रचना भी करते हैं जिससे कहानी के परिवेश में स्वाभाविकता एवं सहजता आती है। तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' में भी इस तरह के संवादों का एक उदाहरण दृष्टव्य है –

'क्यों मीता, तुम्हारी अपनी बोली में कोई गीत नहीं हैं क्या ?

गाँव की बोली आप समझिएगा ?

हूँ–ऊँ–ऊँ।

गीत जरुर ही सुनिएगा ? नहीं मानिएगा ? इस्स् ! इतना शौख!.... गाँव का गीत सुनने का है आपको। तब लीक छोड़नी होगी ? चालू रास्ते में कैसे गीत गा सकता है कोई ? हरिपुर होकर नहीं जायेंगे तब ?

''... काहे को गाड़ीवान, लीक छोड़कर बेलीक कहाँ उधार... ?

''....कहाँ है बेलीक ? वह सड़क ननकपुर तो नहीं जाएगी। इस मुल्क के लोगों की यही आदत बुरी है राह चलते एक सौ जिरह करेंगे। ओ भाई तुमको जाना है जाओ। देहाती भुज्ज सब ।''

ऐसे ही संवाद फणीश्वरनाथ जी की सभी आंचलिक कथाओं में मिलेंगे जो पाठक को न केवल रोचक लगते है वरन परिवेश से जोड़ते हैं। अतः इसमें संदेह नहीं कि संवाद योजना की दृष्टि से रेणु जी की कथोपकथन योजना सौष्ठव अप्रतिम है।

4. देशकाल और वातावरण – जैसा कि स्पष्ट है फणीश्वरनाथ रेणु मूलतः आँचलिक परिवेश के साहित्यकार हैं। प्रस्तुत कहानी 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' बिहार के ग्रामीण अंचल का प्रतिनिधित्व करती है रेणुजी ने कहानी में उस अंचल का अत्यधिक सूक्ष्मता से चित्रण किया हैं। भारत के बारे में यह युक्ति अधिक प्रसिद्ध है 'भारत गाँवों में बसता है' वर्तमान पीढ़ी जो गाँव के जन–जीवन एवं शैली से अपरिचित है, रेणुजी की कहानियों में ग्रामीण अंचल सजीव हो उठा है, पाठक स्वयं को ग्राम्यांचलों से जोड़ पाता है। गाँव का जीवन कैसा होता है... ? लोगों की जीवन शैली, उनके आचार–विचार, सोच का तरीका, भाषा शैली आदि सभी को कहानीकार ने बड़ी ही खूबसूरती से उभारा है।

गाँव में मेले का आयोजन, उसमें नौटंकी का उत्सव, लोगों में कैसा रोमांच भर देता है। गांव के वातावरण में एक अजीब सा उत्साह भर देता है। गाँव के शांत वातावरण में अचानक चहल–पहल सी मच जाती है। नौटंकी में बाई का नृत्य उनके विशेष आकर्षण का कारण बनता है। फणीनश्वरनाथ रेणु जी ने इन समस्त परिवेश को अपनी कहानियों में ऐसे चित्रित किया है मानो पूरा गाँव आँखों के आगे साकार हो उठा है। इसके अतिरिक्त अनेक स्थानों पर प्रकृति का मोहक चित्रण एवं मानवीकरण रेणु जी के कौशल को प्रदर्शित करता है। गाँव की सुबह कैसी होती है, सूरज डूबते हुए भी अपनी कैसी मोहक छवि चारों ओर छोड़ जाता है ? संध्या बेला के पश्चात् गाँव के मानव जीवन ही नहीं पशु पक्षियों में भी कैसी नीरवता छा जाती है।

रातें शहर की रातों से अधिक गहरी होती है। ये सब हम फणीश्वरनाथ रेणुजी की कहानियों में देख सकते हैं।

निष्कर्ष के रुप में रेणु जी की कहानियों में देश काल और वातावरण की झलक पूरे परिवेश को जीवित करती सी मिलती है।

5. भाषा शैली – फणीश्वर नाथ रेणु आंचलिक कथाकार के रूप में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं उसका सबसे बड़ा कारण है कि उन्होंने अपनी कहानियों में न केवल आंचलिक परिवेश का समावेश किया है बल्कि संबंधित अंचल से जुड़ी भाषाओं को भी हु–ब–हू प्रयुक्त किया गया। यही कारण है कि उनकी भाषा जनजीवन के बहुत निकट है और पाठकों को परिवेश से जोड़ती है उसे यथार्थ के निकट ले जाती है। 'तीसरी कसम' उर्फ मारे गये गुलफाम' में भी रेणुजी ने पूर्णिया जिले की भाषा में संवादों की रचना कर कहानी को स्वाभाविक, प्रभावशीलता प्रदान करने के साथ–साथ तथ्य को सशक्त बनाया है। उदाहरण प्रस्तुत है–

'भैया तुम्हारा नाम क्या है ?

''हू–ब–हू फेनूगिलास !'' – हीरामन के रोम–रोम बज उठे।

मुँह से बोली नहीं निकली । उसके दोनों बैल भी कान करके इस बोली को परखते हैं।

''मेरा नाम ? ..... नाम मेरा है हीरामन''

उसकी सवारी मुसकुराती है – मुसकराहट में खुशबू है।

तब तो मीता हूँगी, मैया नहीं – मेरा नाम भी हीरा है।''

हस्स! हीरामन को परतीत नहीं, मर्द और औरत के नाम में फर्क होता है।

'हाँ! जी मेरा नाम भी हीराबाई है।''

''कहाँ हीरामन और कहाँ हीराबाई, बहुत फर्क है।''

कहानी का गंभीरतापूर्वक अध्ययन करने पर हम पाते हैं कि रेणुजी ने उक्त कहानी में विश्लेषणात्मक, वर्णनात्मक शैली को प्रधानता दी है। कई स्थानों पर भावात्मकता एवं काव्यात्मकता के भी दर्शन होते हैं। यथा – 'हीरामन का बहुत प्रिय गीत है 'महुआ घटवारिन गाते समय उसके सामने सावन – भादों की नदी उमड़ने लगती है, अमावस्या की रात और घने बादलों में रह–रहकर बिजली चमक उठती है उसी चमक में लहरों से लड़ती हुई बारी कुमारी महुआ की झलक उसे मिल जाती है। सारी मछली की चाल और तेज हो जाती है उसको लगता है, वह खुद सौदागर का नौकर है, महुआ कोई बात सुनती नहीं परतीत करती नहीं, उलटकर देखती भी नहीं और यह थक गया है तैरते–तैरते।''

यही भावात्मकता एवं काव्यात्मकता रेणुजी की अनूठी शैली है।

6. उद्देश्य – प्रस्तुत कहानी 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' कहानीकार का उद्देश्य प्रेम के सूक्ष्म भावों को अभिव्यक्त करना है। प्रेम कभी भी पूर्व सूचना के, दस्तक देकर नहीं आता। वहीं हीरामन जैसे अविवाहित युवाओं की आंतरिक कुंठा को प्रदर्शित करना ही कहानीकार का उद्देश्य रहा हैं। प्रेम प्रणय में असफल होने पर परास्त मन जाने–अनजाने कुछ प्रण करता

है। जैसे हीरामन फिर भविष्य में किसी नौटंकी वाली को न बैठाने का प्रण करता है। कहना न होगा कहानीकार अपने उद्देश्य को संप्रेषित करने में पूर्णतः सफल रहे हैं।

शीर्षक – प्रस्तुत कहानी का शीर्षक है 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम''। यह एक घटना प्रधान कहानी है जिसमें कहानी का नायक हीरामन के जीवन में ऐ घटना घटित होती है जिसमें वह अपने प्रणय में असफल हो जाता है जिसे लेखक ने 'मारे गए गुलफाम' के नाम से रेखांकित किया है। वहीं नायक हीरामन जो उस एकतरफा प्रेम के कारणों पर दृष्टिपात करता है कि यदि वह अपनी गाड़ी में नौटंकी वाली हीराबाई को न बैठाता तो उससे उसका इतना लगाव न बढ़ता, प्रेम न होता और आज प्रेम में असफल होने का दर्द भी न सहना पड़ता। अतः प्रेम की चोट से मारे गए गुलफाम जीवन में तीसरी सौगंध लेता है कि अब वह कभी अपनी गाड़ी में ऐसी किसी नौटंकी वाली को नहीं बैठाएगा।

अतः कहानी की ये घटनाएँ मिलकर ही कहानी का शीर्षक तैयार करती है। तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' कहानी अपने शीर्षक की उपादेयता सिद्ध करती है।

व्याख्या (मारे गए गुलफाम)

1. एक दो तीन! तीन चार गाड़ियों की आड़। हिरामन ने फैसला कर लिया। उसने धीरे से अपने बैलों के गले की रस्सियां खोल लीं। गाड़ी पर बैठे–बैठे दोनों को जुड़वां बांध दिया। बैल समझा गए उन्हें क्या करना है। हिरामन उतरा, जुती हुई गाड़ी में बांस की टिकरी लगाकर बैलों के कंधों को बेलाग किया। दोनों के कानों के पास गुदगुदी लगा दी और मन ही मन बोला, ''चलो भैयन, जान बचेगी तो ऐसी–ऐसी सग्गड़ गाड़ी बहु मिलेगी।'' एक दो तीन! नौ–दो–ग्यारह!

संदर्भ – प्रस्तुत गद्यांश हिन्दी साहित्य की आंचलिक कहानीकार श्री फणीश्वर नाथ रेणु द्वारा रचित कहानी 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए मुलफाम से अवतरित है।

प्रसंग – प्रस्तुत कहानी में रेणुजी ने गाँव के अति साधारण गाड़ीवान की संवेदना एवं उदारमन को दर्शाने का प्रयास किया है। गाड़ीवान हीरामन जब चोरी के सामान ढ़ोने के आरोप में पुलिस के चक्कर से फंस जाता है तब उसे अपनी फिक्र कम और बैलों की फिक्र अधिक होती है। बैल जो उसकी आय का साधन है, उसे अतिप्रिय हैं ऐसे बैलों के प्रति उसकी संवेदनशीलता के रहते वह मुफ्त कर देता है। प्रस्तुत पंक्तियों में इसी घटना का वर्णन किया है।

संदर्भ – आज जहाँ समाज इंसानों के प्रति संवेदन शुन्य हुआ है रेणुजी ने एक इंसान की मूक पशुओं के प्रति संवेदना को व्यक्त करता है। हीरामन एक सीधा –सादा गाँव का गाड़ीवान है अपने भैया–भाभी परिवेश और बैलों से बहुत लगाव है उसे किन्तु गलती से चोरी का माल ढ़ोने के कारण उसे पुलिस–चौकी का सामना करना पढ़ता है वहाँ घंटों बैठे–बैठे उसे ख्याल आता है अपने बैलों का जो निर्दोष होते हुए भी सजा पा रहे हैं। हीरामन सोचता है कहीं उस हवालात में ही दो तीन दिन रहना पड़ा तो फिर इन बैलों की देखभाल, खान–पान का ख्याल कौन रखेगा। इसी ख्याल से परेशान वह गाड़ी में बैठे–बैठे ही अपने बैलों को आज़ाद कर देता है।

जबकि बैलों के कारण ही उसकी रोजी–रोटी चलती है। वैसे भी बैलों से उसे लगाव है, संभवतः इसी कारण कि कहीं उसके बैलों को ऐसे बुरे वक्त का सामना न करना पड़े वह बैलों की जोड़ी को खोलकर आजाद कर देता है।

वहीं वह पशुओं की वफादारी से भी भली–भांति परिचित है और जानता है कि बैल अपने मालिक को छोड़ नहीं पाएंगे। इसी से वह बैलों के कान में जाकर कहता है 'चलो भैयन, जान बचेगी तो ऐसी–ऐसी सग्गड़ गाड़ी बहुत मिलेगी।' अर्थात अगर जिंदा रहोगे तो तुम्हें मुझ जैसा मालिक और गाड़ी और भी मिल जाएंगे। किन्तु यदि यहाँ रहे तो तुम्हारा हाल बुरा हो सकता है।

इसलिए 'नौ दो ग्यारह' हो जाओ अर्थात भाग जाओ यहाँ से।

विशेष – मानव में पशु के प्रति बची संवेदना को बहुत ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है वहीं पशुओं के मन में भी अपने स्वामी के प्रति लगाव व ईमानदारी का भाव दर्शाने का सार्थक प्रयास किया है।

2. हिरामन टिकटी पर टिकी गाड़ी पर बैठ गया। उसने टप्पर में झाँककर देखा। एक बार इधर–उधर देखकर हीराबाई के तकिये पर हाथ रख दिया। फिर तकिये पर केहुनी डालकर झुक गया, झुकता गया। खुशबु उसकी देह में समा गई। तकिये के गिलाफ पर कढ़े फूलों को उँगलियों से छूकर उसने सूंघा, हाय रे हाय! हिरामन को लगा, एक साथ पाँच चिलम गाँजा फूँककर वह उठा है। हीराबाई के छोटे आईने में उसने अपना मुंह देखा। आँखे उसकी इतनी लाल क्यों हैं ?

संदर्भ – प्रस्तुत गद्यांश हिन्दी साहित्य की आंचलिक कहानीकार श्री फणीश्वर नाथ रेणु द्वारा रचित कहानी 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए मुलफाम से अवतरित है।

प्रसंग – प्रस्तुत अवतरण में लेखक ने एक युवा मन का प्रेम के प्रति अनुराग का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। जिसका प्रतिनिधित्व करता है कहानी का नायक हीरामन जो कि विवाह की उम्र पार कर चुका है। किन्तु उसका विवाह नहीं हो पा रहा है किन्तु प्रकृति के नियमानुसार यौवन की तृष्णा उसके युवा मन में जाग्रत है। अतः जब रूपसी हीराबाई से जब उसका संपर्क होता है तो उसकी अतृप्त तृष्णा पुनः जागृत हो जाती है अनुराग उद्दीप्त हो उठता है। उस पर अजीब सा नशा छा जाता है जिसकी तुलना उसने गांजे के नशे से की है।

भावार्थ – एक गाड़ीवान के रूप में हीरामन का सामना नौटंकी की चंचल नायिका हीराबाई से होता है। हीराबाई सुंदर है उसके पास अदाएं तथा उसका रहन–सहन किसी राजसी नर्तकी से कम नहीं है। हीरामन पर उसके बनाव श्रृंगार एवं उसके बदन से निकलती तेज खुशबू का नशा सा छाने लगता है पूरी गाड़ी हीराबाई के बदन से निकली खुशबू से महक रही थी। हीरामन की देह में उस खुशबु का नशा छाता जा रहा था। लेखक ने एक मदमाते मन का मनोवैज्ञानिक तरीके से रेखांकन किया है। हीरामन धीरे–धीरे हीराबाई के सामान को छूकर तृप्ति का अहसास करता है। वह कभी उसके तकिये पर हाथ रखता है, फिर तकिए पर कोहनी टिकाकर उस पर झुकता चला जाता हैं। उसका तन भी हीराबाई की खुशबु से सराबोर होता चला जाता है। वह कभी तकिए पर हाथ फेरता है तो कभी उसके गिलाफ पर कढ़े फूलों को छूकर सूंघता है। उसे अजीब सा नशा इसमें महसूस है। वहीं उसे हीराबाई के साजो सामान में

एक छोटा आईना दिखाई देता है जिसमें वह अपनी छबि देखता है तो पाता है कि सचमुच उसकी ऑखें नशे से लाल हो रही है।

विशेष – प्रस्तुत पंक्तियों के माध्यम से कहानीकार ने प्रेम की स्वाभाविक तृष्णा को प्रदर्शित किया है। व्यक्ति जितना ही नजर अंदाज कर ले किन्तु इससे नहीं बच सकता।

3. गाड़ी ने सीटी दी। हिरामन को लगा, उसके अंदर से कोई आवाज निकलकर सीटी के साथ ऊपर की ओर चली गई, कू–ऊ–ऊ! इ–स्स! –छी–ई–ई–छक्क! गाड़ी हिली। हिरामन ने अपने दाहिने पैर के अंगूठे को बाएं पैर की एड़ी से कुचल लिया। कलेजे की धड़कन ठीक हो गई। हीराबाई हाथ की बैंगनी साफी से चेहरा पोंछती है। साफी हिलाकर इशारा करती है अब जाओ। आखिरी डिब्बा गुजरा; प्लेटफार्म खाली सब खाली खोखले मालगाड़ी के डिब्बे! दुनिया ही खाली हो गई मानो! हिरामन अपनी गाड़ी के पास लौट आया।

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यांश हिन्दी साहित्य की आंचलिक कहानीकार श्री फणीश्वर नाथ रेणु द्वारा रचित कहानी 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए मुलफाम से अवतरित है।

प्रसंग – रेणुजी एक सफल कहानीकार हैं। अपनी कहानी में जीवन के विविध रंगों का समावेश बड़ी ही सहजता से कर लेते हैं। तीसरी कसम उर्फ मारे गए मुलफाम' कहानी में भी उन्होंने प्रेम की संयोग और वियोग दोनों ही अवस्थाओं का बड़ा ही सुंदर चित्रण किया है। हीराबाई का हीरामन की गाड़ी में उसके साथ यात्रा करना हीरामन के लिए संयोग की अवस्था होती है जिसमें वह हीराबाई के सानिध्य और उसकी वस्तुओं को मात्र छूकर ही अपने प्यार की तृष्णा शांत कर लेता है किन्तु कुछ समय बाद ही हीराबाई से जब उसका बिछोह होता है। वह हीराबाई को गाड़ी में विदा करता है तो उसे लगता है उसके जीवन में सर्वत्र रीतापन ही रीतापन है कुछ पलों का साथ जहाँ उसे जीवन का असीम आनंद दे गया था अब वही बिछोह उसे अजीब सी टीस देकर जा रहा है।

भावार्थ – हीरामन हीराबाई को गाड़ी में बैठाकर उसे आसपास के स्थलों से परिचित कराता जा रहा था, इस बीच लोकगीत भी सुने। किन्तु यह सफर कहीं तो समाप्त होना ही था सो आज स्टेशन पर आकर यह समाप्त हुआ। हीरामन को लगा मानो उसके जीवन का सफर ही समाप्त हो गया। उसने हीराबाई को गाड़ी में बैठा तो दिया मगर उसे लग रहा था कि वह अपने किसी कीमती सामान को अपने से दूर कर रहा है जैसे ही गाड़ी ने सीटी दी हीरामन को लगा मानो उसके भीतर कुछ अजीब सी टूटन का स्वर निकला गाड़ी अपनी रवानी में चल पड़ी। हीरमन को लगा गाड़ी चलते ही उसका शरीर जड़ हो गया। वह पैर के अंगूठे को कुचलकर स्वयं के चैतन्यता का आभास दिलाता है।

हीराबाई जिसके लिए हीरामन केवल एक गाड़ीवान है अतः उससे बिछड़ते हुए उसे इस तरह का कोई भाव नहीं होता है। क्योंकि यह एक तरफा प्यार है। इसीलिए हीराबाई अपने रूमाल से अपना पसीना पोछकर, हाथ हिलाते हुए हीरामन को इशारा करती है कि अब वह लौट जाए। किन्तु हीरामन जड़वत वहीं खड़ा हीराबाई को देखता रहता है। गाड़ी धीरे–धीरे रफ़्तार पकड़ते हुए स्टेशन से दूर होती जाती है। स्टेशन यात्रियों की भीड़ से खाली और सूना हो जाता है। हीरामन को अपनी जिन्दगी भी इसी तरह खाली और सूनी सी लगती है वह उदास मनसे अपनी गाड़ी पर लौट आता है।

विशेष – लेखक ने क्षणिक प्रेम और उसके वियोग का चित्रण किया है। एकांगी प्रेम की अभिव्यक्ति स्पष्ट है। भाषा सरल एवं प्रसंगानुकूल है। कू...उ...ऊ ! इ...स्स!..... छी .... ई .... ई... छक्क! देशज शब्दों का सुन्दर चित्रण है।

1.6 इकाई सारांश

कहानी एक ऐसी साहित्यक विद्या है जिसका उद्देश्य मानव को रसानुभूति के साथ जीवन का संदेश देना भी है प्रस्तुत इकाई में मोहन राकेश की लेखन कला के साथ ही उनकी कहानी मलवे का मालिक जो देश में विभाजन के दौरान के हालातों से अवगत कराती है। किस तरह कुछ लोगों ने पहले धर्मवाद, जातिवाद और देशवाद के नाम पर दिलों की दूरियाँ बढ़ाई तथा निष्छल मन कैसे छला जाता है। वहीं फणीश्वरनाथ रेणु की आँचलिकता एवं कहानी तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' युवा मन के अव्यक्त प्रेम को दर्शाती है। दोनों ही कहानियाँ जीवन से जुड़ी है यथार्थ के करीब है सबसे बड़ी बात आज भी उनकी प्रासंगिकता बरकरार है।

1.7 बोध प्रश्न –

1. मदन मोहन गुगलानी मूल नाम है–

अ – फणीश्वरनाथ रेणु

ब– प्रेमचंद

स– कमलेश्वर

द– मोहन राकेश

2. लेखन में आँचलिकता के लिए जाने जाते हैं–

   अ– यशपाल

   ब–भीष्म सहानी

   स–फणीश्वर नाथ रेणु

   द– अमरकांत

3. 'जानवर और जानवर' कहानी है–

   अ– राजेन्द्र यादव

   ब– मोहन राकेश

   स– उपेन्द्र नाथ अश्क

   द– अज्ञेय

4. गनी मियाँ अमृतसर लौटा था–

   अ– साढे चार साल बाद

   ब–साढे पाँच साल बाद

स–साढे छः साल बाद

द– साढे सात साल बाद

5. 'बात बोलेगी मैं नहीं, राज खोलेगी बात ही' विचार मूल रूप से है–

अ– धूमिल

ब–विजय बहादुर सिंह

स–शमशेर सिंह

द– विनय दुबे

1.7 अपनी प्रगति जांचिए

1. मोहन राकेश ऊपरी जिन्दगी में जितने अव्यवस्थित और बिखरे हुए थे उनका लेखन उतना ही सुगठित और सुव्यवस्थित था' इस कथन के आधार पर मोहन राकेश के व्यक्तित्व औश्र कृतित्व पर एक लेख लिखिए।
2. क्या हिरामन का हीराबाई के प्रति झुकाव सही था ? अपने विचार प्रस्तुत करते हुए हिरामन के व्यक्तित्व पर दस वाक्य लिखिए ।
3. मलवे का मालिक यद्यपि विभाजन के दौर की कहानी है किन्तु आज भी इसकी प्रासंगिकता है इस संबंध में अपने विचार बताइए।
4. आँचलिकता के आधार पर फणीश्वरनाथ रेणु ने कहानी के क्षेत्र में नवीन चेतना का संचार किया, इस आधार पर उनकी कहानी कला की विशेषता बताइए।
5. 'सब कुछ बदल गया मगर बोली नहीं बदली' इस कथन के आधार पर मलवे का मालिक कहानी की समीक्षा कीजिए।

1.8 नियत कार्य/गतिविधि

1. फणीश्वर नाथ रेणु के आँचलिक कहानियाँ ठुमरी, आदिम रात्रि की महक और अच्छे आदमी को पढें और उसमें प्रस्तुत आँचलिक परिवेश पर चर्चा करें।
2. मोहन राकेश की कहानियों को नाटक के रूप में प्रस्तुत करें।
3. मोहन राकेश की कहानियों में वर्तमान संदर्भों की प्रसंगिकता पर मित्रों के बीच चर्चा करें।
4. अपने आस–पास के आँचलिक परिवेश को जानने का प्रयास करें और उस पर कोई लघु कथा लिखें।
5. केदारनाथ त्रासदी पर कोई रचना लिखने का प्रयास करें।

1.9 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

इस इकाई के अध्ययन के बाद कुछ बिंदुओं पर चर्चा तथा स्पष्टीकरण की मांग कर सकते हैं, उन बिंदुओं को नीचे अंकित कर कते हैं

1.10. 1 चर्चा के लिए बिंदु

1.11. 2 स्पष्टीकरण के बिंदु

1.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

संदर्भ –

1. मेरी प्रिय कहानियाँ : मोहन राकेश
2. ज्ञानोदय, अक्टूबर, 1968
3. पुरानी कहानी : नया पाठ' मोहन राकेश
4. आलोचना धनजंय वर्मा
5. आधुनिक साहित्यक निबंध डॉ. हौंसिला प्रसाद सिंह, डॉ त्रिभुवन सिंह
6. मोहन राकेश नाटकों में जीवन प्रकाश जोशी
7. नई कहानी की भूमिका कमलेश्वर

--------000---------

इकाई –4

हिन्दी कथा साहित्य

इकाई की रूपरेखा–

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 भीष्मसाहनी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व
1.4 चीफ की दावत कहानी की व्याख्या
1.5 कहानी की समीक्षा
    1.5.1 कथानक के आधार पर –
    1.5.2 चरित्र–चित्रण के आधार पर –
    1.5.3 कथोपकथन के आधार पर –
    1.5.4 शिल्पविधान के आधार पर –
    1.5.5 देशकाल और वातावरण के आधार पर –
    1.5.6 भाषा शैली के आधार पर –
    1.5.7 उद्देश्य के आधार पर –
1.6 अमरकान्त के व्यक्तित्व एवं कृतित्व
1.7 कहानी दोपहर का भोजन की व्याख्या
1.8 कहानी तत्वों के आधार पर कहानी की समीक्षा
    1.8.1 कथानक के आधार पर –
    1.8.2 चरित्र–चित्रण के आधार पर –
    1.8.3 कथोपकथन के आधार पर –
    1.8.4 शिल्पविधान के आधार पर –
    1.8.5 देशकाल और वातावरण के आधार पर –
    1.8.6 भाषा शैली के आधार पर –
    1.8.7 उद्देश्य के आधार पर –
1.9 अमरकान्त की कहानी की विशेषता–
1.10 इकाई सारांश
1.11 अपनी प्रगति जांचिए
1.12 नियत कार्य/गतिविधि
1.13 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के
    1.13.1 चर्चा के लिए बिंदु
    1.34.2 स्पष्टीकरण के बिंदु

1.14 बोध प्रश्न

1.15 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.16 कुछ उपयोगी पुस्तक

1.1 प्रस्तावना

हिन्दी लेखन में प्रगति की समाजोन्मुखता की लहर बहुत पहले नवजागरण काल से ही उठने लगी थी। प्रगतिवादी साहित्य के प्रारम्भिक दौर में प्रेमचन्द्र, पंत, निराला और उग्र जैसे महान् साहित्यकारों का नेतृत्व एवं मार्गदर्शन हिन्दी साहित्य जगत को मिला। कथा साहित्य में आगमन हुआ प्रगतिवादी कथा आन्दोलन और भीष्म साहनी के कथा साहित्य का, स्वातन्त्रयोत्तर लेखकों की भाँति 'भीष्म साहनी ' सहज मानवीय अनुभूतियों और तत्कालीन जीवन के अन्तर्हृद को लेकर सामने आए और उसे रचना का विषय बनाया । वे जनवादी चेतना के लेखक कहलाए। भीष्म जी के लेखन का आधार जनता की पीड़ा है। जनसामान्य के प्रति समर्पित साहनी जी का लेखन यथार्थ की ठोस जमीन से जुड़ा है। भीष्म जी एक ऐसे साहित्यकार थे जो बात को मात्र कह देना ही नहीं बल्कि बात की सच्चाई और गहराई को नाप लेना भी उतना ही आवश्यक समझते थे। वे अपने साहित्य के माध्यम से लोगों को सामाजिक विषमता व संघर्ष के बन्धनों को तोड़कर आगे बढ़ने का आह्वाहन करते है। उनके साहित्य में सर्वत्र मानवीय करूणा, मानवीय मूल्य व नैतिकता विद्यमान है।

अमरकांत की कहानी दोपहर का भोजन में एक ऐसी परिवार की कथा हे जो शासन की दुर्नीत का शिकार है। दोपहर का भोजन अमरकांत द्वारा रचित मध्यमवर्गीय कहानी कार की मार्मिक पीड़ा को अभिव्यक्ति देता है। जिसमें कहानी कार ने यथार्थवादी दृष्टिकोष अपनाया है। यद्यपि कहानी प्राचीन है किन्तु उसकी प्रासंसिकता आज भी समाज में बनी हुई है।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य नई कहानी और कहानीकारों से छात्रों को अवगत कराना है। नई कहानी जो जीवन के संघर्ष, लघु मानव की तृष्णा के साथ जीवन में छाई निराशा एवं सर्वहारा वर्ग की पीड़ा को उजागर करना है । इन कहानियों के माध्यम से छात्रगण जीवन के यथार्थ से रू–ब–रू होंगे तथा जीवन के संघर्ष को पहचानेंगे। उनमें सर्वहारा वर्ग के प्रति संवेदना जागृत करना तथा देश के हालातों के प्रति युवावर्ग को चिंतन हेतु प्रेरित करना ही इस इकाई का उद्देश्य है।

भीष्म साहनी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का परिचय

1930 के बाद का दौर प्रगतिवादी आन्दोलन के बाद उभर रहे यथार्थवादी परिणामों व परिस्थितियों को विकसित करने वाला दौर था। इस आन्दोलन ने सामाजिकता से परिपुष्ट यथार्थवादी कथा साहित्य की नींव रखी। प्रगतिवादी साहित्य को प्रारम्भिक दौर में इंस प्रेमचन्द्र,

पंत, निराला और उग्र जैसे महान् साहित्यकारों का नेतृत्व एवं मार्गदर्शन मिला परन्तु उपन्यास के माध्यम से मार्क्सवादी विचारों को जनता तक पहुँचाया राहुल सांकृत्यायन ने।

जहाँ तक प्रगतिवादी कथा आन्दोलन और भीष्म साहनी के कथा साहित्य का प्रश्न है तो प्रथम इस काल की सीमा में बद्ध करना उचित नहीं है। वैसे हिन्दी लेखन में प्रगति की समाजोन्मुखता की लहर बहुत पहले नवजागरण काल से ही उठने लगी थी। मार्क्सवाद ने उसमें केवल एक और आयाम जोड़ा था। इसी मार्क्सवादी चिन्तन को मानवतावादी दृष्टिकोण से जोड़कर उसे जन–जन तक पहुंचाने वालों में एक सार्थक प्रयास भीष्म साहनी जी का है। स्वातन्त्रयोत्तर लेखकों की भाँति 'भीष्म साहनी 'सहज मानवीय अनुभूतियों और तत्कालीन जीवन के अन्तर्हृद को लेकर सामने आए और उसे रचना का विषय बनाया । वे जनवादी चेतना के लेखक कहलाए। भीष्म जी के लेखन का आधार जनता की पीड़ा है। जनसामान्य के प्रति समर्पित साहनी जी का लेखन यथार्थ की ठोस जमीन से जुड़ा है।

सही मायने में कहें तो भीष्म जी एक ऐसे साहित्यकार थे जो बात को मात्र कह देना ही नहीं बल्कि बात की सच्चाई और गहराई को नाप लेना भी उतना ही आवश्यक समझते थे। वे अपने साहित्य के माध्यम से लोगों को सामाजिक विषमता व संघर्ष के बन्धनों को तोड़कर आगे बढ़ने का आह्वाहन करते है। उनके साहित्य में सर्वत्र मानवीय करूणा, मानवीय मूल्य व नैतिकता विद्यमान है।

उनकी कहानी **अबला, नीली आँखे, भाग्यरेखा, पटरियाँ, पहला पाठ, भटकती राख, वाड.चू, शोभायात्रा, निशाचर, पाली** काफी चर्चित रहीं वहीं **झरोखे, कड़ियाँ, तमस, बसन्ती, मथ्यादासा की माड़ी, कुंतो, नीलू नीलिमा नीलोफर** नामक उपन्यासों की रचना की। नाटकों के क्षेत्र में भी उन्होंने **हानूश, कबिरा खड़ा बाज़ार में, माधवी मुआवजे** जैसे प्रसिद्ध प्राप्त नाटक लिखे। जीवनी साहित्य के अन्तगर्त उन्होंने **मेरे भाई बलराज, अपनी बात, मेरे साक्षात्कार** तथा बाल साहित्य के अन्तगर्त **वापसी, गुलेल का खेल** का सृजन कर साहित्य की हर विधा पर अपनी कलम अजमायी। अपनी मृत्यु के कुछ दिन पहले उन्होंने **आज के अतीत** नामक आत्मकथा का प्रकाशन किया।

भीष्म जी स्वतंत्र व्यक्तित्व वाले गहन मानवीय संवेदना के सशक्त हस्ताक्षर थे। आपने अपने उपन्यासों में भारत के सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक यथार्थ का स्पष्ट चित्र प्रस्तुत किया। उनकी यथार्थवादी दृष्टि उनके प्रगतिशील व मार्क्सवादी विचारों का प्रतिफल थी। भीष्म जी की सबसे बड़ी विशेषता थी कि उन्होंने जिस जीवन को जिया, जिन संघर्षों को झेला, उसी का यथावत् चित्र अपनी रचनाओं में अंकित किया। इसी कारण उनके रचना कर्म और जीवन धर्म में हमें कोई भेद नजर नहीं आता। वह लेखन की सच्चाई को एक साहित्यकार का प्रथम कर्त्तव्य मानते हैं।

कथाकार के रूप में भीष्म जी पर यशपाल और प्रेमचन्द्र का गहरा प्रभाव देखने को मिलता है। उनकी कहानियों में अन्तर्विरोधों व जीवन के द्वंद्वों, विसंगतियों, अभावों से जकड़े मध्यवर्ग के साथ ही निम्नवर्ग जिजीविषा और संघर्षशीलता को चित्रित किया गया है। भीष्म साहनी ने अपनी कथाओं में सामान्य जन की आशा, आकांक्षा, दुःख, पीड़ा, अभाव, संघर्ष तथा विडम्बनाओं को अपने उपन्यासों से ओझल नहीं होने दिया। नई कहानी में भीष्म जी ने कथा साहित्य की कल्पनात्मक उड़ान को तोड़कर उसे ठोस सामाजिक आधार दिया। भीष्म जी देश के बँटवारे के साक्षी रहे हैं अथवा कहें कि उन्होंने विभाजन के दुर्भाग्यपूर्ण खूनी इतिहास को भोगा

है। जिसकी अभिव्यक्ति तमस के रूप में पाठकों के समक्ष आई। जहाँ तक नारी मुक्ति समस्या का प्रश्न है, भीष्म जी नारी मुक्ति के समर्थक थे तथा समाज में नारी की सम्मानजनक स्थिति के समर्थक थे। इसी से उनकी रचनाओं में नारी के व्यक्तित्व, विकास, स्वतन्त्रता, एकाधिकार, आर्थिक स्वतन्त्रता, स्त्री शिक्षा तथा सामाजिक उत्तरदायित्व आदि का भाव देखने को मिलता है। एक तरह से देखा जाए तो साहनी जी प्रेमचन्द्र के पदचिन्हों पर चलते हुए उनसे भी कहीं आगे निकल गए है। इतना ही नहीं उन्होंने राजनैतिक मतवाद अथवा दलीयता के आरोप से दूर भीष्म साहनी ने भारतीय राजनीति में निरन्तर बढ़ते भ्रष्टाचार, नेताओं की पाखण्डी प्रवृत्ति, चुनावों की भ्रष्ट प्रणाली, राजनीति में धार्मिक भावना, साम्प्रदायिकता, जातिवाद का दुरूपयोग, भाई–भतीजावाद, नैतिक मूल्यों का ह्रास, व्यापक स्तर पर आचरण भ्रष्टता, शोषण की षडयन्त्रकारी प्रवृत्तियां व राजनैतिक आदर्शों के खोखलेपन आदि का चित्रण बड़ी प्रमाणिकता व तटस्थता के साथ किया। उनकी कहानियों में शोषणहीन, समतामूलक प्रगतिशील समाज की रचना, परिवारिक स्तर, रूढ़ियों का विरोध तथा संयुक्त परिवार के पारस्परिक विघटन की स्थितियों के प्रति असन्तोष व्यक्त हुआ। भीष्म जी का सांस्कृतिक दृष्टिकोण नितान्त वैज्ञानिक और व्यवहारिक है, जो निरन्तर परिष्करण, परिशोधन व परिवर्धन की प्रक्रिया से गुजरते है। प्रगतिशील दृष्टि के कारण वह मूल्यों पर आधारित ऐसी धर्मभावना के पक्षधर हैं जो मानव मात्र के कल्याण के प्रति प्रतिबद्ध और उपादेय है।

उनकी कहानियों में जहाँ एक ओर सहृदयता व सहानुभूति है। वही दूसरी ओर जातीय तथा राष्ट्रीयता स्वाभिमान की आग भी है। वे पूँजीवादी और यथार्थवादी विचार धारा के अन्तर्विरोधों को खोलते चलते हैं। निम्न मध्यवर्ग के समर्थक रचनाकार भीष्म जी भारतीय समाज के आधुनिकीकरण के फलस्वरूप विश्व साम्राज्यवाद और देशी पूँजीवाद में व्याप्त भ्रष्टाचार का पर्दाफाश करते हैं। वे मध्ययुगीन सामन्ती व्यवस्था से समझौता करके पूँजीवाद के द्वारा अपनी बुर्जुआ संस्कृति से लोकप्रिय हुई निम्नकोटी के बुर्जुआ संस्कारों को चित्रित कर प्रेमचन्द की परम्परा को आगे बढ़ाते दिखते हैं। वे एक ओर आधुनिकताबोध की विसंगतियों और अजनबीपन के विरूद्ध लड़ते हैं तो दूसरी ओर रूढ़ियों अंधविश्वासों वाली धार्मिक कुरीतियों पर प्रहार करते हैं।

यदि स्त्री पुरूष सम्बन्ध की बात की जाए तो भीष्म जी भारतीय गृहस्थ जीवन में स्त्री पुरूष के जीवन को रथ के दो पहियों के रूप में स्वीकार करते हैं। विकास और सुखी जीवन के लिए दोनों के बीच आदर्श संतुलन और सामंजस्य का बना रहना अनिवार्य है। उनकी रचनाओं में सामंजस्यपूर्ण जीवन जीने वाले आदर्श दम्पत्तियों को बड़ी गरिमा के साथ रेखांकित किया गया है। उनका विश्वास है कि स्त्रियों के लिए समुचित शिक्षा, आर्थिक स्वतंत्रता व व्यक्तित्व विकास की सुविधा आदर्श समाज की रचना के लिए नितान्त आवश्यक है। वह स्त्रियों के व्यक्तित्व विकास के पक्षपाती थे। जो अवसर पाकर अपना चरम विकास कर सकती है। भीष्म जी परम्परा से चली आ रही विवाह की जड़ परम्परा को स्वीकार न करके भावनात्मक एकता और रागात्मक अनुबंधो को विवाह का प्रमुख आधार मानते थे।

मानवीय मूल्यों पर आधारित उनकी धर्म भावना इंसान को इंसान से जोड़ते है न कि उन्हें पृथक करता है। उनकी कहानियों में शोषणविहीन समतामूलक प्रगतिशील समाज की स्थापना के साथ समाज में व्याप्त आर्थिक विसंगतियों के त्रासद परिणाम, धर्म की विद्रुपता व खोखलेपन को उद्घाटित किया गया है।

मार्क्सवाद से प्रभावित होने के कारण भीष्म जी समाज में व्याप्त आर्थिक विसंगतियों के त्रासद परिणामों को बड़ी गंभीरता से अनुभव करते थे। पूँजीवादी व्यावस्था के अंतर्गत वह जन सामान्य के बहुआयामी शोषण को सामाजिक विकास में सर्वाधिक बाधक और अमानवीय मानते थे। एक शिल्पी के रूप में भी सिद्धहस्त कलाकार थे। कथ्य और वस्तु के प्रति यदि उनमें सजगता और तत्परता का भाव था तो शिल्प सौष्ठव के प्रति भी निरन्तर सावधान रहते थे।

भीष्म जी प्रेमचन्द्र के समान जीवन की विसंगतियों और विडम्बनाओं को अपनी रचनाओं में अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं भले ही वह प्रेमचन्द्र की भाँति ग्रामीण वस्तु को नहीं पकड़ पाये किन्तु परिवेश की समग्रता में वस्तु और पात्र के अन्तः सम्बन्धों को जिस प्रकार खोलते हैं और इन सम्बन्धों में जनता के मुक्तकामी संघर्षों को रूपायित करते हैं वह निश्चित रूप से उन्हें न केवल प्रेमचन्द्र के निकट पहुँचाता है अपितु उसमें नया भीष्म भी जुड़ जाता है। अपनी रचनाओं में जहाँ उन्होंने जीवन के कटुतम यथार्थों का प्रमाणिक चित्रण किया है वहीं जनसामान्य का मंगलविधान करने वाले लोकोपकारक आदर्शों को भी रेखांकित किया है। अपनी इन्ही कालजयी रचनाओं के कारण वह हिन्दी साहित्य में युगान्तकारी साहित्यकार के रूप में चिरस्मरणीय रहेगें।

व्याख्या (चीफ की दावत)

1. सात बजते–बजते माँ का दिल धक–धक करने लगा। अगर चीफ सामने आ गया और उसने कुछ पूछा तो वह क्या जवाब देंगी। अँग्रेज को तो दूर से ही देख कर घबरा उठती थीं। यह तो अमरीकी है न मालूम क्या पूछे। मैं क्या कहूँगी। माँ का जी चाहा कि चुपचाप पिछवाड़े विधवा सहेली के घर चली जाएँ। मगर बेटे के हुक्म को कैसे टाल सकती थी। चुपचाप कुर्सी पर से टांगे लटकाए वहीं बैठी रही।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ भीष्म साहनी द्वारा रचित कहानी 'चीफ की दावत' से अवतरित है।

प्रसंग : प्रस्तुत कहानी में कहानीकार ने 'चीफ की दावत' के माध्यम से दो पीढ़ी के बीच आए रिश्तों को लेकर सोच को उजागर किया हे। यह कहानी वर्तमान समाज में रिश्तों को लेकर हुए ह्रास के प्रति एक चिंतन व्यक्त करती है।

भावार्थ – शामनाथ जो इस कहानी का प्रमुख पात्र है। अपने चीफ को घर पर दावत के लिए आमंत्रित करता है। साथ में कई अन्य लोग भी इस दावत में शामिल होने वाले है। किन्तु शामनाथ को लगता है कि बुराने चलन वाली उसकी मां कहीं दावत में उसकी शन कम न करे दे। अनपढ़, नये तौर–तरीकों से अंजान उसकी मां और अमेरिका का रहवासी उसका चीफ कहीं मां को सख्त हिदायत देता हैं कि वह चीफ के सामने न आए कहीं गलती से सामना हो भी जाए तो वह इसके लिए मां का रूपरंग भी परिवर्तित कर देता है। बार–बार हिदायत मिलने से मां भी भयभीत हो जाती है कि कहीं उसकी वजह से घर की शांति न भंग हो जाए।

अतः जैसे–जैसे दावत का समय निकट आता जाता है मां की घबराहट बढ़ती जाती है। यद्यपि उसने तय कर लिया है कि वह अपनी कोठरी में ही बैठी रहेगी चीफ के सामने नहीं आएगी। किन्तु यदि किसी कारणवश चीफ से सामना हो जाए तो ..... ? चीफ ने उससे

कुछ पूछ लिया तो .....? वह क्या जवाब देगी ? चीफ तो अंग्रेज हैं अमेरिका का रहने वाला है और अंग्रेजी तो वह बिलकुल नहीं जानती वहीं अंग्रेज को तो वह दूरसे देखकर ही डर जाती है। कही चीफ के कुछ पूछने पर वह जवाब न दे पाई या कोई ऐसी–वैसी बात हो गई तो उसे बेटे का कोप भाजन बनना पड़ेगा।

इस भय से मां का मन पलायन करने को चाहता है कि वह पिछवाड़े की अपनी सखी के घर चली जाए किन्तु बेटे के हुक्म की अवहेलना से भी डरती है, इसलिए विवश हो चुपचाप कुर्सी पर टॉगे लटकाए बैठी रहती है।

कहानी का दूसरा परिदृश्य जिसमें तथा कथित सभ्य समाज अपनी खुशियां मना रहा है। मदिरा आज की पार्टी की सफलता का पैमाना है इस दृष्टि से शामनाथ की यह पार्टी पूर्णतः सफल रही है। मदिरा का असर लोगों के दिलों–दिमाग पर छाने लगा है अर्थात् सभी के कदम थिरकने लगे हैं, अल्फाज बहकने लगे है। साहब को व्हिस्की का टेस्ट, ब्रांड पसंद आया तो उनकी पत्नी को पर्दे व सोफा कव्हर, कमरे की सजावट पसंद आयी। कुल मिलाकर शामनााथ का चीफ को दावत देने का उद्देश्य सार्थक हो रहा था। वह चीफ और एकी पत्नी पर प्रभाव जमाने में सफल होरहा है। उनकी पत्नी अपने परिधन एवं विदेशी हावभाव से सभी स्त्रियों के सम्मोहन का केन्द्र बनी हुई है। वही साहब जो दफ्तर में जितने औपचारिक हैं घर पर उतने ही अनौपचारिक बने हुए है।। सारा वातावरण महक रहा है।

उपरोक्त पंक्तियों के माध्यम से लेखक ने यह कहने का प्रयास किया है कि वर्तमान समाज जिसे हम सभ्यता का दर्जा देते हैं, वस्तुतः हमारा दृष्टिकोण कितना थोथ है कि हम व्यक्ति को उसके आतंरिक गुणों से नहीं। बाहरी तामझाम से परखते हैं।

विशेष – प्रस्तुत कहानी में लेखक ने रिश्तों के खोखलेपन के साथ–साथ भारतीय परिवारों में विधवा स्त्री की लाचारी और बेबसी को प्रदर्शित किया है। साथ ही शिक्षा पर भी व्यंग्य प्रस्तुत किया है कि पहले हम तन से अंग्रेजों और अंग्रेजी के गुलाम थे अब तो हम मन से भी अंग्रेजी के समक्ष पराधीनता स्वीकार किए हुए है।

2. मगर कोठरी में बैठने की देर थी कि आँखों में छल–छल आँसू बहने लगे। वह दुपट्टे से बार–बार उन्हें पोंठती पर वह बार–बार उमड़ आते जैसे बरसों का बाँध तोड़ कर उमड़ आए हों। माँ ने बहुतेरा दिल को समझााया हाथ जोड़े भगवान का नाम लिया बेटे के चिरायु होने की प्रार्थना की बार–बार आँखें बंद की मगर आँसू बरसात क`पानी की तरह जैसे थमने में ही न आते थे।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां भीष्म साहनी द्वारा रचित कहानी 'चीफ की दावत' से अवतरित है।

प्रसंग – पूर्व निर्धारित योजनाओं पर चलकरभी जब मां का चीफ से सामना हो जाता है और वह बेटे के बदलते स्वरूप को देखकर आहत होती है। दुविधा में है बेटे के व्यवहार को देखकर दुखी भी है, वहां कसे चले जाना चाहती है किन्तु उसके भीतर बैठी मां उसे इन सबसे रोकती हे।

भावार्थ – चीफ से सामना होने पर मां एक पल को घबरा जाती है। फिर चीफ के अंग्रेजी वाक्यों का जवाब देने पर उपहास की पात्र भी बनती है। यद्यपि चीफ का भाव उसके प्रति अच्छा होता है। किन्तु किसी के आदेश पर गाना गाकर सुनाना। न दिखाई देने पर भी

फुलकारी बनाने की हामी भरना। मां को ..... लगता है मानो वह बेटे के सामने एक कठपुतली बनी हुई है जिसे शामनाथ जब जैसे–जैसे चाहे घुमा रहा है। चीफ के चले जाने पर अपने कोठरी में चली जाती है। जहाँ बैठते ही उसकी बेबसी रूदन के रूप में फूट पड़ती है। आंखों से आंसू छलक पड़ते है। बार–बार रोकने पर भी रूकने का नाम नहीं लेते मानो बांध तोड़कर उमड़ आए हो। वह अपने आपको समझाने का अथक प्रयास भी करती है, भगवान की भक्ति में मन लगाने का प्रयास भी किया। बेटे के व्यवहार को नजर अंदाज करने की बहुत कोशिश की, उसके मंगलकामना भी की किन्तु अपने भीतर के दर्द को रोक न सकी उसकी पीड़ा आंसू के रूप में सतत प्रवाहित होती रही है।

विशेष – एक मां जब संतान को जन्म देती है, उसकी परवरिश में स्वयं का अस्तित्व भुला केवल मां के रूप में ही जीवित रहती है और जब वही संतान बड़े होकर उस मां के अस्तित्व को सिरे से नकार देता है तब उस मां की पीड़ा को कहानीकार ने इस प्रसंग के माध्यम से चित्रित किया है। भाषा मार्मिक है।

चीफ की दावत कहानी की समीक्षा कीजिए –

कहानी कला के तत्वों के आधार पर चीफ कीर दावत कहानी का कहानी कला के आधार पर विवेचन प्रस्तुत है –

1. कथावस्तु –

'चीफ की दावत' भीष्म साहनी जी ऐसी कहानी है जो वर्तमान दौर में बाजारू होते रिश्तों, मर्यादा खोते परिवार की कहानी है। जिसमें चीफ जो किसी दफ्तर के अधिकारी हैं। कहानी का प्रमुख पात्र शामनाथ उन्हीं के अधीनस्थ कर्मचारी है और किसी भी तरीके से अपने चीफ को खुश रखकर पदोन्नति पाना चाहते हैं। इसके लिए वे एक बार अपनेघर अपने अफसर को दोपहर के भोजन हेतु आमंत्रित करता है ताकि वह अपने अफसर को खुश कर सके संभवतः उसने सुन रखा है कि किसी को खुश करने का रास्ता उसके पेट से होकर निकलता है।

वहीं कहानी की एक और घटना की ओर लेखक पाठकों का ध्यान आकर्षित करते हैं आज की नई पीढ़ी की समस्या जिनके लिए बुजुर्ग केवल बोझ हैं, ये समझते हैं इन्हें इतनी आवश्यकता नहीं है। जबकि ये बुजुर्ग उन्हें हरकदम जिन्दगी की धूप से बचाते हैं। इनके अनुभव की गठरी नई पीढ़ी के बोझ को कई गुना कम करती है। इसी पिटारे में उनकी कई सस्याओं का हल है। इस बात का प्रमाण उन्होंने चीफ के भोजन के दौरान मां के हाथों की फुलकारी बहुत पसंद आती है। अब तक जो शामनाथ मां को उपेक्षित रखता है। चीफ की बात सुनकर अनायास उस मां के प्रति प्रेम उमड़ पड़ता है।

प्रस्तुत कथानक के माध्यम से लेखक ने जनरेशन गेप को दर्शाया है। दोनों पीढ़ी के दृष्टिकोण के अंतर को दर्शाया है। परिवार का बुजूर्ग वर्ग जो अपने बच्चों की खुशी देखना चाहता है। वही नई पीढ़ी केवल अपने को सुखी एवं सुविधा संपन्न देखना चाहता है। शामनाथ की मां जो अब तक बेटे की उपेक्षित नजर से पीड़ित थी और घर छोड़कर जाना चाहती थी

किन्तु जब बात बेटै की तरक्की पर आती है कि उसके द्वारा फुलकारी बनाने पर चीफ बेटे की उन्नति कर देगा। वह अपना अपमान भूलकरी फुलकारी बनाने को तैयार हो जाती है।

2. पात्र योजना –

कहानी को गति प्रदान करते है पात्र। प्रस्तुत कहानी 'चीफ की दावत' में शामनाथ उसकी मां एवं चीफ ये तीन प्रमुख पात्र है। शामनाथ अपनी उन्नति के लिए अधिकारी को भोजन पर आमंत्रित करता है। शामनाथ की मां पुराने जमाने की अनपढ़ एवं सीधी–सादी महिला है। कहीं मां को देखकर चीफ पर उनके प्रति गलत प्रभाव न पड़ जाए इसलिए शामनाथ मां को एक कोठरी में ही बैठे रहने का आदेश देता है। वहीं शामनाथ की पत्नी भी अपने पति की इस सोच में उसका साथ देती है। इन दोनों की पात्रों के माध्यम से लेखक ने समाज की नई पीढ़ी की स्वार्थ लिप्ता को दर्शाया है।

कहानी का रूख पलटता है तब, जब चीफ का अनयास मां से सामना हो जाता है। और वे मां को बहुत पसंद करते हैं उनसे बातें करते हैं। उनकी बनाई चीजों की प्रशंसा करते हुए अपने लिए भी फुलकारी बनाने को कहते है। शामनाथ एक महत्वाकांक्षी व्यक्ति है जो अपनी उन्नति पाने और चीफ को खुश रखने के लिए मां से फुलकारी बनाने की प्रार्थना करता है। मां जिसे आंखें से कम दिखाई देता है किन्तु जब उसे पता चलाता है कि उसके फुलकारी बनाने से बेटे को ऊँचा पद मिलेगा तो वह खुशी–खुशी यह बनाने को तैयार हो जाती है।

कहने का आशय कहानी में लेखक ने तीन मनोवृत्ति के पात्र बताए हैं। एक बुजुर्ग पीढ़ी जो उपेक्षित होकर भी त्याग को तत्पर है। दूसरी ऐसी नई पीएत्री जो केवल अपने स्वार्थ ें लिप्त है। तीसरे वह वर्ग जो वैभवयुक्त जीवन के बीच बुजुर्गो की कमी को महसूस कर रहा है। लेखक ने तीनों की तरह के पात्रों का बाखूबी चित्रण किया है। उनके पात्र अपने चरित्र चित्रण के प्रति न्याय कर पाए हैं।

3. संवाद योजना – कहानी में जहां पात्र कथा को गति प्रदान करते हैं वहीं पात्रों की मानसिक स्थिति तथा स्थिति को अभिव्यक्त करने हेतु कथाकार संवादों की रचना करता है। यहीं संवाद कथा को रोचकता प्रदान करते हैं। कहानी को मुखटता प्रदान करते हैं, पाठक की बोधगम्यता को सरस बनाते हैं। भीष्म साहनीकृत कहानी 'चीफ की दावत' में पात्रों के अनुकूल संवादों की संरचना की है। चीफ को घर पर दावत हेतु आमंत्रित करने पर शामनाथ के लिए मां एक प्रश्न चिन्ह बनकर खड़ी हो जाती है। कि कहीं मां के रहन–सहन एवं बोलचाल का पुराना ढर्रा उसकी उन्नति में बाधक न बने। ऐसी स्थिति में शामनाथ का बीबी को यह कहना ''अच्छी भली यह भाई के पास जा रही थी। तुमने यूँ ही खुद अच्छा बनने के लिए बीच में टांग अड़ा दी।

वहीं शामनाथ जब चीफ के आने पर मां के बर्ताव की रिहर्सल करा रहा था, कैसे बैठना ? कैसे चलना है ? क्या पहनना है ? फिर शामनाथ का कहना –'चलो ठीक है। कोई चूड़ियां–बुडियां हो तो पहन लेना। तब मां का मार्मिक कथन –

''चूड़ियां कहां से लाऊँ, बेटा ? तुम तो जानते हो, सब जेवर तुम्हारी पढ़ाई में बिक गए।''

पाठकों के मन में संवेदना जगाते हैं

वही चीफ द्वारा मां से हाथ मिलाकर हाउ डू यू डू कहता है। तब शामनाथ जबरदस्ती मां से अंग्रेजी शब्द कहलवाने का प्रयास करता है। ऐसे में मां का कहना हौ डू डू .....

उसी तरह क्षीण, दुर्बल, लरजती आवाज में विवाह गीत गाना –

'रिया की माए, हरिया नी भैणे,

हरिया ते भागी भरिया है।''

ये सभी संवाद पात्रों के भावों का चित्रण करने में न केवल सक्षम रहे हैं। बल्कि संक्षिप्त होते हुए भी कहानी को रोचक एक सजीव बनाने में सफल हुए है।

4. देशकाल और वातावरण –

प्रस्तुत कहानी को सरसरी निगाह से देखने पर लगता है कि कहानी एक छोटो से परिवेश को लक्ष्य कर लिखी गई है जिसमें केवल एक मकान के भीतर ही कथावस्तु का आरंभ कर वहीं उसका समापन कर दिया गया है। पात्र भी महज तीन चार है चीफ, शामनाथ और मां। किन्तु सूक्ष्म अध्ययन करने पर हम देखते हैं कि प्रस्तुत कहानी में साहनी जी ने जिस वातावरण की सृष्टि की है उसमें संपूर्ण नगरीय एवं ग्रामीण समाज शामिल है। आज महानगरों की सभ्यता का प्रतीक है देर रात तक पार्टी का चलना ड्रिंक पर ड्रिंक, मास, मछली का खानपान। वहीं ग्रामीण परिवेश को मुखर करती जो संयमित एवं सादगीपूर्ण जीवन व्यतीत करती है। वहीं स्वयं को शिक्षित कहने वाला समाज है चीफ का परिवार दूसरी ओर ग्रामीण स्तर की अशिक्षित, संसार के छल–छद्म से दूर लाचारी विवशता का जीवन व्यतीत करती है मां और इन दोनों के बीच उलझन की स्थिति में है नई पीढ़ी जो न तो पूरी तरह शहरी वातावरण में ही ढल पाती है न ही ग्रामीण परिवेश से संतुलन बना पाती है। परिणाम वह बीच में ही असमंजस की स्थिति में रहती है।

ऐसे ही शहरीएवं ग्रामीण परिवेश को लेखक ने बहु ही सुंदरता से इन पंक्तियों के माध्यम से चित्रित किया है।

'बरामदे में पहुंचते ही शामनाथ सहसा ठिठक गये। जो दृश्य उन्होंने देखा उसमें टांगे लड़खड़ा गयी और क्षणभर में सारा नशा हिरन होने लगा। बरामदे में एक कोठरी के बाहर मां अपनी कुसी पर ज्यों कि त्यों बैठी थी। मुंहसे लगातार खर्राटों की आवाज आ रही थी। जब सिर कुछ देर के लिए टेढ़ा। होकर एक तरफ थम जाता तो खर्राटे और भी गहरे हो उठते। फिर जब झटके सेनींद टूटती तो सिर फिर दायें से बायें झूलने लगता। पल्ल सिर से सिसक आजा मां के झड़े हुए बाल आधे गंजे सिर पर अस्तव्यस्त बिखर रहे थे।

प्रस्तुत पंक्ति में बरामदे के भीतर दृश्य जहाँ आज की कथत चकाचौंध भरे सभ्य समाज को रेखांकित करता है वहीं बाहर कोठरी में आड़ाम्बर से दूर जीवन के यथार्थ को जीती माँ है। लेखक ने एक छोटे सी पृष्ठभूमि में जिस कुशलता से दोनों परिवेश को जीवित किया है। यह उनके कौशल का प्रतीक है

5. भाषा शैली –

कहानीकार ने भाषा का समायोजन यथार्थ के निकट पात्रों के अनुकूल एवं देशकाल को दृष्टिगत रखकर किया है। यही कारण है भाषा उनके कथ्य के प्रवाह को सजीव एवं रोचक बना सकती है। भाषा में परिवेश का रंग तो है ही, पात्रों को भी कथाकार ने भाषा के माध्यम से रेखांकित किया है। साहनी जी की भाषा में शैली की प्रौढ़ता के साथ भाषा की गंभीरता भी देखने को मिलती है। जिस तरह हम शो केस में चीजों को सज्जित करने हेतु उन्हें धो–पोंछकर सलीके से रख देते हैं शामनाथ भी चीफ के आने पर कहीं गलती से माँ का सामना न हो जाए अतः वह माँ को भी शो केस में रखी वस्तु की तरह तैयार करता हे। लेखक को इन पंक्तियों में माँ को रेखांकित किया है।

'माँ सफेद कमीज और सफेद सलवार पहनकर बाहर निकली छोटा सा सूखा हुआ शरीर धुंधली ऑखें, केवल सिर के आधे झड़े हुए बाल पल्लें की ओर से छिप पाए थे। पहले से कुछ ही कम करूप नजर आ रही थी।

इसी तरह संपूर्ण कहानी में कहानीकार ने वर्णनात्मक एवं विवरणात्मक शैली का प्रयोग किया हैं। भीष्म जी एक ख्याती प्राप्त कहानीकार हैं भाषा और शैली में उनकी निपुणता है। इसी से उनकी कहानी स्वाभाविक एवं प्रभावशाली बन पड़ी हें

6. उद्देश्य –

प्रस्तुत कहानी के माध्यम से कहानीकार ने दो वर्गो की मानसिकता को चित्रित किया है। हमारे समाज का एक वर्ग है जो रिश्तों को जीता है, इन्हें निभाने के लिए हर संघर्ष का सामना करता हैं। जैसे कि माँ जो बेटे को पढ़ाने की खातिर अपने जेवर भी बेच चुकी है। वहीं दूसरा वर्ग है जो रिश्तों को बाजार में ले आया है। उन्हें जब उनकी जरूरत है उनके लाभ की संभावना है वे उसे चैक की तरह भुनाते हैं और आवश्यकता न होने पर कोढरी के हवाले कर देते हैं। जिसका प्रतिनिधत्व करता है शामनाथ। जो माँ को अनुपयोगी समझ ?घर की पिछली कोठरी में बैठने का आदेश देता है। किन्तु जब चीफ को माँ के साथ खुश देखकर माँ के द्वारा फुलकारी बनाने पर अपनी उन्नति की संभावना देखता है तो पुनः माँ के प्रति अनुराग जाग जाता हैं।

'चीफ की दावत' कहानी का उद्देश्य ही समाज के इन दोनों वर्गो से समाज को अवगत कराना था। कहानी अपने उद्देश्यपूर्ति में पूर्णतः सफल हुई है।

7. शीर्षक –

कहानी का शीर्षक है चीफ की दावत जिसे पढ़ते ही पाठक को कहानी का अर्थ स्पष्ट हो जाता है कि प्रस्तुत कहानी में दफ्तर के किसी अधिकारी की दावत है, और उस दावत के लिए अधीनस्थ कर्मचारी चिंतित है। अपनी उन्नति के लिए वह हर रास्ते प्रयोग करने को तैयार है। जिसमें वह माँ को भी हथियार की तरह प्रयोग करता है। कहानीकार ने कहानी का शीर्षक सर्वथा उपयुक्त सार्थक एवं प्रभावशाली रखा हे। जो अपने प्रभाव को उद्घाटित करने में पूर्णतः समर्थ है।

उपरोक्त विवेयन के आधार पर हम कह सकते है कि कहानी कला की दृष्टि से 'चीफ की दावत' एक सार्थक एवं प्रभावशाली कहानी है।

कहानीकार–अमरकान्त

प्रत्येक युग का साहित्य अपनी विशेष सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक स्थितियों से प्रभावित होकर जीवन संघर्ष में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है वह जीवन की मर्म छवियों को इस प्रकार अंकित करता है कि उससे हमारी मूल्य चेतना गहरे प्रभावित होती है। इस दृष्टि से देखें तो 1950 के बाद के कथाकारों में अमरकांत का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उन्होंने अपनी कहानियों के माध्यम से उन परिस्थितियों को उजागर किया है जिनकी वजह से समाज आज दो भागों में विभक्त हो गया है। उनके अनुसार–''साहित्य चिंतन मनुष्य के हित में वर्गवादी दृष्टि अपनाता है, वर्ग चेतना की हिमायत करता है और वर्गसंघर्ष को प्रखर करने की बात करता हैताकि एक वर्गहीन समाज व्यवस्था की सृष्टि संभव हो सके, वर्गसंघर्ष सदा–सदा के लिए समाप्त हो सके।

'तो करो यही तुम भी, बेटा! कोई गम नहीं। मैं तो अभी जिन्दा हूँ ही।' उसके पिताजी ने ऐसे स्वर में कहा, मानों किसी को ललकार कर लड़ाई के मैदान में भेज रहे हों।

अमरकान्त की कहानी 'गगन बिहारी' में बाप एक ऐसे बेटे से यह कहता, जो हर रोज नये मंसूबे बाँधता है, लेकिन करता कुछ नहीं। इस कथन में जो दूसरा पूरक वाक्य जुड़ा है, वह कथन की विशेषता की ओर संकेत करता है। स्पष्ट ही यह लेखक का कथन जुड़ा हुआ है, वह कथन की विशेषता की ओर संकेत करता है। स्पष्ट ही यह लेखक का कथन है, और पात्र के कथन की सहायता के लिये, उसे अधिक अर्थवान और समर्थ बनाने के लिये यहाँ जुटाया गया है, पाठक की इस स्वाभाविक इच्छा के विरुद्ध कि कोई बाप एक हद तक ही ऐसी बातें सुन सकता है। एक जगह पहुँचकर वह यह जरूर कह पड़ेगा कि 'रहने दो' बेटा! तुम क्यों नाहक परेशान होते हो। या 'तुम नालायक हो। कुछ करने से रहे।' क्योंकि पाठक कहानी के विकास के साथ अपने को पिता से जोड़ लेता है, और उसके मन में इस उड़नबाज लड़के के लिये क्षोभ इकट्ठा होने लगता है। कहीं वह भ्रम से कथाकार को पिता के आस–पास न देखे, इसलिये अमरकान्त एक नन्हा व्यंग्य वाक्य फेंककर अपने को पिता नामी उस पात्र से अलग कर लेते हैं। यहाँ तक कि कई बार कटुता की सीमा तक जाकर, वे ऐसे पात्रों का मजाक उड़ाते हैं लेकिन कहानी के निर्धारित मार्ग परम्परागत परिपाटी से चिपके रहते हैं। नतीजे में मचान पर बैठे शिकारी की तरह हर तरफ से सुरक्षित रहकर वे हर ऐसे मौकों पर शेर मार लाने का आनन्द और गौरव प्राप्त करते हैं।

बड़े अजीब बात है कि शिल्प और भावबोध के नये स्तरों पर अमरकान्त अपने को खतरे से बचाते रहते हैं, जबकि उनके द्वारा चुनी हुई कथावस्तु उनसे कुछ और ही माँग करती है। नतीजा यह होता है कि उनके भीतर समाया हुआ जीवन अछूता और ठोस ही धरा रह जाता है। वे दुबारा उसमें प्रवेश करना जरूरी नहीं समझते। जैंसे कोई नए घर में पहुंचने पर सजावट के सामान को यह मानकर बक्सों में बन्द पड़ा रहने दे कि उस सबके सजाने से घर जैसा लगेगा, वह तो उसे मालूम ही है। कभी–कभी ऐसा आदमी किसी नयी व्यवस्था और रूप के नये प्रतिमान स्थापित करने की ओर विमुख होकर, कलाकार से अधिक एक समाजशास्त्री होने का भ्रम उत्पत्र कर सकता है।

वस्तुतः चरित्रों अथवा विषय–वस्तु को अनुभव के मार्ग में कहीं पीछे छोड़ आने के कारण अथवा उनके विकास को उनकी किसी विगत परिस्थिति में ठहरा हुआ मान लेने के कारण ही लेखक निर्द्वन्द्व होकर कड़े प्रहार की स्थिति में पहुँचता है, एक हद एक मानवीय मसाले को निर्जीव वस्तु मानकर प्रयोग करने लगता है और यह भूल जाता है कि चरित्र की भी अपनी एक चेतना होती है, जो अपने परिवेश में द्वन्द्वात्मक स्थिति से गुजर कर उसी प्रकार विकसित होती रहती है, जिस तरह लेखक की चेतना।

समय का अन्तराल लेखक के लिये एक महत्वपूर्ण समस्या है जिसे निरन्तर मरते रहने वाला लेखक ही नया बना रह सकता है। वर्ना वह चरित्रांकन ही नहीं, कहानी के पूरे रूप–शिल्प परम्परागत रूप विधान को न तोड़ सकता है, न नये वस्तु–सत्य को पहचान सकता है।

अमरकान्त की कहानियाँ, चाहे वह 'डिप्टी–कलेक्टरी' हो, चाहे 'इन्टरव्यू' अथवा 'गले की जंजीर' बार–बार इस अन्तराल में पाठकों को ले जाती है और उसे लगता है, जैसे वह किसी बीते हुए समय अथवा जीवन की कथा पढ़ रहा है। यहीं लेखक की वस्तुपरक दृष्टि पर एक प्रश्न सिह्न लगता है। कहीं ऐसा तो कहीं ऐसा तो नहीं है कि लेखक की चेतना आत्मपरक होकर, पिछले जीवन के परिवेश में अटकी रह गई हो ?

कुछ लोग चरित्रों का मुँह देखकर, उन्हें आधुनिक या पुराना मानने के आदी होते हैं और विषय वस्तु के बाह्य परिचय से लेखक को नया पुराना समझने की भयंकर भूल करते हैं। असल में महत्वपूर्ण है पात्र की चेतना और परिवेश के निरन्तर परिवर्तित होने के प्रति लेखक की दृष्टि जो सार्वजनिक विकास और द्वन्द्व को प्रकृति का नियम मानने से ही पैदा है।

अभिप्राय यह नहीं कि अमरकान्त के पास यह दृष्टि नहीं है। लेकिन उनके अनुभव का संसार एक स्थान पर रुका जान पड़ता है जहाँ पहुँचते–पहुँते उनकी दृष्टि सहजता को छोड़कर आलोचनात्मक और तीखी हो उठती है और 'डिप्टी–कलेक्टरी' के सकल दीप बाबू जैसे वर्ग चरित्र को एक रूमानी रूप देने के लिए मजबूत हो उठती है।

इस कहानी की पूरी बनावट एक पूर्व निश्चित मनोवैज्ञानिक परियोजना पर की गई है। इसलिए शुरू में ही कहानी के अन्त की सूचना मिल जाती है। बीच में चरित्रों के अत्यन्त उपयुक्त एवं यथार्थ चित्रण की कुशलता पर ही कहानी के ढाँचे को खड़ा करने की बात शेष रह जाती है, जिसे अमरकान्त बड़ी बखूबी से करते हैं। लेकिन कहानी के अन्त तक सकल दीप बाबू चरित्र भाप की तरह उड़कर रूपहीन हो उठता है और कहानी का एक ठोस एवं वस्तुपरक आधार ह्ताशा और आँसू के बीच एक रूमानी व्यंजना से आगे नहीं जा पाता।

यही प्रश्न उठता है कि आलोचनात्मक यथार्थ की ऐसी कुशल रखने वाले लेखक के भीतर रूमानियत का यह कोना क्यों शेष रह गया है? कई लोगों को यह बात विचित्र लग सकती है, क्योंकि जाहिर तौर पर अमरकान्त के चरित्र अपनी वर्गगत विशेषताओं से समन्वित, अपने पूरे परिप्रेक्ष्य में उठाये ही नहीं जाते, वरन् यह भी आभास देते है कि ये लेखक की वस्तुत दृष्टि के परिणाम हैं क्योंकि अमरकान्त हमेशा उनसे एक सचेत अलगव बनाए रहते हैं। अक्सर लगता है कि अमरकान्त कुछ नये सवाल उठा रहे हैं, लेकिन कहानी उस सवालों का उत्तर देते–देते उन्हीं परिणामों पर पहुँच जाती है, जहाँ आत्मिक आदर्शो को मान्यता देने वाली कहानी थी? यही कारण है कि वर्ग–चरित्रों की सृष्टि करने के बाद भी वे किसी सामान्य

परिवर्तन की सूचना देने में असमर्थ रह जाते हैं। इसलिए इनकी कहानियों में हमेशा एक ऐसी हताशा भाव सामने आता है, जिसे तोड़ने का कोई उपाय लक्षित नहीं होता। अन्तर सिर्फ इतना है कि जहाँ सकलदीप बाबू जैसे चरित्र पर, जो अपने बेटे को डिप्टी-कलेक्टर के रूप में देखकर अपना जीवन सार्थक मानने की आशा में टूटकर भयंकर निराशा और परिताप में डूब जाते हैं, आदर्शवादी घड़ों आँसू बहाता है और रो-रोकर कहानी कहता है, वहीं अमरकान्त का स्वर आलोचनात्मक और व्यंग्यात्मक है।

वस्तुतः सामान्य उत्तरों से प्रेरित होकर ही वे प्रश्न उठाते हैं, इसलिए एक ओर जहाँ वे आदर्शवादियों के एकान्तिक और काल्पनिक उत्तरों से प्रेरित होने वाली रचना-प्रक्रिया से भिन्न हैं, वही दूसरी ओर यशपाल की तरह वैचारिक सूत्रों वाले उत्तरों के लिए कहानी नहीं गढ़ते। उनकी प्रेरणा के केन्द्र समाज के वर्गगत स्तर हैं, जहाँ सच्चाइयाँ तैरकर स्वतः उतरा आती हैं। अमरकान्त इन्ही को उठाते हैं, इसलिए उनके नीचे अवस्थित वे चरित्र उन्हें बन-बनाये मिल जाते हैं। अतः समय की गति और चेतना का निर्माण करके कहानी के अब तक की प्रभावान्विति को एक नया रूप देने के साथ ही जीवन का प्रवल साक्ष्य भी उपस्थित करते हैं।

गगनबिहार करने वाले पात्रों का एक समुदाय हमारे समाज में हैं। अमरकान्त लोगों की इस जानकारी से लाभ उठाकर, एक वास्तविक चरित्र की सृष्टि करते हैं, और इस तरह एक सामान्य ज्ञान को रचना की ठोस देह देकर ऊबड़-खाबड़ जमीन पर एक लैम्पपोस्ट लगा देते हैं। जिससे कि लोग सावधान होकर चलें। इसी तरह जिन्दगी और मौत की शक्तियों में चलने वाले भयावह संघर्ष में जिन्दगी की विजय दिखाने वाले कई कथानकों की उन्होंने सृष्टि की है, जो नये भाव बोध के स्तर पर चाहे महत्वपूर्ण न माने जायँ, पर समाज की वर्तमान परिस्थितियों में से ऐसे कथानकों की आवश्यकता असंदग्धि है।

सवाल यह उठता है कि अमरकान्त की कहानियों में नवीनता कहाँ है?

ऊपर समय के अन्तराल की बात उठायी गयी है। वस्तुतः समय नये-पुराने के अलगाव में जहाँ एक ओर अत्यन्त साधारण मापदण्ड हैं, वहीं अपने पूरे संदर्भ में एक विशिष्ट प्रतिमान भी है, नयी रचना-प्रक्रिया ने समय की इस चुनौती को स्वीकार किया है, जबकि हमारा पिछला कहानी-साहित्य इसके प्रति आँखें मूँद चुका था।

विशुद्ध आनन्द की सृष्टि में समय और परिवेश का क्या महत्व हो सकता है? वहाँ तो मानव की शाश्वत प्रवृत्तियाँ और भावावेश ही महत्वपूर्ण रहे हैं। नया मनुष्य इतना मुक्त कहाँ? मानसिक और भौतिक धरातल पर वह प्रश्नों के तीखें वाणों से बेतहर बिन्धा हुआ है, जीवन के बाहर की वह परम शक्ति, जो कभी सारे आनन्दों का केन्द्र थी आज प्रेरणाहीन हो उठी है और मनुष्य आकाश के बजाय जमीन को देखने लगा है। इसलिए आनन्द और वास्तविक परिवेश-विहीनता का वह काल प्रायः समाप्त हो चला है। यह संसार ही प्रमुख स्थल है और इस कारण यह जीवन ही आनन्द का स्त्रोत हो सकता है। इसलिए आज की कला जीवन के आधुनिकतम साक्ष्य में ही आधुनिक वस्तु रूप की प्राप्ति कर सकती है। ऊपर वाले की तरह जीवन कोई ठहरा हुआ भावबोध नहीं, वरन् एक निरन्तर परिवर्तनशील सचेत प्रक्रिया है, जिसमें समय और उसके अन्तराल का बड़ा महत्व है। त्रिभुज के तीनों पर लेखकर की चेतना, पात्र की चेतना और उसका परिवेश तथा युग-बोध, जिसे तत्कालीन समाज की की औसत सच्चाई की चेतना कह सकते हैं, बैठे हुए हैं। इन्हीं के पारस्पारिक समवाय से नये जीवन की अधिकतम वास्तविकताओं का चित्रण सम्भव है।

नयी कहानी ने पहली बार इस दुसरे अन्तराल को पहचाना। समाज आगे निकल गया और पुराने लेखक सम–सामयिक समाज के साथ आगे तो गये, लेकिन पात्र वेचारा वहीं पीछें पड़ा रह गया। इस तरह के भी जोड़े बन सकते हैं। उनमें एक न एक आगे–पीछे हट जाता है और लेखक एक नकली सृष्टि करने की अजजाने ही बाध्य हो जाता है। कभी–कभी देर–देर तक वह अपनी सृष्टि को नहीं पहचानता और उस समय तक अपनी बात पर जमा रहता है, जब तक कि वह स्वयं उस अन्तराल के मुख्य द्वार पर चक्कर काट रहे हैं। जबकि नया लेखक उसे पाट रहा है। वह असलियत की खोज में है, और और उन शक्तियों को पहचानना चाहता है जो वास्तविकताओं के निर्माण एवं परिवर्तन में लगी हुई है। उसको एक सुविधा भी है। चूँकि उसके अनुभवों का संसार निकट भूत का है, इसलिए उसकी रचना में अन्तराल स्वयं लक्षित होता है। अमरकान्त उन्ही लेखकों में से एक हैं, जो निकट के छूटे हुए जीवन की ओर बार–बार लौटते हैं, इसलिए जहाँ उनकी रचनाओं के चरित्र सम–सामयिक मालूम होते हैं, वहीं इस बात का भी संकेत देते है कि लेखक की चेतना में इन चरित्रों के बाद एक खालीपन आना शुरू हो गया है। जीवन के सम्बन्ध में एक अपरिवर्तनशील दृष्टि का जो आभास अमरकान्त के एक रूपी कथानकों ने शुरू में देना शुरू किया था, वह अभ तरह से ठहरा हुआ अनुभवबोध–सा लगने लगा है।

वस्तुतः समय के त्रिकोण के संतुलन को सर्वाधिक और खुले तौर पर लक्षित करने का स्तर रचना–शिल्प का होता है। बात कुछ अजीब सी लगेगी, लेकिन शिल्प के स्तर पर समय का बोध न होने का मतलब ही यही है कि लेखक नयी वास्तविकताओं के केन्द्र बिन्दु की ओर से उदासीन है, और वह कहानी के विस्तार को दिनों–महीनों के समय–विस्तार तक खींचता रहता है। नये कहानी–लेखकों की रचनाओं में काल के इस अन्तर्ग्रन्थन की कमी को देखकर जहाँ एक ओर हैरत होती है, वहीं यह भी सिद्ध होता है कि आज नयी कहानी नाम से प्रचारित अधिकांश रचनाएँ भाव–बोध के स्तर पर नवीनता से कोसों दूर हैं, और लेखक कहीं का रोड़ा कहीं का पत्थर मिलाकर एक ऐसा घास–मेंल कर रहे हैं, जिसमें नयी वास्तविकता अथवा युगबोध की तो बात ही दूर रही, शिल्प और चरित्रगत मनोविज्ञान की प्रारम्भिक समझ तक का अभाव हैं कल्पना द्वारा निर्मित मानव–चरित्रों को किसी भी सामाजिक परिवेश में रखकर, लेखक अपने वर्णनों के बल पर पिछले दिनों भ्रमपूर्ण मनोविज्ञान की सृष्टि किया करते थे। उसी में प्रभाव में कई नये कहानी लेखक आज भी लिख रहे हैं।

वर्ग चरित्रों और उनके मनोवैज्ञानिक समझ के क्षेत्र में अरमकान्त की गहरी रुचि है। लेकिन वे विचित्र चरित्रों की सृष्टि की ओर बढ़ रहे हैं, जिनमें केस–स्टडी का व्यंग्य–चित्रात्मक स्वर प्रमुख होने लगा है। 'खलनायक' उनकी ऐसी ही कहानी है, जिसके पूरे अन्तरंग शिल्प को 'डिप्टी कलेक्टरी' से मिलाकर देखें, तो लगता है कि लेखक रचना–शीलता के ढलवान पर खड़ा है, और निरन्तर ह्रास की ओर जा रहा है। लेकिन यहीं अमरकान्त की उन रचनाओं की ओर भी ध्यान जाता है, जो 'दोपहर का भोजन' से चलकर 'छिपकली' के वस्तुनिष्ठ अथार्थ चित्रण तक पहुँची है। अमरकान्त विचित्र चरित्रों की रचना छोड़कर अपनी कहानियों में समय के अन्तराल को भर सकें, तो नये भाव–बोध के ग्रहण की समयस्या खुद ही हल हो सकती है। लेकिन फिलहाल तो समय नये सवालों के उठाने का है, न कि उन सवालों के नये उत्तर देने का जो आज की जिन्दगी से पीछे छूट गये हैं।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि अमरकांत की कहानियों के समस्त वर्गीय पात्र अपनी मानसिकता के अनुसार ही आचरण करते हैं। उच्च व मध्यमवर्गीय पात्र जहाँ शोषक अधिक

दिखाई देते हैं, वहीं निम्न मध्य तथा निम्न वर्गीय पात्र बहुधा शोषित हैं। अमरकांत की कहानियों में मध्य तथा निम्न वर्ग के पात्रों की बहुलता है और वह इन पात्रों की मानसिकता को पकड़कर कहानियों में उकेरने में पूर्णतः सफल रहे हैं खासतौर से निम्न मध्यवर्ग के पात्रों की विशिष्ट मानसिकताओं को इन्होंने काफी हद तक विशिष्टता से ही चित्रित किया है।

दोपहर का भोजन (अमरकांत)

1 सिद्धेश्वरी ने खाने की थाली सामने लाकर रख दी और पास ही पंखा करने लगी। रामचंद्र ने खाने की ओर दार्शनिक की भाँति देखा। कुल दो रोटियाँ, भर कटोरा पनियाई दाल और चने की तली तरकारी। रामचंद्र ने रोटी के प्रथम टुकड़े को निगलते हुए पूछा मोहन कहाँ है, बड़ी कड़ी धूप हो रही है। मोहन सिद्धेश्वरी का मंझला लड़का था। उम्र अठ्ठारह वर्ष थी औश्र वह इस साल हाई स्कूल का प्राइवेट इम्तहान देने की तैयारी कर रहा था। वह न मालूम कब से घर से गायब था और सिद्धेश्वरी को स्वयं पता नहीं था कि वह कहाँ गया है। किन्तु सच बोलने की उसकी तबीयत नहीं हुई और झूठ–मूठ उसने कहा किसी लड़के के यहाँ पढ़ने गया है आता ही होगा। दिमाग उसका बड़ा तेज है औश्र उसकी तबीयत चौबीस घंटे पढ़ने में ही लगी रहती है। हमेशा उसी की बात करता है रामचंद्र ने कुछ नहीं कहा। एक टुकड़ा मुँह मे ंरखकर भरा गिलास पी गया। ुरि खाने लग गया। वह काफी छोटे–छोटे टुकड़े तोड़कर उन्हें धीरे–धीरे चबा रहा था। सिद्धेश्वरी भय तथा आतंक से अपने बेटे को एकटक निहार रही थी। कुछ क्षण बीतने के बाद डरते–डरते उसने पूछा वहाँ कुछ हुआ है क्या ...? रामचंद्र ने अपनी बड़ी–बड़ी भावहीन आँखों से अपनी माँ को देखा फिर नीचा सिर करके कुछ रूखाई से बोला समय आने पर सब ठीक हो जाएगा।

संदर्भ – प्रस्तुत पंक्तियाँ अमरकांत द्वारा रचित प्रसिद्ध कहानी दोपहर का भोजन से ली गई है।

प्रसंग – प्रस्तुत कहानी समाज के एक ऐसे वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है जो कठोर श्रम के बावजूद दो जून रोटी के लिए संघर्ष करते है किन्तु उनके बीच रिश्तों की प्रगाढ़ता ही उन्हे दिलाए रखती है उनमें दौलत का नही परस्पर प्रेम का उन्मद है कहानी ने सिद्धेश्वरी अपने बड़े पुत्र के बारे में मुंशीजी से कहती है कि वह आपको ददेता कहता है अपने बारे मे पुत्र के यह विचार सुनकर मुंशी प्रसन्न हो जाते है। उनकी खुशी देख सिद्धेश्वरी की सुखद अनुभति का दर्णन कहानी कार ने इन पंक्तियों में किया है।

व्याख्या – दोपहर का भोजन अमरकाटंक द्वारा रचित समाज के ऐसे आज परिवार के यथाथ्र को चिगित करता करता है जहॉ जार्चिक अभाष के रहते परिवार के सदस्यों में विखराव रहता है। कारण एक व्यक्ति जमाने वाला और तीन पुत्र व पत्नी खाने वाले। वैसे भी जब परिवार के तगहाली होती है और बड़े बेहो के होते पिता अकेले कमाता है तो घर के समान की स्थिति बन जाती स्वाभाविक है। ऐसे में परिवार की एक मात्र सदस्य निरंतर प्रयास करती रहते है। घर के हालासों से सामंजस्य बैठाते हुए समकी अर्थ पीड़ा को समझती है।

ऐसे ही एक अंश में जब मुंशी चंद्रिका प्रसाद भोजन करने आते है तो सिद्धेश्वरी देवी झूठ–मूठ घर की सुशहाली उनके सामने रखकर घर के वातावरण को हल्का करती हैं। जब मुंशी चंद्रिका प्रसाद जब बेटे के बारे में पूछते है तो सिद्धेश्वरी कहती है अभी भोजन कर बाहर गया है। नौकरी की तलाश में है पिता के निरंतर खते रहने का उसे दुख है ––पत्नी के मुँह से अपने बेटे के ये विचार सुनकर मुंशी भाविभोर हो जाते है तथा बेटे के प्रति जो आवेश था वह भी जाता रहा जब सिद्धेश्वरी ने कहा कि वह तो आपको देवता मानता है। मुंशी अपना प्रेम

छिपाते हुए बोले पगला है। बेटे के प्रति पिता के मन में अनुराग उपजता देख सिद्धेश्वरी को नशा सा छा गया मानो उनमाद का रोग लग गया बोली–

पागल नही है बड़ा होशियार है उस जमाने का कोई पुण्यात्मा है। मोहन भी उसकी बड़ी इज्जत करता है कहता था शहर में पढ़े लिखे लोगों के बीच भाई का बहुत सम्मान है। इतना ही रामचंद्र भी अपने भाइयों के प्रति उतना ही स्नेह रखता है उन पर प्राण न्यौछावर करता ह। वह सारी स्वयं सारी पीड़ा सह सकती है किन्तु यह कभी नहीं सह सकता की उसके छोटे भाई प्रमोद को कुछ तकलीफ हो।

विशेष – कहानी में कहानी कार ने यथार्थवादी परंपरा की सृप्रि की है। निम्न मध्यम वर्गीय जीवन की पीड़ा को मार्मिक अभिव्यक्ति प्रदान की है। प्रस्तुत परिवार आज के समाज के ऐसे कई परिवारों का प्रतिनिधित्व करता है जिन्हें एक वक्त का भोजन भी भर पेट नसीव हो होता। ऐसे में परिवार की महिला सिद्धेश्वरी का त्याग नारी की महनता को सिद्ध करता है।

2. सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आ रहा था कि उसके दिल में क्या हो गया है, जैसे कुछ काट रहा हो। पंखे को जरा और जोर से घुमाती हुई बोली, अभी–अभी खाकर काम पर गया है। कह रहा था कुछ दिनों में नौकरी लग जाएगी। हमेशा बाबूजी– बाबूजी किए रहता है। बोला बाबूजी देवता के समान हैं । मुशी जी के चेहरे पर कुछ चमक आई। शरमाते हुए पूछा ऐं! क्या कहता था कि बाबूजी देवता के समान हैं। बड़ा पगला है। सिद्धेश्वरी पर जैसे नशा चढ़ गया था। उन्माद की रोगिणी की भांति बड़बड़ाने नगी पागल नहीं है बड़ा होशियार है। उस जमाने का कोई महात्मा है। मोहन तो उसकी बड़ी इज्जत करता है। आज कह रहा था कि भैया की शहर में बड़ी इज्जत होती है। पढ़ने–लिखने वालों में बड़ा आदर होता है और बड़का तो छोटे भाइयों पर जान देता है। दुनिया में वह सब कुछ सह सकता है पर यह नहीं देख सकता ि क उसके प्रमोद को कुछ हो जाए।

संदर्भ– प्रस्तुत पंक्तियाँ अमरकांत द्वारा रचित प्रसिद्ध कहानी दोपहर का भोजन से ली गई है।

प्रसंग– मुंशी चंद्रिका प्रसाद किराया नियंत्रण विभाग में क्लर्क के पद पर कार्यरत थे किन्तु छटनी के दौरान उनकी नौकरी जाती रही और आज उनका परिवार इसी आर्थिक संकट से जूझ रहा है। एक तो बेरोजगारी उपर से पॉच आदमियों का पेट भरना बहुत मुश्किल हो रहा था। जिस देश का एक समाज अधिक भोजन करने से बीमार हो रहे है वही चंद्रिका प्रसाद का परिवार भूखे रहने के कारण बीमार हो गया है। एसी ही भूख की बीमारी से गुस्त चंद्रिका प्रसाद सिद्धेश्वरी और प्रमोद इसका जीता जागता उदाहरण है। भूखी ऑते पानी के बोझ को सहने में असमर्थ है ऐसी ही एक अवस्था का वर्णन प्रस्तुत हृदय में किया गया है।

व्याख्या – मुंशीजी का परिवार गिनचुन कर रोटियॉ खाता है कई दिनों से किसी को पेभर रोटियॉ नसीब नही हुई। ऐसे ही एक दोपहर चंद्रिका बाबू डेढ रोटियॉ खाकर पानी से बाकी भूख मिटा रहे थे कि अचानक उन्हे खॉसी आने लगी खासते – खांसते उनका बुरा हाल हो गया सिद्धेश्वरी समझ नहीं पा रही थी कि ऐसे में क्या करे। उसका मन चाह रहा था कि अपने अच्छे समय का स्मरण कर उसे लगा सब कुछ पहले की तरह हो जाता वह मुंशी जी से बेधडक बात करे। किन्तु उनकी हालत देखकर सिद्धेश्वरी सहमी हुई है एक अनजान भय उसके भीतर समया हैं

विशेष– घर के अर्थिक हालातों से पति–तत्नी के रिश्तों के बीच आई दूरी का चित्रमय वर्णन है।

कहानी कला भी दृष्टि से दोपहर का भोजन कहानी की विशेषता ।

दोपहर का भोजन अमरकांत द्वारा रचित मध्यमवर्गीय कहानी कार की मार्मिक पीड़ा को अभिव्यक्ति देता है। जिसमें कहानी कार ने यथर्थवादी कोष अपनाया है। यद्यपि कहानी प्राचीन है किन्तु उसकी प्रासंसिकता आज भी समाज में बनी हुई है। कई परिवार आज भी ऐसे है जिनके घर में भोजन के हिस्से निकाले जाते है हर व्यक्ति अपनी भूख को परे रख उतने ही हिस्से में आत्मसंतुष्टि करता है। वही जवान शिक्षित बेटे की बेरोजगारी घर के वातावरण को और भी तनावग्रस्त कर देती है। युवा स्वयं को घर वालों की नजर में गुनहगार मान उनसे नजरें चुराता है वहीं घर का प्रौढ़ वर्ग (पिता) उनकी काबलियत को नकारा समझ उनकी कट् आलोचना करते हैं ऐसे में गृहिणी के लिए चुनौती हो जाती है। कि वह कैसे इस वातावरण से सामंजस्य बनाए। इसी स्थिति को कहानीकार ने दोपहर कहानी के माध्यम से व्यक्त किया है।

कहानी की विशेषताओं को कहानी कला के तत्वों के आधार पर इस प्रकार व्यक्त कर सकते हैं।

1. कथानक– कहानी का कथानक संक्षिप्त है। मुंशी चंद्रिका प्रसाद जो मकान किराया–नियंत्रण विभाग में क्लर्क के पद पर है। डेढ़ माह पूर्व छँटनी के दौरान उनकी बहाली हो गई। जाहिर है इसका प्रभाव आर्थिक रूप से परिवार को भी प्रभावित कर गया। परिवार में तीन बेटे रामचंद, मोहन, प्रमोद, और पत्नी सिद्धेवरी अर्थात कुल पाँच लोग है। आमदनी शून्य और पाँच लोगों की जिम्मेदारी कैसे संभव हो चंद्रिका प्रसाद की परेशानी अपनी जगह सही है। स्थिति यह है कि घर में किसी को भी पेट भर भोजन नहीं मिल पाता है। भारतीय नारी–का प्रतिनिधित्व करती सिद्धेश्वरी सबके हिस्से की दाल रोटी उन्हें देती आई स्वयं भूखे पेट पानी पीकर तृप्ति का अहसास कर लेती, किन्तु भूखे पेट में पानी लग जाता और वह राम राम कहकर जमीन पर में लेट जाती उसकी वृशकाय देह वही जमीन पर ढ़ेर हो जाती आधे घंटे बाद होश में आना तो उसकी दृष्टि औसारे पर टूटी खटोली पर नगं –धड़ग, हाथ–पैर ककड़ी पेट धमकड़ी की कहावत को सार्थक करता छोटे बेटा प्रमोद पर पड़ती है जो अपनी ही पीड़ा से रो रहा है वह उठकर उसके मुँह पर अपना फटा ब्लाउज डाक देती है।

दोपहर के बाद उसका बड़ा बेटा राम चंद्र घर में आकर बैठते ही बेजान सा लेट जाता है। इक्कीस वर्ष का इंटर पास यह नव युवक स्थानीय दैनिक समाचार के दफ्तर से प्रूफ रीडिगं का काम सीख रहा है। सिद्धेश्वरी अपने भूखे बेटे के सामने दो रोटी कटोरी में पनियाई दाल और चने की तरकारी थाली में परोसकर लाती है। भोजन करते समय रामचंद पूछता है बाबूजी खा चुके ? मोहन कहॉ हैं ? प्रमोद रोया तो नहीं ? इस तरह वह घर के सभी समाचार माँ से जानता है। सिद्धेश्वरी प्रत्येक प्रश्न का झूठ–मूठ जवाव देती है। क्योंकि सच बोलकर वह थके हुए बेटे के चहेरे पर आई परेशानी के भान पैदा करना नहीं चाहती। बत जानती है कि भोजन सीमित मात्रा मे है फिर भी घर के प्रत्येक सदस्य को वह आइ भोजन लेने का आग्रह करती है।

सभी के भोजन करने पर पति की झूठी दाली में स्वयं भोजन करने बैढ जाती है। पर कोई में कटोरी भर दाल भी नहीं है रोटी भी एक आखिर की जली हुई बची है, चने की

तरकारी मे महज कुछ दाने ही बचे है। इन सबको थाली में लेकर जब वह भोजन करने बैठती है तो उसकी दृष्टि खटोली पर पड़े प्रमोद पर जाती है और वह आधी रोटी तोड़कर उसके लिए रख देती है और लोटा भर पानी के साथ भोजन करने बैठ जाती है। सिद्धेश्वरी मुँह में रोटी का निवाला रखती है और आँखो में बेचारी के आँसू निकल रहे है। घर में मनहूसियत की निशानी मक्खियों ने अपना साम्राज्य फैला रखा है। उधर मुंशीजी निश्चिंत है सो रहे है।

कहानी का कथानक केवल इस परिवार के माध्यम से

2. चरित्र चित्रण – कहानीकार पात्र संयोजना के माध्यम से चरित्र चित्रण की सृष्टि करता है। प्रस्तुत कहानी में पाँच पात्रो की संरचना कहानीकार ने की है जिसमें सिद्धेशवरी रज कदानी जी प्रमुख पात्र है जो सदैव घर ओर परिवार के पति समर्पित है। सभी उसे परिवार के लोगों से झूझ ही क्यो न वोलना पड़े। तथ्यों को परिवार वालों से छिपाना ही क्यों न पड़े। वह प्रत्येक सदस्य के समक्ष उसकी तारीक ही नही करती बल्कि एक दूसरे के प्रति सदभाव भी व्यक्त करती है।

जैसे रामचन्द्र के पूछने पर कि मोहन कहाँ गया है? वह उत्तर देती है अभी दोस्त के यहाँ पढ़ने गया है। उसकी तबियत चौवीस घंटो पढ़ने मे ही रहती है। जबकि सच्चाई यह है कि वह कहाँ गया है उसे नहीं पता। वह अपने कर्त्तव्य के प्रति लापरवाह हे वह जानती है रि भी कहती है मोहन तुम्हारा बहुत मान करता है कहता है भैया का शहर के पढे-लिखे लोगों में बहुत सम्मान है।

वहीं कहानी का दूसरा पात्र मुंशी दंद्रिका प्रसाद एक निश्चिंत व्यक्ति हैं वे कभी भी पत्नी की बातों को गंभीरता से नहीं लेते नही उसकी बातों का प्रासंगिक उत्तर ही देते हे। जहाँ सिद्धेश्वरी एकान्त में सबको लिखकर बचे हुए भोजन से अपना गुजारा करती है घर के हालातों को देख चिंतागुस्त रहती हे चंद्रिका प्रसाद निश्चिंत हो सो रहे है।

3. कथोपकथन – कथोपकथन कहानी के विकास में सहायक होते है। कहानीकार अपने भावों एवं विचारों को पात्रों के संवादो के माध्यम से व्यक्त करते हुए कहानी को विकास की ओर ले जाती है।

प्रस्तु कहानी ज्येष्ठ पुत्र रामचंद्र भोजन का प्रथम निवाला निगलते ही पूछता है –मोहन कहाँ है –2 बड़ी कड़ी धूप है। माँ सिद्धेश्वरी झूठ–मूठ ही कह देती हे किसी लड़के के यहाँ पढ़ने गयो है आता ही होगा। दिमाग उसका बड़ा तेज है।'' सिद्धेश्वरी रामचंद्र से उसकी नौकरी के बारे मे पूछती है वहाँ कुछ हुआ.... सरवाई से उत्तर मिलता है समय आने पर सब कुछ ठीक हो जाएगा। कही पर यह संबंध हास्य की सृष्टि करता है। जैसे सिद्धेश्वरी बोली मालूम होता हहै अब बारिस नहीं होगी। मुंशीजी जो स्वभाव से गंभीर है सदैव अप्रासंगिक उत्तर देते है – 'मक्खियाँ बहुत हो गई है।

जब सिद्धेश्वरी उत्सुक्ता प्रकट कर कहती है फूफाजी बीमार है कोई समाचार नहीं आया। मुंशी जी ने चने के दानों को देखते हुए कहा गंगा शरण बाबू की लडकी की तय हो गई है। लड़का एम.ए. पास है। इस प्रकार कहानी मे ये कथानक पाढकों को कहानी से वॉधे रखते है कभी मार्मिकता के कारण तो कहीं हासय पुट को लेकर।

4. देशकाल और वातावरण –वातावरण किसी भी कहानी को स्वाभविकता के मूल्यांक का अवसर प्रदान करते है।

प्रस्तुत कहानी वातावरण की दृष्िअ से अपनी सफलता सिद्ध करती है। जैसा की कहानी का शीर्षक है दोपहर का भोजन संपूर्ण कहानी दोपहर को किए भोजन के दौरान ही घटित होती है सिद्धेश्वरी दोपहर को भोजन बना चुकने के बाद चूल्हा ढंडा कर वही घुटनों के बीच सिर रखकर बैठी है। घर के हालात इतने बदतर है कि एक वक्त भी भरपेट भोजन किसी को नहीं मिल पा रहा है। सिद्धेश्वरी के हालात और भी वदतर है। भोजन क अभाव में वह कृशकाम हो गई हैं, पसलियाँ नजर आ रही है। भूख लगने पर वह लोटा भर पानी गटक लेती हे किन्तु भूखे पेट में पानी भी नुकसान पहुँचा जाता है वह असहनीत पीड़ा के साथ वहीं जमीन पर लेट जाती हे।

वही थो़ड़–थोड़ी देर में वह दरवाजे तक जाकर गली में निहारती है। बारह बज चुके है धूप बहुत तेज हो गई हैं गली में गहरा सन्नाटा है इक्का–दुक्का लोग सिर पर गमछा और छाता लिए नजर आ रहे है। बेटा रामचन्द्र थके कदमों से धीरे–धीरे सरकता सा नजर आता हे रामचन्द्र घर में आते ही चॉकी पर निढाल हो बैठ जाता है। उसका चेहरा धूप से लाल हो चुका है। जूते आर्थिक तंगी को बयान कर रहे है। फटे जूतों में धूल की गर्त जमी हुई है।

इस तरह कहानी में दोपहर और भोजन दोनो का ही सजीव चित्रण लेखक कटने में सफल रहे हैं।

5. भाषा शैली – पात्रों के अनुभूत भाषा शेली का प्रयोग कहानी के कथन को न केवल रोचक वनाता है वल्कि उसके प्रभाव को भी स्थापित करता है।

प्रसतुत कहानी की भाषा शैली अत्यन्त सरल एवं सजीव है। पात्रों के अनुकूल भाषा का प्रयोग करने में कहानी कार का प्रयास सफल सिद्ध हुआ है। कहीं–कहीं ध्वन्यात्मक सौदंर्य और सानु प्रासंगिकता भाषा में मिलती हे। जैसे गगरे से लोटा। भर पानी लेकर गट–गट चढ़ा गई। बड़े लड़के के लिए बड़ धू भर कटोरा पनियाई दाल गट–गट बड़ा भू पनियाइी दाल आदि ग्रामीण शब्दों का प्रयोग कर लेखक ने वातावरण को सजीवता प्रदान की है। इसी तरह हिम्मत, इम्लहान, प्रूफ रीडिंग आदि हुई एवं अंग्रेजी शब्दो का यथा स्थान उचित प्रयोग किया है।

एक स्थान पर कहानीकार का स्वकथन देखिए –

वह एक स्थानीय दैनिक समाचार पत्रो के दफ्तर में अपनी तबियत से प्रूफ रीडरी का काम सीखता था। कथनों में सहज सरल प्रवाह है, वर्णनात्मक शौली का प्रयोग हुआ है। कहीं अकं कारिक शौली तो कहीं व्यंग्य का प्रयोग कहानी का सजीवता प्रदान करता है। यथा–यथा उसके हाथ पैर बासी लड़कियों की तरह सूखे तथा बे जान पड़े थे और उसका परै हंडिया की तरह फूला हुआ था।

6. उद्देश्य – प्रस्तु कहानी का उद्देश्य भारतीय समाज के उस पक्ष से अवगत कराना है जहाँ विकास के दावे थोथे सिद्ध हुए है। शासन का ध्यान उस ओर आकर्षित करने के साथ–साथ समाज के युवकों में वेरोजगारी का दंश जो परिवारों की मुस्कान छीन रहा है। इंटरपास रामचंद्र आज के ऐसे युवाओं का प्रतिनिधित्व करता है जो उच्च परिवार है जिन्हे एक समय भी पेट भर भोजन उपलब्ध नही हो पा रहा है ंबच्चे कुपोषक का शिकार है जिसका जीता जागता उदाहरण

है प्रमोद। घर में मक्खियों का सामृज्य न केवल दरिद्रता बल्कि स्वास्थ संबंध असावधानी को दर्शाता हैं

वहीं गृहस्वामी बेकितु है और भारतीय नाही जो अभाव के भी सांमजस्य बैठाना जानती हे सिद्धेश्वरी इसका प्रतिनिधित्व करती है।

7. शीर्षक – कहानी का शीर्षक उसको परिभाषित करता है दोपहर का भेाजन कहानी शीष्ज्ञक जी हजि से अत्यन्त सफल रचना सिद्ध होती हे। क्योंकि संपूर्ण कहानी दोपहर के भोजन जो कण्ड में रखकर रची गई है। इतना ही नहीं यदि कहानी शीर्षक को दो भागों में भी विभाजित करते हैं यथा दोपहर भोजन तो कहानीइ इस कसौटी पर भी खरी उतरती है। जिसमें गर्मी की चिलचिलती दोपहर का भी लेखक नं चित्र प्रस्तुत किया है ओर भोजन को लेकर घर की पीड़ा को भी कहानी में साकार किया है।

इस दृष्टि से कहानी शीर्षक की सार्थकता को सवित करती है।,

अमरकांत जी कहानी कला की विशेषताएं

'सिद्धेश्वरी ने चौकते हुए पूछा, एक रोटी देती हूँ?

मोहन ने रसोई की ओर रहस्यमय नेत्रों से देखा फिर सरल स्वर में बोला–

'नही'

सिद्धेशवरी ने गिडगिडाते हुए कहा नही बेटा मेरी कसम थोडी ही केलो तुम्हारे भैया ने एक रोटी ली थी।

मोहन ने मात्र को गौर से देखा फिर धीरे से इस तरह उत्तर दिया जैसे कोई शिक्षक अपेन शिष्य को समझाता है, नही बस अव्वल तो अब भूख नहीं फिर रोटियाँ तूने ऐसी बनाई है कि खायी नहीं जाती। न मालूम तूने कैसी बनायी है।

अमरकांत की कहानी दोपहर का भोजन में एक ऐसी परिवार की कथा हे जो शासन की दुर्नीत का शिकार है परिवार का मुख्या घटनी के कारण अपने रोजगार से हाथ धो बैठता है। मंहगाई के इस दौर से घर के पाँच लोगो के पेट पलना हैं वहीं बड़ा बेटा इंटर पास होकर भी रोजगार के लिए भटक रहा है। इस दृष्टि से अमरकांत जी की यह कहानी वर्तमान समाज के परिवेश को पारदर्शिता के साथ समाज के समक्ष रखते है।

अमर कांत जी कहानियों को एक अन्य विशेषता यही भी है कि उनकी विषय वस्तु बड़ी ही सरल एवं सहज होती हे। वे विषय और परिवेश की जटिलता और अतियथार्थवाद की कुरूपता एवं विकृति को भी सरलता एवं स्वस्थता से व्यक्त करते है। आज भी कहानियों की तरह उनकी कहानियों में यथाथ्र और आधुनिकता के नाम पर नग्नता अपवा भद्धापन कहीं नजर नहीं आता दूसरे शब्दों में हम कह सकते है कि शिल्प और भावबोध के नए रास्तो पर भी अमर कांत अपने आप को उन खतरों से बचाए हुए है जो साहित्य की गरिमा को धूमिल करते है।

उसी प्रकार अमरकांत जी कहानी में पात्रों का समाजिक भी कहानी की विषयवस्तु को देखते हुए बहुत सोच समझ कर गढ़े जाले छोड़ आने के कारण अथवा उनके विकास को उनकी

किसी विगत परिस्थिति में पहुँचता है। एकहद तक मानवीय मसाले को निर्जीव वस्तु मानकर प्रयोग करने लगता हे और यह भूल जाता है कि चरित्र की भी अपनी एक चेतना होती है।

और अपने परिवेश में दण्डात्मक स्थिति से गुजा का उसी प्रकार होती रहती है, जिस तरह लेखक की चेतना।

वैसे तो अमरकांत की कहानी कला कृत्रिम सजावट से दूर रहती हैं चाहे जिस भी वर्ग के पात्र हो वे अपनी कहानियों मे पाठक को साथ लेकर चलते है। वहीं पाठकों के सामने भी बरावर पारदर्शिता रखते है। वे यथाथ्र को कुछ इस तरह पाठकों के सामने बातते कि पाठक पर उसका कोई बोझ नहीं पड़ता कहानी सहज प्रवाह के साथ पाठकों को अपनी ओर आकर्षित करती हे क्योंकि अपनी कहानी में वे पाठकों की मनोदशा को दृष्टि में रखते हुए ही अपनी बात कहते है। कहानी की विषय वस्तु में समय के रूप निरंतर बदलालव आते रहते है। यह जरूरी भी है। इस अंतराल को वही कहानकार भर सकता है जो समय के साथ सदा नया बना रहता है। अन्यथा वह न तो रूप शिल्प न ही वस्तु सत्य को पहचान पाता है नाही कहानी का चित्राकंन ही कर सकता है।

अमरकांत की कहानियाँ चाहे वह डिप्टी कलेक्टर हो इंटरव्यूह वले जी जंजीर हो या फिर दोपहर का भोजन – पाठकों को इस तरह कहानी से जोड़े रखता है कानो वह किसी से हुए समय की अपनी टी यथा पढ़ रहा है। कथ्य की जीवनता को देखकर कभी–कभी तो ऐसा लगता है मानो लेखक की चेतना आत्मपरक होकर अपने पिछले जीवन एवं परिवेश का मुँह देखकर अथवा विषय वस्तु के माध्यम से प्रथा एवं कथाकार को नए एवं पुराने की सरंग देकर आकते है जबकि महत्वपूर्ण बात है कि पात्र और परिवेश की चेतना को पहचानना है। अमरकांत के पास वह हरि है अनुभव का एक विस्तृत संसार है।

उससे भी महत्वपूर्ण कि आलोचनात्मक यथार्थ की ऐसी कुशक हरि रखने वाले लेखक के भीतर अमानियत हास्य का एक कोना भी शेष रहा है। अमरकांत के चरित्र अपनी वर्ग गत विशेषताओं से है कि ये लेख की वस्तुगत हरि के परिणाम है क्यों कि अमरकांत हमेशा उनसे एक सचेत अलगाव बनाए रहते हे। अक्सर त्यागता है अमरकांत कुछ नए सवाल उठा रहे है। लेकिन कहानी उन सवालों का उत्तर देते–देते उन्ही परिणामों पर पहुँच जाती है जहाँ आत्मिक आदर्शों को मान्यता देने वाली कहानी थी? यही कारण है कि वर्ग चरित्रों की सृष्टि करने के बाद भी वे किसी सामान्य परिवर्तन की सूचना देने में असमर्थ रह जाते है। इसी लिए इनकी कहानियों में हमेशा एक ऐसी हताश का भाव सामने आता है जिसे तोडने का कोई उपाय लक्षित नहीं होता अन्तर सिर्फ इतना है कि जहाँ बाये ह के भोजन कहानी के चंद्रिका बाबू के परिवार के संकटों को कोई सकारात्मक दृष्टि मिलती सिद्धेश्वरी की पीड़ा का अंत होता किन्तु कहानी का अंत सिद्धेश्वरी की आँखों से बहते आँसू और चंद्रिका बाबू के निश्चित हो सोने के साथ होता है।

उनके लेखन के केन्द्र समाज के वर्गगत स्तर है जहाँ सच्चाइयाँ स्वतः उतरकर सामने आती है। अमरकांत उन्हीं को उठाते है इसलिए उसके नीचे उपस्थित वे चरित्र उन्हें बने–बनाये मिल जाते है। अमरकांत अपने आस–पास के वातावरण से वास्तविक चरित्र की सृष्टि करते हैं और इस तरह एक सामान्य विषय को रचना की ठोस देह देकर उबड़–खाबड़ जमीन पर एक लैम्प पोस्ट लगा देते है जिससे लोग सावधान होकर चल सकें। उनकी कहानियाँ निष्छल यथार्थ और व्यक्तित्व को लेकर सामने आती है आधुनिक समस्याओं और समाज की कुरूपताओं को

चित्रित करने की दृष्टि से अमरकांत प्रतिनिधि कहानीकार है। संयत रूप में एक यथार्थ जीवन रहस्य का उद्‌घाटन ही अमरकांत जी कहानियों का लक्ष्य होता है अपनी कहानी महान चेहरा में उन्होंने स्पष्ट लिखा है कि सिद्धांतवादी बनने वाले सिद्धांत–हीन व्यक्तियों ने हमारे समाज को खरोंच कर रखा है। और बड़े–बड़े धनाधीर समाज पर अपनी सत्ता स्थापित किए हुए है।

नयी कहानी ने समय के दुहरेपन को पहचाना है समय बहुत आगे निकल गया और पुराना लेखक समाज के साथ आगे तो बढ़ा लेकिन पात्र पीछे रह गया लेखक उनकी सृष्टि करने को अनजाने ही बाध्य हो जाता है। कभी दरे–देर तक वह अपनी सृष्टि को नहीं पहचानता। जबकि नया लेखक इसे पहचान रहा है। असलियत की खोज में हैं, वास्तविकता के निर्माण एवं परिवर्तन में लगा हुआ है। उन्हें एक सुविधा यह भी है कि उनके अनुभवों का संसार निकट भूत का है इसलिए उसकी रचना में अतंर स्वयं कम लक्षित होता है। अमरकांत उन्ही लेखकों में एक है जो निकट के दूर हुए जीवन की ओर बार–बार लौटते हैं इसलिए जहाँ उनकी रचनाओं के चरित्र समसामयिक मालूम होते हैं वहीं इस बात का भी संकेत देते हैं कि लेखक की चेतना में इन चरित्रों के बाद एक खालीपन आना शुरू हो गया है। जीवन के संबंध में एक परिवर्तनशील दृष्टि का जो आभास अमरकांत के एक रूपी कथानकों ने शुरू में देना शुरू किया वह अब एक तरह से ठहरा हुआ अनुभव बोध सा जगाने लगा है।

वर्ग चरित्र और उनके मनोवैज्ञानिक समझ के क्षेत्र में अमरकांत की गहरी रूचि है। लेकिन वे विचित्र चरित्रों की सृष्टि की ओर बढ़ रहे हैं जिनमें केस–स्टडी का व्यंग्य चित्रात्मक स्वर प्रमुख होने लगा है। खलनायक उनकी ऐसी ही कहानी है जिसके पूरे अन्तरंग शिल्प को डिप्टी कलेक्टरी से मिला कर देखे तो लगता है कि लेखक रचनाशीलता के ढ़लान पर खड़ा है और निरंतर हास्य की ओर जा रहा है। लेकिन यही अमरकांत की उन रचनाओं की ओर भी ध्यान जाता है जो दोपहर का भोजन से चलकर छिपकली के वस्तुनिष्ठ यथार्थ चित्रण तक पहुंची है। अमरकांत के विचित्र चरित्रों की ओर भी ध्यान जाता है जो दोपहर का भोजन से चलकर छिपकली के वस्तुनिष्ठ यथार्थ चित्रण तक पहुँची है अमरकांत विचित्र चरित्रों की रचना छोड़कर अपनी कहानियों में समय के अंतराल को भर सकें तो नये भावबोध के गहन अध्ययन की समस्या खुद ही हल हो सकती है। लेकिन फिलहाल तो समय नये सवालों के उठाने का है न कि उन सवालों के नये उत्तर देने का जो आज जिन्दगी से पीछे छूट गए है।

मार्कण्डेय का संक्षिप्त परिचय–

1970 के दशक में हिंदी में एक खास तरह की लेखन परंपरा दिखाई दी। मार्कण्डेय उसके सिरमौर कहे जा सकते हैं, जो नई कहानी आंदोलन के पुरोधा थे और इस हैसियत से नई कहानी को लगातार जीवंत और सार्थक बनाने में जुटे थे। यह मार्कण्डेय के कारण ही संभव हो पाया कि मध्यवर्गीय कही जाने वाली, साहित्य परिधि से दूर नगरीय परिवेश के मोह पाश में बंधी नई कहानी गांव, जमीन और कृषि संबंधों पर केंद्रित हुई। आजादी के बाद सक्रिय हिंदी लेखकों में बिरले ही साहित्यकार होंगे जिन्होंने भूदान जैसा मुद्दा उठाया तथा अशिक्षित समाज के नायक के रूप में कहानी में स्थान प्रदान किया। यह सिलसिला मार्कण्डेय की अनेकानेक कथा रचनाओं में देखने को मिला। पचास के दशक में एक समय तो ऐसा था जब मार्कण्डेय सप्ताह नहीं तो महीने के स्तर पर कहानी लिखते थे और उनकी कहानियाँ तत्कालीन प्रसिद्ध पत्रिकाओं में लगातार प्रकाशित होती थीं। यही नहीं, उनकी एक भरीपूरी लेखमाला

'कल्पना' में ही उन दिनों छद्मनाम से छप रही थी। इस लेखमाला ने पचास और साठ के दशकों में विचारधारात्मक संचार का नया प्रतिमान कायम किया था और हिंदी कथा का बड़ा पाठक वर्ग साहित्य के कई अनछुए पहलुओं पर सोचने को विवश हुआ था। यह तब था जब मार्कण्डेय केवल अपने तर्कों के बल पर संस्कृति और कला के पक्षों का गंभीरता से जायजा ले रहे थे। जब इस पूरे किस्से को मार्कण्डेय अपने अनोखे ढंग से बयान करते थे तो श्रोता अनायास आज से पांच-छह दशक पूर्व के काल में लौट जाता था। वह अलग साहित्यिक दौर था, उन दिनों बहसों की गंभीरता प्रसांगिक होती थी और साहित्य के पाठक समकालीन समस्याओं में दिलचस्पी लेते थे। मार्कण्डेय उस दौर के प्रेरणादायी हस्ताक्षर रहे हैं।

मार्कण्डेय की कहानियाँ मूलतः ग्रामीण परिवेश को समर्पित थीं। ग्रामीण जीवन की स्थितियों पर समस्यामूलक कहानियाँ लिखने के साथ-साथ मार्कण्डेय ने कृषि संबंधी माहौल के जीवंत पात्रों को भी बारीकी से पहचाना और उन्हें इतिहास की गतिशील मूल्य व्यवस्था का वाहक बना कर पेश किया। कई प्रसंगों में उन्होंने उस भौगोलिक परिवेश को भी उकेरा जहाँ संस्कृतिक मान्यताओं और प्रतीकों का असर देखने को मिलता है। इन सब के बीच उनकी भाषा का अलग ही स्वरूप देखने को मिलता है। इसके तहत मार्कण्डेय ने देशज शब्दों में अर्थ संकेतों की उपस्थिति दर्ज कराते हुए कहानियों को बहुआयामी बनाया। यहाँ वे प्रेमचन्द्र से हटकर दिखाई देते हैं। प्रेमचन्द्र की कहानी में लोक कथा का ताना बाना दिखाई देता था, जबकि मार्कण्डेय में संभावित विचार की विभिन्न तहों पर बल था। जब मार्कण्डेय के पात्र अपने संवाद बोलते थे तो वे अपनी स्थिति के प्रति पूरी तरह सजग नजर आते थे। इस आयाम को संभव बनाने के लिए मार्कण्डेय अनुभव की प्रस्तुति का चित्रण करते थे। उनकी कोशिश रहती थी कि पात्र अपने व्यक्तित्व की संपूर्णता में उपस्थित हों। इस प्रक्रिया में लेखकीय रवैया और वैचारिक आग्रह पीछे छूट जाता था और पात्रों के अनुभव का निखार उजागर हो उठता था। मार्कण्डेय ने इसे अपनी कहानियों की विशिष्टता कहा और उन्हें नई कहानी आंदोलन की वैचारिक पहचान बतला कर पेश किया। इसके साथ ही उन्होंने पचास और साठ के दशक के सांस्कृतिक माहौल से जोड़ कर देखा।

कुछ दूसरी सूक्ष्म स्थितियों को भी अपनी रचना में स्थान दिया। बल्कि कहा जा सकता है कि मार्कण्डेय के नारी पात्रों में भावना की प्रबलता और साहसिकता पर अतिरिक्त जोर मिलता है। नारी पात्रों को उनकी कहानियों में जो प्रेरक तत्व हासिल है उनके सामने अनेक पुरुष पात्र फीके जान पड़ते हैं। ऐसा लगता है कि कई बार लेखक अपने नारी पात्र को कलात्मक सूक्ष्मता और सांकेतिकता से समृद्ध करता है। उनकी 'माही' शीर्षक कहानी को इसकी मिसाल कहा जा सकता है। वैसे ही कहानी 'सूर्या' में यौन भावना का उद्वेग सामाजिक आचरण के नियमों को चुनौती देता प्रतीत होता है। एक और कहानी 'प्रिया सैनी'' है जहाँ एक कलाकार नारी-पात्र के नजरिये से मध्यवर्गीय मानसिकता और वैचारिक सीमा को गहरे ढंग से परिभाषित किया गया है।

ग्रामीण जीवन की कथा ही इस लेखक के सरोकारों का केन्द्र रही है। उनकी चर्चित कहानी 'बीच के लोग' में पुरानी पीढ़ी और युवा पीढ़ी के बीच का अंतराल स्पष्ट देखा जा सकता है। उसी तरह उनकी कहानी प्रश्न उठाती है कि क्या गांव में विद्यमान अंतर्विरोधों का हल सर्वस्वीकृत आम सहमति और सुधारवाद है, मसलन गाँधीवाद जिसके तहत शेर और बकरी एक ही घाट पर पानी पीते हैं, या फिर उस प्रसंग में शोषण से लड़ने के लिए नया संघर्षशील नजरिया अख्तियार करना आवश्यक है? 'बीच के लोग' कहानी का यह कथ्य सहसा सत्तर के

दशक का प्रतिनिधि सच बन कर उभरता है। इसी आयाम को बाद में मार्कण्डेय ने अपने महत्वपूर्ण उपन्यास 'अग्निबीज' में भी विस्तृत फलक पर उभारने का गंभीर प्रयास किया।

मार्कण्डेय की कथा अलोचना से संबंधित पुस्तक 'कहानी की बात' की अलग से चर्चा की जा सकती है। जिसमें भैरव प्रसाद गुप्त द्वारा संपादित पत्रिका 'नई कहानियां' में उनके निबंध प्रकाशित हुए थे। यद्यपि इन निबंधों का चयन स्वयं मार्कण्डेय करते थे, लेकिन कई अवसरों पर भैरव के सुझावों से लाभ मिलने पर मार्कण्डेय के तर्कों का महत्व बढ़ जाता था। संभवतः यह भैरव के व्यक्तित्व का प्रभाव था कि मार्कण्डेय ने निजी प्रकरणों को बहस के दायरे से बाहर रखा और इस तरह विचार पक्षों और तर्कों को वस्तुपरक दिशा में बढ़ाया। किन्तु भैरव के पत्रिका से हटने पर अचानक मार्कण्डेय का लेखन कम हो गया और उनकी विचार सामग्री पर तो जैसे रोक ही लग गई। फिर भी मार्कण्डेय का कहानी लेखन अभियान जारी रहा और संकलनों तथा छिटपुट पत्रिकाओं के माध्यम से उनकी रचनाएं पाठकों को कुछ अंतराल से ही सही, लेकिन उपलब्ध होती रहीं।

सत्तर के दशक में मार्कण्डेय ने 'कथा' शीर्षक की एक स्वतंत्र पत्रिका निकाली। कथा में रचनाएं अवश्य छपती थीं, लेकिन वह मुख्यतः विचार की पत्रिका थी। फिर, इन विचारों का दायरा सांस्कृतिक मसलों तक सीमित न था, बल्कि वहाँ राजनीतिक परिपेक्ष्य पर भी भरपूर सामग्री दी जाती थी। 'कथा' के कुछ अंकों में राजनीतिक नेताओं–विचारकों के साथ वैचारिक टकराहट के नजरिये के विचार भी दिये गए। ऐसा विवेकपूर्ण संपादन समकालीन साहित्यिक पत्रिका में दुर्लभ है।

मार्कण्डेय के आयोजकीय योगदान पर प्रायः ध्यान नहीं दिया गया है। कम लोग परिचित हैं कि कई महत्वपूर्ण साहित्यिक सम्मेलनों का आयोजन मार्कण्डेय ने किया। इनमें प्रमुख सन् 1974 का इलाहाबाद लेखक सम्मेलन है जिसमें लगभग दो सौ लेखकों ने शिरकत की थी। इस सम्मेलन में महादेवी वर्मा, यशपाल, सुमित्रानंदन पंत, हरिशंकर परसाई के साथ साथ भैरव प्रसाद गुप्त, अमरकांत, शेखर जोशी, विजयदेव नारायण साही, जगदीश गुप्त, गिरिराज किशोर के साथ साथ इसराइल, चंद्रभूषण तिवारी, सतीश जमाली, दूधनाथ सिंह, श्रीराम तिवारी और अनेक युवा लेखकों ने हिस्सा लिया था। इन लेखकों की सक्रियता और भागीदारी से उस समय जो माहौल बना उससे तत्कालीन रचना में उत्साह और आवेग का अनोखा संचार हुआ। 'जनवादी लेखक संघ' की स्थापना में भी मार्कण्डेय की भूमिका महत्वपूर्ण थी।

मार्कण्डेय कथाकार के साथ योजनाओं के मास्टर भी कहे जाते हैं। उनके पास हर समय कोई न कोई नया विचार होता है जिसे अंजाम देने में उनका मस्तिष्क सदा सक्रिय रहता था। उन्होंने हिन्दी रचनाओं के अनुवाद पर भी जोर दिया।

मार्कण्डेय हिन्दी के जाने–माने कहानीकार थे। वे 'नई कहानी' आंदोलन के प्रमुख हस्ताक्षर थे। उत्तर प्रदेश के जौनपुर जिले में जन्में मार्कण्डेय की कहानियाँ आज के गाँव के पृष्ठभूमि तथा समस्याओं के विश्लेषण की कहानियाँ हैं। इनकी भाषा में उत्तर प्रदेश के गाँवों की बोलियों की अधिकता होती है, जिससे कहानी में यथार्थ पृष्ठभूमि का निरुपण होता है। कथाकार और संपादक होने के साथ–साथ वह समीक्षक भी थे। हिन्दी की जनवादी साहित्य परंपरा के निर्माण में मार्कण्डेय जी की अग्रणी भूमिका रही है। मार्कण्डेयजी सिर्फ साहित्यकार ही नहीं थे बल्कि साहित्य और लेखकों के संगठनकर्ता भी थे। साहित्य की प्रगतिशील परंपरा में स्वतंत्र भारत में जिन लेखकों ने साहित्यकारों के संगठन निर्माण में अग्रणी भूमिका अदा की थी

उनमें मार्कण्डेयजी का योगदान सबसे ज्यादा था। साहित्य और संस्कृति के क्षेत्र में उनकी पत्रिका को मील का पत्थर माना है।

अग्निबीज, सेमल के फूल (उपन्यास), पान फूल, महुवे का पेड़, हंसा जाए अकेला, सहज और शुभ, भूदान, माही, बीच के लोग और हलयोग (कहानी संग्रह), सपने तुम्हारे थे (कविता संग्रह), कहानी की बात (आलोचनात्मक कृति), पत्थर और परछाइयां (एकांकी संग्रह), आदि उनकी महत्वपूर्ण कृतियां हैं। उनकी कहानियों का अंग्रजी, रुसी, चीनी, जापानी, जर्मनी आदि में अनुवाद हो चुका है। उनकी रचनाओं पर बीस से अधिक शोध हुए हैं।

प्रारंभ से ही राजनीतिक एवं साहित्यक क्षेत्रों में सक्रिय रहे मार्कण्डेय ने साहित्य की विविध विधाओं यथा कहानी संस्मरण यात्रावृतांत कलित निबंध आदि में लगभग तीस पुस्तकों की रचना की। पटना से निकलने वाली पत्रिका 'मुक्ति कंठ' का 18 वर्ष तक प्रकाशन एवं संपादन किया। आप मूलतः गांधी चिंतन से प्रभावित रहे। यही कारण है कि नगरीय परिवेश में रहते हुए भी अपने ग्रामीण परिवेश की सहजता एवं फक्कड़पन को दर्शाया है। आंचलिक परिवेश के प्रखर अंतद्वंद को भी उन्होंने सफलता से प्रस्तुत किया है। ज्वलंगता के बाद के संघर्षमय ग्रामीण जीवन की सजीव झांकी को सफलता से प्रस्तुत किया है। पान–फूल, महुए का पेड़, हंसा जाई अकेला, भूदान, माही, सहज और शुभ, बीच के लोग, पत्थर की परछाइयां उनके महत्वपूर्ण कहानी संग्रह हैं।

मार्कण्डेय जी ने अपनी कहानियों में जीवन के सुख–दुःख को अपना विषय बनाया। उसी प्रकार 'महुए का पेड़' में व्यक्तिगत जीवन की झुंझलाहट तथा आक्रोश से भरी तीखी सामाजिक संवेदना है। वहीं 'हंसा जाई अकेला़' कहानी संग्रह बड़ी ही सहज शैली में लिखी गई कहानी है। मार्कण्डेय ने स्वतंत्रता के बाद आजादी के स्वाद से महरूम आंचलिक परिवेश का समस्याओं को नया धरातल प्रदान किया, जिसमें युवावर्ग का समाज के प्रति मोह भंग एवं निराशा के भाव को चित्रित किया है। जिनमें उभरते हुए समाज की नयी सच्चाइयों के संदर्भ में रागात्मक संबंधों को चित्रित किया गया है। जिसमें भोगे हुए यथार्थ का अंकन सच्चाई के साथ किया है। अपनी कहानियों में मार्कण्डेय जी ने समस्याओं को प्रतिनिधि कहानी के रूप में प्रस्तुत किया है। जिसमें समष्टिगत चिंतन व्यक्त होता है। परंपरओं में परिवर्तन है। जीवन के विविध पहलुओं का गंभीर अध्ययन एवं मनन कर उन्होंने उसे साहित्य के माध्यम से समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है। उनके कथ्य जीवन को छूते है इसी से उनमें जीवन झलकता है।युग का यथार्थ प्रतिबिंबित होता है। जिसमें पाठकों को जीवन शक्ति एवं अनुभवों की प्रामाणिकता देखने को मिलती है। अपनी कहानियों के माध्यम से उन्होंने समाज की रुढ़िगत वर्जनाओं, अंधविश्वासों के स्थान पर नवीन मानवतावादी मूल्यों को स्थापित किया है।

अपने साहित्याकर्ष के विविध रूपों में मार्कण्डेय को कहानी में सिद्धहस्त माना गया। क्योंकि कहानी कला के तत्वों की दृष्टि से उनकी कहानी सर्वश्रेष्ठ साबित हुई। हिन्दी के प्रायः समस्त ख्यातिलब्ध साहित्यकारों ने उनकी कहानियों को न केवल सराहा वरन् उनकी समीक्षा की। हिन्दी के प्रख्यात् आलोचक रामविलास शर्मा उनकी कहानियों की समीक्षा करते हुए कहते हैं –''मार्कण्डेय की व्यंग्यपूर्ण कहानियों में अक्सर कथ्य शिल्प स्वच्छ चरित्र उभरे हुए तथा भाषा ज्यादा प्रवाह पूर्ण होती है। उनकी कहानियों में व्यंग तथा करूणा का सुंदर मिश्रण दिखाई देता है।''

प्रसिद्ध नाटककार मोहन राकेश के शब्दों में –''मार्कण्डेय की कहानियाँ इस दृष्टि से सोद्देश्य नहीं है कि उनमें से कोई न कोई निष्कर्ष निकाला जा सके। लेकिन वास्तविकता के अंकन की अपनी सोद्देश्यता है तथा इससे उनकी कहानियाँ आज के जीवन से ही ली गयी हैं।''

इस दृष्टि से हम कह सकते हैं कि मार्कण्डेय ने साहित्य की विभिन्न विधाओं में अपना योगदान दिया। वहीं कहानी कला के क्षेत्र में उनकी महत्वपूर्ण उपलब्धि रही। कारण उनकी कहानियों में स्वतंत्रता के पश्चात् की त्रस्त मानवता, गिरते जीवन मूल्यों, युवावर्ग में छाती हताशा एवं विक्षोभ को आवाज दी तथा कहानियों के माध्यम से समाज में जीवन शक्ति का संचार किया उनकी कहानियाँ युगबोध का प्रतिनिधित्व करती है तथा अपने अनुभवों के माध्यम से मार्कण्डेय जी ने संवेदनाओं, भावनाओं के आधार पर नवीव मानवमूल्यों एवं सकरात्मक समाज के विविध आयामों की खोज की है।

प्रारंभ से ही राजनीतिक एवं साहित्यक क्षेत्रों में सक्रिय रहे मार्कण्डेय ने साहित्य की विविध विधाओं यथा कहानी संस्मरण यात्रावृतांत कलित निबंध आदि में लगभग तीस पुस्तकों की रचना की। पटना से निकलने वाली पत्रिका 'मुक्ति कंठ' का 18 वर्ष तक प्रकाशन एवं संपादन किया। आप मूलतः गांधी चिंतन से प्रभावित रहे। यही कारण है कि नगरीय परिवेश में रहते हुए भी अपने ग्रामीण परिवेश की सहजता एवं फक्कड़पन को दर्शाया है। आंचलिक परिवेश के प्रखर अंतद्वंद को भी उन्होंने सफलता से प्रस्तुत किया है। ज्वलंगता के बाद के संघर्षमय ग्रामीण जीवन की सजीव झांकी को सफलता से प्रस्तुत किया है। पान–फूल, महुए का पेड़, हंसा जाई अकेला, भूदान, माही, सहज और शुभ, बीच के लोग, पत्थर की परछाइयां उनके महत्वपूर्ण कहानी संग्रह हैं।

मार्कण्डेय जी ने अपनी कहानियों में जीवन के सुख–दुःख को अपना विषय बनाया। उसी प्रकार 'महुए का पेड़' में व्यक्तिगत जीवन की झुंझलाहट तथा आक्रोश से भरी तीखी सामाजिक संवेदना है। वहीं 'हंसा जाई अकेला' कहानी संग्रह बड़ी ही सहज शैली में लिखी गई कहानी है। मार्कण्डेय ने स्वतंत्रता के बाद आजादी के स्वाद से महरूम आंचलिक परिवेश का समस्याओं को नया धरातल प्रदान किया, जिसमें युवावर्ग का समाज के प्रति मोह भंग एवं निराशा के भाव को चित्रित किया है। जिनमें उभरते हुए समाज की नयी सच्चाइयों के संदर्भ में रागात्मक संबंधों को चित्रित किया गया है। जिसमें भोगे हुए यथार्थ का अंकन सच्चाई के साथ किया है।

अपनी कहानियों में मार्कण्डेय जी ने समस्याओं को प्रतिनिधि कहानी के रूप में प्रस्तुत किया है। जिसमें समष्टिगत चिंतन व्यक्त होता है। परंपरओं में परिवर्तन है। जीवन के विविध पहलुओं का गंभीर अध्ययन एवं मनन कर उन्होंने उसे साहित्य के माध्यम से समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है। उनके कथ्य जीवन को छूते है इसी से उनमें जीवन झलकता है।युग का यथार्थ प्रतिबिंबित होता है। जिसमें पाठकों को जीवन शक्ति एवं अनुभवों की प्रामाणिकता देखने को मिलती है। अपनी कहानियों के माध्यम से उन्होंने समाज की रूढ़िगत वर्जनाओं, अंधविश्वासों के स्थान पर नवीन मानवतावादी मूल्यों को स्थापित किया है।

उपरोक्त आधार पर हम यह बात विश्वास के साथ कह सकते हैं कि हिन्दी कहानी के क्षेत्र में मार्कण्डेयजी का स्थान महत्वपूर्ण है।

सुदर्शन का जीवन–परिचय

सियालकोट पाकिस्तान में जन्में सुदर्शन का वास्तविक नाम बदरीनाथ था। समाज व राष्ट्र को स्वच्छ व सुदृढ़ बनाना उनका मुख्य लक्ष्य रहा। प्रेमचन्द्र की भांति सुदर्शन भी मूलतः उर्दू में लेखन करते थे। सुदर्शन की भाषा सहज, स्वाभाविक, प्रभावी, और मुहावरेदार है। सुदर्शन प्रेमचन्द्र परंपरा के कहानीकार हैं। निःसंदेह उनका दृष्टिकोण सुधारवादी है। उन्होंने अपनी सभी कहानियों में समस्यायों का समाधान आदर्शवाद से ही किया है।

किन्तु 'हार की जीत' जैसी कालजयी रचना साहित्य को देने वाले इस लेखक के बारे में बहुत कम लोगों को जानकारी है। कारण कि वे सूर–तुलसी की श्रेणी के साहित्यकार हैं जिन्होंने अपना साहित्य सदैव लोक कल्याण हेतु लिखा, कीर्ति का भाव कभी उनके मन में आया ही नहीं। यही कारण है कि यदि हम पंडित सुदर्शन की जन्मतिथि, जन्मस्थान या कर्मभूमि के बारे में खोजें तो निराशा ही हाथ लगती है। मुंशी प्रेमचन्द्र और उपेन्द्रनाथ अश्क की तरह पंडित सुदर्शन का भी हिन्दी और उर्दू दोनों भाषाओं पर समान अधिकार है। उनकी गणना प्रेमचन्द्र संस्थान के लेखकों में विश्वम्भरनाथ कौशिक, राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह, भगवतीप्रसाद वाजपेयी आदि के साथ की जाती है।

लाहौर की उर्दू पत्रिका,'हज़ार दास्तां' में उनकी अनेक कहानियां प्रकाशित हुईं। उनकी पुस्तकें मुम्बई के हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय द्वारा भी प्रकाशित हुईं। सुदर्शन को गद्य और पद्य दोनों में महारत थी। ''हार की जीत'' पंडित जी की पहली कहानी है और 1920 में सरस्वती में प्रकाशित हुई थी।

मुख्यधारा विषयक साहित्य–सृजन के अतिरिक्त उन्होंने अनेकों फिल्मों की पटकथा और गीत भी लिखे। सोहराब मोदी की सिकंदर सहित अनेक फिल्मों की सफलता का श्रेय उनके पटकथा लेखन को जाता है। सन् 1935 में उन्होंने ''कुंवारी या विधवा'' फिल्म का निर्देशन भी किया। आप 1950 में बने फिल्म लेखक संघ के प्रथम उपाध्यक्ष थे। सुदर्शन 1945 में महात्मा गांधी द्वारा प्रस्तावित अखिल भारतीय हिन्दुस्तानी प्रचार सभा वर्धा की साहित्य परिषद् के सम्मानित सदस्यों में थे। उनकी रचनाओं में हार की जीत, सच का सौदा, अठन्नी का चोर, साइकिल की सवारी, तीर्थ यात्रा, पत्थरों का सौदागर, पृथ्वी–वल्लभ आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

फिल्म धूप–छाँव के प्रसिद्ध गीत 'बाबा मन की आँखें खोल' व एक अन्य गीत 'तेरी गठरी में लगा चोर मुसाफिर जाग जरा' जो शायद किसी फिल्म का गीत न होते हुए भी बहुत लोकप्रिय हुआ।

प्रेमचन्द्र संस्थान के कहानीकार के रूप में सुदर्शन जी की ख्याति है। जहाँ तक साहित्य को लेकर बात कहें तो उनके लेखन को कई साहित्यकारों की रचनाओं ने प्रभावित किया है। वे स्वयं एक स्थान पर कहते हैं कि 'मेरे ऊपर सबसे ज्यादा प्रभाव मोपांसा का पड़ा है। डण्सन के ड्रामे भी मुझे प्रिय रहे हैं तथा मटरलिक को भी मैंने पढ़ा है। एक और लेखक हैं जिसका कि मैं भक्त हूँ वह है सेन काइ विसा यह पोलिश है। इसके अतिरिक्त रूसी लेखक टालस्टाय की कला भी मुझे अच्छी लगती है। देशी लेखकों में मुझे प्रेमचन्द्र ने सबसे अधिक प्रभावित किया है। उनकी कहानियाँ पढ़कर ही मुझे कहानी लेखन की प्रेरणा मिली। इसलिए मैं उन्हें अपना गुरू मानता हूँ। भाषा की दृष्टि से तुलसीदास जी ने अधिक प्रभावित किया। उपनिषदों को पढ़ता हूँ, बाइबिल की खूबियों को भी गहराई से अध्ययन करता हूँ।'

प्रेमचन्द्र के करीब होने से उन्होंने जीवन में सदैव आदर्शों को महत्व दिया है। गरीबों के प्रति वे संवेदनशील रहे हैं। उनकी कथनी और करनी में समानता का भाव है। एक बार आर्य समाज के उपनिदेशक के पद पर थे वकील साहब से भोजन पर बहस हो गई तो उन्होंने फौरन अपने पद से त्यागपत्र दे दिया। अपने लेखन के बारे में सुदर्शन जी का मत है कि वे सदैव सृजनशीलता में रहना चाहते हैं। अपनी किसी भी रचना से पूर्णतः संतुष्ट होकर नहीं बैठ जाते यही कारण है कि अगले लेखन की ओर प्रवृत हो जाते हैं।

वे कहते हैं एक लेखक को लेखन हेतु आंतरिक भावना का होना बहुत आवश्यक है। लेखक किसी का दिया हुआ सबक नहीं है जिसे सीखा जा सके बल्कि लेखक को लेखन हेतु भीतर से प्रेरणा आती है। भावों का प्रवाह होता है, जो स्वयं लेखन हेतु प्रेरित करता है। जब तक लेखक अपनी भावनाओं को शब्द के रूप में नहीं उतार देता उसे चैन नहीं आता। लेखन के बाद उसे एक आत्म संतुष्टि का भाव मिलता है।

सुदर्शन मूलतः एक कहानीकार है उनकी कहानियों में हमें वातावरण की प्रधानता देखने को मिलती है ये वातावरण यथार्थ के अत्यन्त निकट होने से कहानी में मार्मिकता एवं सजीवता उत्पन्न कहते हैं। साथ ही अपनी कहानियों में सुदर्शन ने मानव चरित्रों का भी सूक्ष्म अध्ययन किया है। यही कारण है कि उनकी अधिकांश कहानियाँ मानवीय जीवन के इतिहास का उद्‌घाटन करतीं हैं तथा सामाजिक जीवन की समस्याओं को कैनवास पर लेकर आती है। उनकी कहानियों में अंतःप्रवृति का उद्‌घाटन बड़े ही कलात्मक रूप से प्रस्तुत किया है। सुदर्शन जी कला–कला के सिद्धांत को नहीं कला जीवन के सिद्धांत को वरीयता प्रदान करते हैं। वे अपनी कथा में पुरातन विषयवस्तु को भी नवीन (पाश्चात्य) शैली में तकनीक विधान के साथ प्रस्तुत करते हैं। जनसाधारण को नैतिक शिक्षा प्रदान करते हैं, समाज की रूढ़ियों, कुरीतियों व अंधविश्वास के प्रति समाज में चेतना जाग्रत करते हैं।

उनकी भाषा, विषय, पात्र एवं परिस्थिति के सर्वथा अनुकूल होती है, जो स्वाभाविकता एवं व्यवहारिकता के सर्वथा निकट होती है। मुहावरे और लोकोक्तियाँ उनकी भाषा को सुसज्जित कर अधिक प्रभावी बनाती है।

कहानी लेखन के अतिरिक्त सुदर्शन जी का फिल्मों से भी घनिष्ठ संबंध रहा है। उन्होंने गीतों और संवादों के लेखन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस संबंध में वे स्पष्ट कहते हैं कि प्रेमचन्द्र के जीवन में ड्रामा नहीं था, जो कि फिल्मी जगत में प्रवेश हेतु अति आवश्यक होता है। प्रेमचन्द्र में इस प्रकार के प्रदर्शनकारी नाट्यशीलता का अभाव था। दूसरे शब्दों में, प्रेमचन्द फिल्मी जीवन से समझौता नहीं कर पाए। मैंने इस नाटकीयता को भी अपनाया और फिल्मी जीवन से फिल्मी से समझौता भी किया। संभवतः यही कारण है कि प्रेमचन्द्र के समकालीन होते हुए भी सुदर्शन जी ने अधिक लोकप्रियता हासिल की।

राजी सेठ का संक्षिप्त परिचय

मानवीय संबंधों में द्वंद और अर्न्तद्वंद की विकलता को अपनी कहानियों के माध्यम से प्रस्तुत करने वाली राजी सेठ का जन्म पाकिस्तान के नौशेहरा छावनी में हुआ था। जीवन के प्रति आशात्मक दृष्टिकोण रखने वाली राजी सेठ ने अपनी कहानियों के माध्यम से भी सकारात्मक विचारों को अपनी कहानियों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। राजी सेठ ने मुलतः

नारी विषयक विषयों पर अपनी लेखनी चलाई। संभवतः एक नारी होने के नाते उन्होंने नारी के मनोविज्ञान को बहुत ही सूक्ष्मता से समझा और परखा है। एक साहित्यकार में वह दृष्टि होती है कि वह समाज के किसी वर्ग की पीड़ा या इतिहास ,मनोविज्ञान को बारीकी से देखता है। एक सामान्य आँखे जो कुछ नहीं देख पाती, वह साहित्यकार देखता है। इसीलिए स्वयं राजी सेठ कहती हैं– ''कथ्य के बारे में एक तरह का पुर्वाग्रह मन में अवश्य है। जो कुछ मैं अच्छी तरह जानती हूँ उसे ही चित्रित करना चाहती हूँ। अतः जिस परिवेश की मैं हिस्सेदार हूँ वही मेरा कथ्य है। हालांकि इसका यह अर्थ नहीं कि मेरा कथ्य नितांत भोगा हुआ है। यह मेरा जाना हुआ भी हो सकता है।''

सचमुच एक साहित्यकार को अपने परिवेश में दखल रखने हेतु उसके आगे की जमीन इतिहास के बारे में जानना बहुत जरूरी होता है। वैसे भी एक साहित्यकार समष्टिवादी दृष्टिकोण के साथ ही समाज को देखता है। अपने नारी जीवन की करुण एवं मार्मिक व्यंजना का राजी जी ने जिस सहजता से चित्रण किया है उसे देखकर लगता है कि कहानीकार स्वयं कहीं न कहीं इस दृश्य की साक्षी रही है। सारी विषयवस्तु वस्तुगत है। अपनी इसी रचनाधर्मिता पर वह कहती हैंः–''रचना के भीतर जिस संसार की रचना होती है उसे अनात्म या पूरी तरह वस्तुगत कैसे कह दिया जा सकता है। अपने भीतर से चलकर कथ्य के मूल को पकड़ता हुआ किसी न किसी रूप में रचनाकार का आत्मकथ्य रचना है लेकिन सब कुछ लेखक को भी पूरी तरह से ज्ञात होता है।''

कहानी के अतिरिक्त राजी सेठ ने साहित्य की अन्य विधा जैसे –कहानी, कविता, समीक्षा, निबंध आदि सभी विधाओं में समान अधिकार से लिखा। तत्सम, निष्कवच उनके उपन्यास हैं। अर्गेस्ट मायसेल्फ एंड अदर स्टोरीज़ अनआर्म्ड अंग्रेजी से अनुदित। मेरे कई नहीं मीलों लम्बा पुल आदि रचनाएं है। उनके कहानी संकलन हैं– अंधे मोड के आगे, तीसरी हवेली, दूसरे देशकाल में, यह कहानी नहीं, सदियों से, अर्गेस्ट मायसेल्फ एंड अदर स्टोरीज़।

इन कहानियों में राजी सेठ ने मानवीय संबंधों के अंर्तद्वद की जीवनकथा को प्रस्तुत किया है, उनकी कहानी में पात्रों की आंतरिक विकलता के साथ जीवन के यथार्थ की गहराई है। उनके पात्रों की विशेषता है कि वे कभी भी जीवन संघर्षों से हार नहीं मानते बल्कि अपने संकल्पित इरादों के साथ जीवन मूल्यों से जूझते रहते हैं। कहना न होगा कि उनकी स्त्री पात्र अबला नहीं सबला है। जो संवेदना के बहाव में स्वयं को बहा नहीं देती बल्कि युगीन सत्य का सामना करती है। वह संघर्ष पथ पर स्वयं को मिटाने के बजाए स्वयं सृजन पथ निर्मित करती है। अपने लेखन से उन्होंने अपने पात्रों के माध्यम से समाज को सजग दृष्टि एवं नवीन मूल्य प्रदान किया। यही कारण है कि कहानी के क्षेत्र में उनका शिल्प एकदम अनूठा है, उनकी कहानी जीवन से वार्तालाप करती है। जो कुछ उन्होंने भोगा है, देखा है, दिल को छुआ है, कचोटा है उन सभी भावों ,संवेदनाओं और मूल्यों का तराश कर वह उन्हें नवीन सांचों में ढालती है। कहीं कहानी में एकाकी एवं बिखरती संवेदना के चित्र भी दिखाई देते है।

अन्ततः राजी सेठ की कहानियाँ कहानी कला के आधार पर अपनी निष्ठा को साबित करती है। वस्तुतः जीवन के प्रति अपनी आशावादी दृष्टिकोण, यथार्थ की कटुता को तराश कर नवीन सजग मूल्यों में प्रकट करना ही उनकी अहं विशेषता है। इस दृष्टि से स्त्री कहानीकारों में स्त्री विमर्श लेखन में राजी सेठ अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं।

इकाई सारांश

प्रत्येक युग का साहित्य अपनी विशेष सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक स्थितियों से प्रभावित होकर जीवन संघर्ष में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है वह जीवन की मर्म छवियों को इस प्रकार अंकित करता है कि उससे हमारी मूल्य चेतना गहरे प्रभावित होती है। इस दृष्टि से देखें तो 1950 के बाद के कथाकारों में अमरकांत का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उसी प्रकार भीष्मसहानी की कहानियों में जहाँ एक ओर सहृदयता व सहानुभूति है। वही दूसरी ओर जातीय तथा राष्ट्रीयता स्वाभिमान की आग भी है। वे पूँजीवादी और यथार्थवादी विचार धारा के अन्तर्विरोधों को खोलते चलते हैं। मार्कण्डेय ने भी अपनी कहानियों में समस्याओं को प्रतिनिधि कहानी के रूप में प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियाँ मूलतः ग्रामीण परिवेश को समर्पित थीं। ग्रामीण जीवन की स्थितियों पर समस्यामूलक कहानियाँ लिखने के साथ–साथ मार्कण्डेय ने कृषि संबंधी माहौल के जीवंत पात्रों को भी बारीकी से पहचाना और उन्हें इतिहास की गतिशील मूल्य व्यवस्था का वाहक बना कर पेश किया।

अपनी प्रगति जांचिए –

1. चीफ की दावत कहानी की सार अपने शब्दों में लिखिए
2. भीक्ष्म साहनी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर सार गर्भित लेख लिखिए।
3. कहानीकार अमरकांत की कहानी कला की विशेषताएं बताइए।
4. 'दोपहर का भोजन कहानी आज के सर्वहारा वर्ग की पीड़ा को चित्रित करता है' आप इस मत से कहाँ तक सहमत हैं समीक्षा कीजिए।
5. ''मार्कण्डेय की कहानियों में व्यंग तथा करूणा का सुंदर मिश्रण दिखाई देता है।'' इस कथन के आधार पर उनकी कहानी कला की विशेषता बताइए।

नियत कार्य / गतिविधि –

1. मुशी चंद्रिका प्रसाद की समस्या वर्तमान समय की प्रासंगिकता है, इससे आप कहाँ तक सहमत हैं ?
2. वर्तमान दौर में बढ़ते वृद्धाश्रम चीफ की दावत कहानी को चरितार्थ करते हैं, आप इस संबंध में क्या सुझााव देना चाहेंगे ?
3. बाजारवाद में रिश्तों की प्रासंगकिता को लेकर अपने साथियों से चर्चा कीजिए ?
4. सिद्धेश्वरी भारतीय नारी का आदर्श रूप प्रस्तुत करती है, क्या आप आज की नारी में कुछ बदलाव देखते हैं... ?
5. अपने आस–पास के वातावरण को समझते हुए उस पर कोई कहानी लिखिए।

1.14 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिंदु–

1.14.1 चर्चा के लिए बिंदु –

1.14.2 स्पष्टीकरण के बिंदु

1.15 बोध प्रश्न

1. भाग्यरेखा कहानी है–
   - अ– अमरकान्त
   - ब– भीष्म साहनी
   - स–निर्मल वर्मा
   - द– मार्कण्डेय
2. चीफ को माँ के हाथों की.....पसंद आई
   - अ– डलिया
   - ब– सूप
   - स– फुलकारी
   - द– चूँड़ियाँ
3. भीष्म साहनी का लेखन प्रभावित है–
   - अ– निराला
   - ब– राजी सेठ
   - स– राजेन्द्र यादव
   - द– प्रेमचंद

4. 'चूडियाँ कहाँ से लाऊँ बेटा! सब जेवर तुम्हारी पढ़ाई में बिक गया।' उक्त कथन है–

अ– शामनाथ की माँ

ब– सिद्धेश्वरी

स– जग्गो

द– जालपा

5. 'इंटरव्यूह' कहानी के लेखक हैं–

अ– अमरकांत

ब– सुदर्शन

स– यशपाल

द– कमलेश्वर

6. सिद्धेश्वरी के बीमार बेटे का नाम है–

अ– राकेश

ब– विनोद

स– प्रमोद

द– कार्तिक

7. मुंशी चंद्रिका प्रसाद क्लर्क थे–

अ– मकान किराया नियंत्रण विभाग

ब– आयकर विभाग

स– राज्य परिवहन विभाग

द– आबकारी विभाग

1.17 कुछ उपयोगी पुस्तकें

---

1. अमरकांत कथा साहित्य – बहादुर सिंह परमार
2. कहानी की बात – अमरकांत
3. भीष्म साहनी –

इकाई 5

हिन्दी कथा साहित्य

इकाई की रूपरेखा–

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 कथाकार जयशंकर प्रसाद एवं कहानी पुरस्कार
1.4 कहानीकार जयशंकर प्रसाद का व्यक्तित्व एवं कृतित्व
1.5 कहानी पुरस्कार की समीक्षा
  1.5.1 कथानक के आधार पर –
  1.5.2 कथोपकथन के आधार पर –
  1.5.3 चरित्र–चित्रण के आधार पर –
  1.5.4 देशकाल और वातावरण के आधार पर –
  1.5.5 भाषा शैली के आधार पर –
  1.5.6 उद्देश्य के आधार पर –
  1.5.7 शीर्षक के आधार पर –
1.6 कहानी की व्याख्या
1.7 मधूलिका के चरित्र की विशेषता–
  1.7.1 अनिंद्य सुंदरी
  1.7.2 पवित्रता
  1.7.3 स्वाभिमानी
  1.7.4 देश–प्रेम से ओत–प्रोत
  1.7.4 आदर्श प्रेमिका
1.8 कमलेश्वर कहानीकार के रूप में –
1.9 कहानी राजा निरबंसिया की समीक्षा–
  1.8.1 कथानक के आधार पर –
  1.8.2 कथोपकथन के आधार पर –
  1.8.3 चरित्र–चित्रण के आधार पर –
  1.8.4 देशकाल और वातावरण के आधार पर –
  1.8.5 भाषा शैली के आधार पर –
  1.8.6 उद्देश्य के आधार पर –
  1.8.7 शीर्षक के आधार पर –
1.10 कहानी की व्याख्या–

1.11 यशपाल कानीकार के रूप में–

1.12 कहानी परदा की समीक्षा

1.12.1 कथानक के आधार पर –

1.12.2 कथोपकथन के आधार पर –

1.12.3 चरित्र–चित्रण के आधार पर –

1.12.4 देशकाल और वातावरण के आधार पर –

1.12.5 भाषा शैली के आधार पर –

1.12.6 उद्देश्य के आधार पर –

1.12.7 शीर्षक के आधार पर –

1.13 कहानी में निहित सामाजिक सत्य

1.14 कहानी सामाजिक रूढ़ियों पर प्रहार

1.15 कहानी की व्याख्या

1.16 इकाई सारांश

1.17 अपनी प्रगति जांचिए

1.18 नियत कार्य/गतिविधि

1.19 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

1.20. 1 चर्चा के लिए बिंदु

1.21. 2 स्पष्टीकरण के बिंदु

1.22 बोध प्रश्न

1.23 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

वैश्वीकरण के दौर में हम यह कह सकते हैं कि आज पश्चिम में घटित कोई घटना कल पूर्व में भी प्रासंगिक होगी और देश को प्रभावित करेगी। इस तरह कहानी का क्षेत्र काफी व्यापक है। प्राचीन कहानी में जहाँ विषय वस्तु, पात्र, घटनाएं एवं वातावरण राजसी पृष्ठभूमि से होते थे आज वही आम जीवन के संत्रास , पलायन, घुटन के वातावरण को प्रस्तुत करती है जिसमें कहानी का मूल्य बोध परंपरा सपाट बयानी के साथ उभरा है। जयशंकर प्रसाद हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल की छायावादी विचारधारा के प्रमुख आधार स्तंभ के रूप में अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हैं। उन्होंने साहित्य की कई विधाओं में अपना योगदान दिया जैसे कविता, कहानी, नाटक आदि। उनके साहित्य की विशेषता के रूप में हम कह सकते है कि उनका अधिकांश लेखन ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को लेकर रहा है। फिर वह चाहे कहानी हो, नाटक हो अथवा काव्य। प्रस्तुत कहानी पुरस्कार भी ऐसी ही ऐतिहासिक परिवेश की कहानी है। वहीं संपूर्ण देश में अपनी आवाज का जादू चलाने वाले कमलेश्वर की कहानी राजानिरबंसिया एवं यशपाल की कहानी परदा भी समाज की रूढ़िगत परंपराओं के दुश्परिणामों से समाज को आगाह करता है। साथ ही उन कहानीकारों की कहानी कला से भी विद्याार्थियों को अवगत कराता है।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में तीन प्रमुख आधुनिक कहानीकारों की विविध संदर्भों की कहानी पाठ्य सामग्री के रूप में दी गई है जिसके अध्ययन के पश्चात विद्यार्थीगण प्राचीन ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से अवगत होने के साथ–साथ तात्कालीन समाज की रूढ़िगत परंपराओं में जकड़े समाज और उसके दुष्परिणामों से उन्हें अवगत कराता है। छात्र उन प्राचीन परंपराओं से सीख लेकर समाज में वांछित परिवर्तन की दिशा में सक्रिय होंगे।

जयशंकर प्रसाद की कहानीकला की विशेषता–

समग्र हिन्दी साहित्य में मानव भावनाओं को व्यक्त करने हेतु दृश्य और श्रव्य दो माध्यम सामने आते हैं जिनमें श्रव्य के अन्तर्गत पद्य और गद्य विधाएं आती है। प्राचीनकाल में गद्य की अपेक्षा पद्य का अधिक प्रचलन था। किन्तु वर्तमानयुग गद्य का युग है जिनमे कहानी एक प्रमुख विधा है कहानी की परंपरा दीर्घकालीन है जिसमें समय के अनुसार निरंतर परिवर्तन आता गया। किन्तु ढ़ांचागत प्रमुख तत्व आज भी वही है। हाँ! आधुनिक युग के विकास परिवर्तन ने जीवन मूल्य एवं घटित घटनाओं ने कहानी को नए विषय प्रदान किए । वैश्वीकरण के दौर में हम यह कह सकते हैं कि आज पश्चिम में घटित कोई घटना कल पूर्व में भी प्रासंगिक होगी देश को प्रभावित करेगी। इस तरह कहानी का क्षेत्र काफी व्यापक है। प्राचीन कहानी में जहाँ विषय वस्तु, पात्र, घटनाएं एवं वातावरण राजसी पृष्ठभूमि से होते थे आज वही जीवन के संत्रास , पलायन, घुटन के वातावरण को प्रस्तुत करती है जिसमें कहानी का मूल्य बोध परंपरा सपाट बयानी के साथ उभरा है।

कहानी वैशिष्ट्य के आधार पर उसके अनेक रूप देखने को मिलते हैं जिन कहानियों में व्यक्ति मात्र का चरित्र ही खूबी के साथ चित्रित होता है वह चरित्र प्रधान कहानी कहीं जाती है इसी प्रकार यदि कोई कहानी घटना के कारण प्रभावी बन पड़ती है वे कहानियाँ घटना प्रधान कहलाती है जिनमें कार्य प्रधान हो बाकी सब गौण वे कार्य प्रधान कहलाती है। वातावरण की दृष्टि से महत्वपूर्ण कहानी वातावरण प्रधान कहानी बन जाती है। यदि कहानी का उद्देश्य किसी प्रभाव की सृष्टि करता है तो वे प्रभावप्रधान कहानी होती है । शिष्ट और सभ्य हास्य को प्रस्तुत करने वाली कहानी हास्य प्रधान कहानी कहलाएगी। इतिहास की घटनाओं पर आधारित ऐतिहासिक व प्रतीकों पर आधारित कहानी प्रतीकवादी कहलाती है। मनुष्य के प्रकृत जीवन को चित्रित करने वाली प्रकृतिवादी कहानी कहलाएगी। आज जहाँ रेडियो में प्रयुक्त कहानी अधिक प्रचलित है वे रेडियो कहानी मानी जाती है।

प्रत्येक दौर में लेखकों ने समाज की तात्कालीन अवस्थाओं को कहानी में प्रस्तुत किया है स्वभावतः वे आदर्श समाज की रचना को महत्व देते थे अतः वे आदर्शात्कम और भावात्मक कहानियाँ लिखने में सक्षम हुए। प्रसाद उनमें से एक हैं जिन्होंने तत्कालीन कहानियों में सक्षम हुए। प्रसाद उनमें से एक हैं जिन्होंने तत्कालीन कहानियों में मानव हृदय की यथार्थ अनुभूति के साथ–साथ समाज की दरिद्रता, गरीब जनता के प्रति सहानुभूति को कहानियों में व्यक्त किया इतना ही नहीं वे अपने चरित्र के गंभीर पठन एवं मनन के प्रति भी चिंतन ग्रस्त रहे। यही

कारण था कि उनकी कहानियाँ मौलिकता के अधिक निकट थी। प्रसादजी ने विशेषकर ऐतिहासिक स्तर पर कहानियों को नया आकार दिया। उनकी कुछ कहानियाँ प्रतीक मूलक कुछ वातावरण प्रधान तो कुछ चरित्र विश्लेषण करने वाली थी। प्रसादजी की कहानियाँ हिन्दी साहित्य भंडार की स्थायी और अमूल्य निधि के रूप में मानी जाती है जो युगों–युगों तक मानव समाज को प्रेरणा देती रहेगी। उनकी कहानियों मे ंजीवन शक्ति का सार तत्व निरूपित होता है। उनके पात्र मानो जीवन जगत के पात्र होते है तो मानवीय भावनाओं से ओतप्रोत होते हैं। उन्होंने अपनी कहानियों के माध्यम से सदैव अतीत के गौरवमय चित्र उपस्थित करके समाज को प्रेरणा प्रदान करते हैं।

भाषा– भाषा की दृष्टि से प्रसादजी के नाटकों की अपनी विशेषताएं हैं, उन्होंने सर्वत्र खड़ी बोली का प्रयोग किया है जो संस्कृति की तत्सम शब्दावली किन्तु वे भावानुकूल शब्दों के लिए उन्हें सोचने की आवश्यकता नहीं पड़ती। उनकी भाषा विचारों का अनुगमन करती है उनके शब्द भंडार अत्यन्त विस्तृत गहन और गंभीर है, उनकी भाषा में उनके शब्द भावों के सच्चे प्रतीक होते हैं जो वाक्यों में नगीनों की भांति जड़े होते हैं भाषा में मुहावरे का अभाव है उनकी भाषा में विषय विचार और भाव के अनुकूल उनकी भाषा में उतार चढ़ाव पाया जाता है। उनकी भाषा और रस योजना में पूर्ण सामंजस्य है।

इसके अतिरिक्त उनकी भाषा में स्वाभाविक संगीत अद्‌भुत, उन्माद, तात्कालीनता व मस्ती है, जो श्रोताओं को बरबस अपनी ओर आकर्षित करती है इससे भाषा सभी को अपनी ओर आकृष्ट करती है किल्ष्टता का अनुभव नहीं होता। प्रसादजी की शैली अत्यन्त ठोस, स्पष्ट और परिष्कृत है छोटे –छोटे वाक्यों में गंभीर भाव की उत्पत्ति उनकी अपनी विशेषता है। शब्दों के माध्यम से परिस्थितियों का आभास कराने में उनके शब्द बेजोड हैं उनके संवाद की भाषा सरल वेगमय और आकर्षक है।

कहीं उनकी शैली इतनी सरस, चुटीली और प्रवाहपूर्ण हो जाता है कि श्रोताओं को मंत्र मुग्ध कर रसोद्रेक में सहायक है, उनकी शैलियों में उपमाओं का अधिक प्रयोग होने से गद्य भ काव्य सा लगता है। कहीं–कहीं चुटीले नाटकों में संवादों का आनंद पाठक लेते हैं उनकी कहानी हमारी अतीत की स्मृतियों को जगाते हैं हमें भूली हुई कहानियों की याद दिलाते हैं जो आर्य संस्कृति के प्रति आस्था उत्पन्न करती है हमें राष्ट्रीयता का पाठ पढ़ाती है।

हिन्दी साहित्य की आधुनिक काल की छायावाद विचारधारा के प्रमुख स्तंभकार के रूप में जयशंकरप्रसाद हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में अवतरित होते हैं। 1890 में सूँघनी साहू नामक प्रतिष्ठित परिवार में जन्में प्रसादजी आठवीं तक शिक्षा प्राप्तकर, व्यवसाय में जुट गए मगर स्वाध्याय निरंतर चलता रहा। यही कारण है कि उन्होंने हिन्दी के साथ–साथ संस्कृत, पालि, अँग्रेजी और उर्दू साहित्य का ज्ञान प्राप्त किया। दर्शनशास्त्र, इतिहास व पुरातत्व में भी आपकी गहरी रूचि थी। अतः प्रसाद स्कूली एवं महाविद्यालयीन जीवन से दूर रहकर भी अपने ज्ञान का बहुमुखी विकास करते रहे।

संघर्ष से प्रसादजी के जीवन का गहरा नाता रहा। पहले माता–पिता फिर पत्नी का स्वर्गवास हुआ किन्तु उन्होंने कहीं भी अपने आपको बिखरने नहीं दिया। सदैव भारतीय संस्कृति एवं आदर्शवाद से जुड़ कर साहित्य साधना करते रहे। उन्होंने साहित्य की कई विधाओं जैसे– निबंध, कहानी, नाटक, उपन्यास एवं कविता के क्षेत्र में अपना अपूर्व योगदान प्रदान किया उनके द्वारा रख्ति साहित्य हैं–

1. निबंध– काव्यकला तथा अन्य निबंध

2. कहानी– छाया, प्रतिघ्वनि, आकाशदीप, आँधी और इंद्रजाल संग्रह

3. नाटक– अजातशत्रु, स्कंधगुप्त, चंद्रगुप्त, विशाख, ध्रुवस्वामिनी, जनमेजय का नागयज्ञ, कामता

और एक घूंट (एकांकी)

4. उपन्यास– तितली, इरावती और कंकाल

5. काव्य– झरना, प्रेमपथिक, लहर, महाराणा का महत्व, आँसू, कामायनी

प्रसादजी का संपूर्ण साहित्य भारतीय संस्कृति और इतिहास का प्रतिनिधित्व करता है चाहे कहानी हो, कविता , नाटक या उपन्यास उसमें परिवेश की निहित समस्याओं का समावेश है तो वहीं उन समस्याओं का मनोविज्ञानिक व बुद्धिवाद के प्रति समाधात्मक दृष्टिकोण भी समाहित हैं। उनकी कहानियों में भावुकता विचारशीलता एवं कल्पना की मनोरमता का अनुपम संग्रह है। विशेषकर प्रसाद की कहानियों में आपने युग को सजीव करने की सामर्थ्य छै उनकी कहानियों में मधुआ, गुण्डा मधुलिका और बिसाणी जैसे पात्रों में आदर्श और यर्थाथ का जो सजीव चित्रण हुआ है वह अन्यंत्र दुर्लभ है कहानी चित्र मंदिर' परंपराओं से हटकर है लेखक ने चित्रकार की रचनाओं को पाठकों के समक्ष लाने का प्रयत्न किया है जो सबसे बड़ा है प्रागैतिहासिक वातावरण के निर्माण में प्रसाद अत्यन्त सफल हुए है। नारी हृदय की सीमाओं और वेदनाओं को सूक्ष्म स्तर पर प्रस्तुत किया है। चित्र मंदिर में नारी मनोविज्ञान का जो सजीव चित्र उन्होंने प्रस्तुत किया है वह देखते ही बनता है यथा–

''नारी जैसे– सपना देखकर उठ बैठी प्रभात हो रहा था उसकी आँखों में मधुर स्वप्न की मस्ती भरी थी। नदी का जल धीरे–धीरे बह रहा था। पूर्व में लाली छिटक रही थी मलयवात से बिखरे हुए केश पाश को युवती ने पीछे हटाया हिरनों का झुंड फिर दिखाई पड़ा उसका हृदय समवेदनशील हो रहा था। + + + + नर की पाशव प्रवृत्ति जग पड़ी। वह अब भी संध्या की घटना को भूल न सका था। उसने शावक छीन लेना चाहा। सहसा नारी में अद्‌भुत परिवर्तन हुआ शावक को गोद में चिपकाये जिधर हिरन गए थे उसी ओर वह भी दौडी। नर चकित सा खड़ा रह गया।''

प्रसादजी नारी मन के कुशल चितेरे हैं। नारी के आदर्श स्वरूप को उन्होंने अपनी कहानियों बहुत ही कुशलता से उभारा है। पुरस्कार कहानी की नायिका मधूलिका इसका प्रतिनिधित्व करती है। राजा द्वारा उसकी भूमि उत्सव हेतु चुने जाने पर वह अपनी भूमि तो राजा को दे देती है किन्तु एवज में मिले पुरस्कार को स्वीकार नहीं करती। खेत जोतते समय मधुलिका के सौदर्य का जो वर्णन प्रसादजी करते हैं उससे नारी क`प्रति उनकी उजली दृष्टि स्पष्ट दिखाई देती है। देखिए कहानी का एक छोटा सा रूपक–

''बीजों का थाल लिए कुमारी मधुलिका महाराज के साथ थी। बीज बोते हुए महाराज जब हाथ बढ़ाते, तब मधूलिका उनके सामने थाल कर देती। यह खेत मधूलिका का था, जो इस साल महाराज की खेती के लिए चुना गया था। इसलिए बीज देने का सम्मान मधूलिका ही को

मिला। वह कुमारी थी , सुदरी थी। कौशेयवसन उसके शरीर पर इधर–उधर लहराता हुआ स्वयं शोभित हो रहा था। वह कभी उसे सम्हालती और कभी अपने रूखे अलकों को । कृषक बालिका के शुर्भ भाल पर श्रमकणों की भी कमी न थी, वे सब बरौनियों में गुँथे जा रहे थे। सम्मान और लज्जा उसके अधरों पर मंद मुस्कुराहट के साथ गिहर उठते किन्तु महाराज को बीज देने में उसने शिथिलता नहीं की। सब लोग महाराज का हल चलाना देख रहे थे–विस्मय से कौतुहल से। और अरूण देख रहा था कृषक कुमारी मधूलिका को। अहा! कितना भोला सौंदर्य कितनी सरल चितवन!''

प्रसादजी को न केवल नारी बल्कि मानव मन के कुशल चितेरे कहा जा सकता है। कहानी छोटा जादूगर में एक बालक के भीतर छिपे स्वाभिमान, आत्मगौरव एवं दायित्व निर्वाह को प्रसादजी ने जिस संजीदगी से से पाठकों के समक्ष रहा है। वह देखते ही बनता है। बालक स्वयं की पहचान अपने काम से करना चाहता है इसलिए स्वयं को छोटा जादूगर कहलाना पसंद करता है। कहानीकार जब उससे पूछते हैं–

''तुम्हारे और कौन है.... ?''

''माँ और बाबूजी।''

''उन्होंने तुम्हें यहाँ आने से मना नहीं किया.. ?''

''बाबूजी जेल में हैं ।''

''क्यों .. ?''

''देश के लिए।''– वह गर्व से बोला।

''और तुम्हारी माँ''

''वह बीमार है''

''और तुम तमाशा देख रहे हो।''

उसके मुँह पर तिरस्कार की हँसी फूट पड़ी। उसने कहा–''तमाशा देखने नहीं , दिखाने निकला हूँ।'' कुछ पैसे ले जाऊँगा, तो माँ को पथ्य दूँगा।

''मुझे शरबत न पिलाकर आपने मेरा खले देखकर मुझे कुछ दे दिया होता तो मुझे अधिक प्रसन्नता होती।''

''मैं आश्चर्य से उस तेरह–चौदह वर्ष के लड़के को देखने लगा।''

''हाँ, मैं सच कीता हूँ बाबूजी! माँ जी बीमार है इसलिए मैं नहीं गया।''

''कहाँ,, ?''

''जेल में ! जब कुछ लोग खेल तमाशा देखते ही हैं तो मैं क्यों न दिखाकर माँ की दवा करूँ और अपना पेट भरूँ।''

एक छोटा सा बालक खेलने की उम्र में पिता की अनुपस्थिति में बीमार माँ की देखभाल करने वह जीवन की व्यवस्थाओं को जुटाने हेतु लोगों के बीच तमाशबीन बनकर उनका मनोरेजन करना, चेहरे पर मुस्कान का भाव रखना आदि ये सब एक बच्चे के लिए कितना दुश्कर है

किन्तु प्रसादजी मे ंवह क्षमता है कि वक अपने पात्र से वह सब करवाने की क्षमता रखते हैं। दरअसल अपनी कहानियों में प्रसाद स्वयं अपने पात्र के माध्यम से अपने विचारों और भावों को प्रस्तुत करते हैं। उनका यह प्रस्तुतीकरण ही उनकी कहानियों को श्रेष्ठ कहानियों की श्रेणी में रखती है। प्रसाद पर शैव दर्शन का प्रभाव है यही कारण है उनकी कृतियाँ आनंदवाद औश्र नियतिवाद को आधार बनाकर चलती है। दूसरे प्रसाद प्रेमचंद क ेसमकालीन ही नहीं उनके अनुपूरक हैं यही कारण है कि उनकी कहानियाँ विचार एवं भाव काफी मात्रा में प्रेमचंद के समर्थक हैं हम सभी जानते है। कि प्रसादजी कवि, नाटककार के साथ–साथ कहानीकार भी है यद्यपि उनका कवि व्यक्तित्व ही अधिक मुखर रहा है। फिर भी उनकी कहानियों में उसने कहा था' की सी बोझिलता नहीं है वे कहानी की अपेक्षा विषय वस्तु पर अधिक बल देते हैं। यही कारण है कि उनकी कहानी कालबद्ध न होकर कालजयी होती है वे अतीत को सजीव करने की चिंता में घटना सूच को शीघ्रता से नही बढ़ाते चलते बल्कि पाठक को अपनी कथा में रमाते चलते हैं जिसके लिए उनकी शैली में पर्याप्त अलंकारिकता है सांस्कृतिक व भावनात्मक लेखन की दृष्टि से प्रसाद की कहानियाँ अनुपम है वे व्यापक परिवेश में नूतन आयामों को स्पर्श करती है । उनकी कहानियों में सोद्देश्यता एवं सामाजिक उत्तरदायित्व निहित होता है एक जागरूक कलाकार होने के नाते समकालीन स्थितियों के प्रति उनका चिंतन रहता है।

dgkuh rRoks ds vk/kkj ij iqjLdkj dgkuh dh leh{kk

जयशंकर प्रसाद हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल की छायावादी विचारधारा के प्रमुख आधार स्तंभ के रूप में अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हैं। उन्होंने साहित्य की कई विधाओं में अपना योगदान दिया जैसे कविता, कहानी, नाटक आदि। उनके साहित्य की विशेषता के रूप में हम कह सकते है कि उनका अधिकांश लेखन ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को लेकर रहा है। फिर वह चाहे कहानी हो, नाटक हो अथवा काव्य। प्रस्तुत कहानी पुरस्कार भी ऐसी ही ऐतिहासिक परिवेश की कहानी है। कहानी तत्वों के आधार पर हम पुरस्कार कहानी की निम्न बिन्दुओं पर समीक्षा करेंगे।

कथावस्तुः– पुरस्कार एक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की कहानी है। जिसका संबंध कौशल राज्य से है। प्राचीनकाल में यह प्रथा थी कि राज्य की खुशहाली अन्न धन की बहाली के लिए राजा स्वयं किसी खेत में जाकर हल जोतता था। ऐसी मान्यता थी कि जहाँ यह प्रथा होती है उस राज्य में कभी अन्न, जल और धन की कमी नहीं होती हैं। ऐसी ही प्रथा कौशल राज्य में थी कि राजा किसी भूमि के एक हिस्से का चयन करता है और वहाँ हल चलाता है। जिस पर राजा का अधिकार हो जाता है, जिसके एवज में राजा भूमिपति को उसकी भूमि के मूल्य से कई गुना अधिक राशि पुरस्कार स्वरूप प्रदान करता है। वह व्यक्ति वर्ष भर उस खेत की देखभाल करता है। ऐसे ही एक समय मधूलिका की भूमि राजा के हल के लिए चुनी जाती है। मधूलिका एक शहीद वीर सिंहमित्र की पुत्री है और कहानी की नायिका भी है। मधूलिका पुरस्कार स्वरूप मिली राशि को राजा के ऊपर न्यौछावर कर देती है। पूछने पर वह कहती है कि यह उसके बाप दादा की जमीन है जिसका मूल्य आंका नहीं जा सकता।

राजकुमार अरुण जो मगध के राजकुमार हैं मधूलिका के इस भाव पर मुग्ध हो जाता है। एक बार तो मधूलिका उसके निवेदन को ठुकरा देती है किन्तु कालांतर में दोनों में प्रेम हो जाता है। अरुण के कहने पर मधूलिका कौशल नरेश से दुर्ग के दक्षिण वाले नाले के पास की

भूमि पुरस्कार स्वरूप मांग लेती है। अरुण षडयंत्र कर श्रावस्ती के दुर्ग पर अधिकार पाना चाहता है। सारी व्यवस्थाएं बन चुकी है किन्तु उचित अवसर पर मधूलिका की अर्न्तात्मा उसे कचोटने लगती है तथा इस षडयंत्र में शामिल होने पर उसका आत्मगौरव उसे कचोटने लगता है। देशभक्ति का भाव जागृत होते ही मधूलिका कौशल नरेश को इस षडयंत्र के बारे में बता देती है। परिणामतः अरुण पकड़ा जाता है, उसे मृत्युदंड मिलता है। अरुण के मन में मधूलिका के प्रति नफरत का भाव पैदा हो जाता है।

वहीं कौशल नरेश मधूलिका की राष्ट्रभक्ति से प्रसन्न होकर उसे पुरस्कार मांगने को कहते हैं। मधुलिका जो अरुण से सच्चा प्रेम करती थी उसके प्रेम में कहीं छल नहीं था बस राष्ट्रभक्ति का स्वर स्वप्रेम से कहीं ऊँचा था। अतः मधुलिका पुरस्कार स्वरूप स्वयं के लिए भी मृत्युदण्ड मांग लेती है।

समीक्षाः– भारतीय इतिहास गौरवशाली परंपरा से भरा पड़ा है। जयशंकर प्रसाद ने ऐसे ही इतिहास से पाठकों को अवगत कराया है। प्रसाद का साहित्य आदर्शवादी के साथहै वे मानव मन की कमजोरियों को दर्शाते तो हैं साथ ही उन कमजोरियों को पर नियंत्रण कर उच्च चरित्र के रूप में प्रतिष्ठित भी करते हैं। मधुलिका ऐसी ही पात्र है जो प्रेम में पड़कर कुछ पल के लिए रास्ते से भटक जाती है किन्तु जल्द ही उसकी चेतना उसे सही राह पर ले आती है और अपने राष्ट्र की रक्षा कर वह अपने चरित्र को उच्चता के शिखर पर पहुँचा देती है।

कहानीकार ने एक अच्छे उद्देश्य को लेकर कथानक की रचना की है जिससे उसके पात्रों ने कथानक को सफल बनाने में अपना भरपूर योगदान दिया है। इस दृष्टि से पुरस्कार कहानी का कथानक समकालीन दौर में भी अपनी उपादेयता सिद्ध करता है।

2. **कथानकः–** जयशंकर प्रसाद एक संस्कृतनिष्ठ कवि हैं उनकी भाषा में संस्कृत भाषा का प्रभाव स्पष्ट नजर आता है यही प्रभाव उनके द्वारा रचित संवादों में भी देखने को मिलता है। यथा–'देव! यह मेरे पितृ–पितामहों की भूमि है। इसे बेचना अपराध है; इसलिए मूल्य स्वीकार करना मेरे सामर्थ्य के बाहर है।' प्रस्तुत संवाद में एक राजसी मर्यादा का पुट देखने को मिलता है। वहीं अपनी भूमि राजा के अधीन हो जाने पर मधुलिका का मार्मिक कथन देखिए–

'राजकुमार ! मैं कृषक बालिका हूँ। आप नंदनबिहारी और मैं पृथ्वी पर परिश्रम करके जीने वाली। आज मेरी स्नेह की भूमि पर से मेरा अधिकार छीन लिया गया है। मैं दुःख से विकल हूँ ; मेरा उपहास न करो।'

कहानीकार ने प्रत्येक प्रसंग के अनुरूप संवादों की सठीक रचना की है। यथा–निर्वासित कुमार अरुण का याचना भरा स्वर –'मैं मगध का विद्रोही निर्वासित, कौशल में जीविका खोजने आया हूँ।'

वहीं अरुण अपनी प्रेयसी के लिए यह साहसिक कथन कहता है– 'तुम्हारी इच्छा हो तो प्राणों से पण लगाकर मैं तुम्हे इस कौशल सिंहासन पर बैठा हूँ। मधूलिके! अरुण के खड्ग का आतंक देखोगी ?'

समीक्षाः– अर्थात प्रस्तुत कहानी में कहानीकार ने विभिन्न प्रसंगों के अनुरूप कथानक की संरचना की है। ये सभी कथानक भावों के सहचर बन कहानी को प्रभावशाली बनाते हैं। चाहे वह राजसी परिवेश के लिए कहे संवाद हो या राजकुमार अरुण और मधूलिका के प्रणय अवसर

पर कहे वाक्य हों या फिर मधूलिका के द्वारा स्वाभिमान स्वरूप कहे संवाद हों। सभी अपने पूर्णतः असरकारी हैं।

अतः कहानी पुरस्कार संवादों की दृष्टि से एक उत्कृष्ट रचना है।

3. चरित्र चित्रणः– पात्र दरअसल कुछ ओर नहीं लेखक द्वारा रचित एक काल्पनिक संरचना होती है जिसके माध्यम से लेखक अपने भाव व्यक्त करता है। प्रस्तुत कहानी चूँकि ऐतिहासिक परिवेश से ली गया प्रसंग है। जिसमें मधूलिका जो इस कहानी की नायिका है संपूर्ण कहानी उसी को केन्द्र में रखकर रची गई है। मधूलिका रूपगर्विता होने के साथ–साथ स्वाभिमानी भी है। देशप्रेम की भावना उसे विरासत में मिली है। वह एक आदर्श नारी हैं। जहाँ के प्रति उसकी निष्ठा सच्ची है वहीं राजकुमार अरुण के प्रति उसकी प्यार भी उतना ही सच्चा है। एक बार अरुण के बहकाने में आकर वह राष्ट्रद्रोह की अपराधिनी बन जाती है किन्तु शीघ्र ही उसे अपनी गलती का एहसास हो जाता है और वह कौशल नरेश को सही स्थिति से अवगत करा स्वयं को इस अपराध से बचा लेती है किन्तु अनजाने ही वह अरुण की दोषी हो जाती है। अरुण उसके प्रेम को संदेह की दृष्टि से देखता है। वहाँ भी मधूलिका अरुण को मृत्युदंड मिलने पर स्वयं के लिए भी पुरस्कार स्वरूप मृत्युदंड मांग लेती है। इस प्रकार मधूलिका का चरित्र कहानी में अत्यन्त सुदृढ़ बन पड़ा है।

दूसरा पात्र है मगध का राजकुमार अरुण जो मगध से निर्वासित होने पर षडयंत्र से श्रावस्ती के दुर्ग पर अधिकार कर लेना चाहता है किन्तु अपनी योजना कामयाब न होने पर मृत्युदंड का भागी बनता है।

कहानी का तीसरा पात्र है कौशल नरेश जो राज्य की खुशहाली के लिए प्रत्येक वर्ष एक खेत स्वयं जोतते है । इस दृष्टि से वह एक प्रजापालक के रूप में अपना स्थान बनाते है।

समीक्षाः– कहानी के पात्र जितना अधिक चरित्र के निकट होंगे कहानी उतनी ही प्रभावशाली होगी। इसमें संदेह नहीं कि जयशंकर प्रसाद ने पात्रों को चरित्र में बड़ी ही कुशलता से ढाला है। परिणामस्वरूप ये पात्र कहानी को सजीवता प्रदान करने में सफल रहे हैं। पात्रों की दृष्टि से कहानी सफल है।

4. भाषा–शैलीः– भाषा लेखक के विचारों की संवाहिका होती है। लेखक अपने भावों विचारों को भाषा के माध्यम से कहानी में प्रस्तुत करता है। इसे प्रस्तुत करने की प्रत्येक लेखक की अपनी एक शैली होती है, अपना तरीका होता है। प्रसाद जी की भाषा शुद्ध हिन्दी एवं खड़ी बोली से जुड़ी हुई है जिसमें हमें स्थान–स्थान पर संस्कृत का प्रभाव भी देखने को मिलता है। यही कारण है कि उनकी भाषा में हमें तत्सम शब्दों का प्रयोग देखने को मिलता है। इसके साथ ही वे लोकोक्ति, मुहावरे, शब्द शक्तियों को भी अपनी कहानियों में समुचित स्थान देते हैं। प्रसाद जी की शैली में भावात्मकता, चित्रात्मकता एवं विवरणात्मकता का स्वरूप देखने को मिलता है।

समीक्षाः– प्रसाद जी एक सिद्धहस्त कहानीकार एवं नाटककार हैं। उनकी कहानियाँ उनकी शैली को स्वयं मुखरित करती हैं। ये सच है कि उनकी भाषा संस्कृत निष्ठ होने के कारण कुछ क्लिष्ठ अवश्य होती है जिसके संबंध में आलोचकों का कहना है कि ये उच्च एवं पढ़े लिखे वर्ग को संबोधित करती है। फिर भी हम कह सकते है कि प्रसाद की भाषा बौद्धिक श्रम अवश्य माँगती है किन्तु इससे उसकी प्रभावशीलता पर कहीं आँच नहीं आती।

5. देशकाल वातावरणः– कहानी कौशल राज्य के परिवेश को प्रस्तुत करता है लेखक ने कहानी के आरंभ में ही वातावरण की सुंदर सृष्टि की है। यथा–'आद्रा नक्षत्र,आकाश में काले–काले बादलों की घुमड़, जिसमें देय–दुन्दुभी का गंभीर घोष, प्रभात की हेम किरणों से अनुरंजित नन्ही–नन्ही बूँदों का एक झोंका स्वर्ण मल्लिका के समान बरस पड़ा। रथों, हाथियों और अश्वारोहियों की पंक्ति जम गई।' वहीं कौशल नरेश द्वारा खेत जोतने का दृश्य आँखों के समक्ष साकार हो उठता है जब कहानीकार कहते हैं 'बीजों का एक थाल लिए कुमारी मधूलिका महाराज के साथ थी। बीज बोते हुए महाराज जब हाथ बढाते तब मधूलिका उनके सामने थाल कर देती कौशेयवसन उसके शरीर पर इधर उधर लहराता हुआ स्वयं शोभित हो रहा था। वह कभी उसे सम्हालती और कभी रूखे अलकों को। कृषक बालिका के शुभ्र भाल पर श्रमकणोकं की भी कमी न थी, वे सब बरौनियों में गुँथे जा रहे थे।'

वहीं मधूलिका और राजकुमार अरुण के प्रेम प्रसंग के दौरान का वातावरण जहाँ ''शीतकाल की निस्तब्ध रजनी कुहरे से धुली हुई चाँदनी, हाड कँपा देने वाली समीर तब भी अरुण और मधूलिका दोनों पहाड़ी गह्वर के द्वार पर वट वृक्ष के नीचे बैठे हुए बातें कर रहे हैं।''

समीक्षाः– कहना न होगा कहानीकार ने प्रसंगों के अनुकूल वातावरण निर्माण का सफल समायोजन किया है। कहानी इतिहास की उस पृष्ठभूमि से पाठकों को अवगत कराती है, भाषा भी संस्कृतनिष्ठता एवं राजसी गरिमा को प्रतिष्ठित कर कहानी में वातावरण निर्माण को सफल बनाती है।

6. उद्देश्यः– उद्देश्य विहीन रचना का कोई अस्तित्व नहीं होता। फिर जयशंकर प्रसाद की रचनाएं तो इतिहास से विषय–वस्तु चुनकर लाती हैं। प्रस्तुत कहानी एक घटना प्रधान कहानी है। जिसमें लेखक का उद्देश्य इतिहास की राजसी प्रथाओं से पाठकों को अवगत कराने के साथ–साथ राजसी समरांगन में होने वाले षड़यंत्र एवं कहानी की नायिका मधूलिका के उज्ज्वल चरित्र को प्रतिष्ठित करना है। मनोरंजन कहानी का गौण उद्देश्य है।

समीक्षाः– कहानी अपने दोनो उद्देश्यों को पाठकों तक पहुँचाने में सफल रही है। जो मनोरंजन के साथ–साथ देशप्रेम की भावना, षडयंत्रों से सावधान एवं प्रचीन ऐतिहासिक परंपराओं का बोध पाठकों को कराती है।

7– शीर्षकः– 'पुरस्कार' जैसा कि कहानी का शीर्षक है अपने नाम को सार्थक करता है। मधूलिका के जीवन में दो बार बदलाव आते हैं प्रथम जब वह कौशल नरेश द्वारा दिये पुरस्कार को ठुकराती है और संकटमय जीवन जीती है। जहाँ उसे अपने प्रेम की प्रप्ति होती है किन्तु उसके षडयंत्र को कौशल नरेश तक पहुँचाकर एक बार पुनः पुरस्कार की हकदार बनती है किन्तु राज्य प्रेम से ओतप्रोत उसका मन अपने लिए पुरस्कार स्वरूप मृत्युदंड मांगकर अपने चरित्र को अविस्मरणीय बना लेती है।

समीक्षाः– शीर्षक की दृष्टि से कहानी अपने सभी आयामों को पूरा करती है।

---

1. आज मधूलिका उस बीते हुए क्षण को लौटा लेने के लिए विकल थी। दारिद्र्य की ठोकरों ने दासे व्यथित कर दिया है। मगध की प्रासाद माला के वैभव का काल्पनिक चित्र उन सूखे डंठलों के रन्ध्रों से नभ में बिजली के आलोक में नाचता हुआ दिखाई देने लगा। खिलवाड़ी शिशु जैसे श्रावण की संध्या में जुगनू को पकड़ने के लिए हाथ लपकाता है, वैसे ही मधूलिका मन ही मन कर रही थी। 'अभी वह निकल गया' वर्षा ने भीषण रूप धारण किया। गड़गड़ाहट बढ़ने लगी, ओले पड़ने की संभावना थी। मधूलिका अपनी जर्जर झोपड़ी के लिए काँप उठी।

शब्दार्थः– विकल = व्याकुल, व्यथित अधीर = अधैर्य (धीरज खोना)
प्रासाद माला = भवनों की कतार रन्ध्रों = छिद्रों
संध्या = शाम का समय

संदर्भः– प्रस्तुत पंक्तियाँ कहानी पुरस्कार से उद्धत की गई हैं जिसके कहानीकार छायावाद के प्रमुख स्तंभ, महान ऐतिहासिक नाटककार व 'आँसू' जैसे विरह काव्य के रचयिता श्री जयशंकर प्रसाद जी हैं।

प्रसंगः– जयशंकर प्रसाद मूलतः उन रचनाकारों में हैं जो अपनी कहानी एवं नाटकों के लिए ऐतिहासिक धरातल से विषय वस्तु उठाते हैं। उनके पात्र भी उच्च वर्ग के होते हैं। प्रस्तुत कहानी भी कौशल साम्राज्य की कथा को प्रस्तुत करता है जिसकी नायिका है मधूलिका जो सिंहमित्र की कन्या है। पिता के आदर्श जीवन को धारण करने वाली मधूलिका कौशल नरेश द्वारा अपनी भूमि से चौगुना दाम मिलने पर भी उसे ठुकरा देती है और एक छोटी झोंपड़ी बनाकर अभावग्रस्त जीवन जीती है। इस बीच उससे राजकुमार अरुण की मुलाकात होती है। मधूलिका अरुण के प्रणय निवेदन को भी ठुकरा देती है। किन्तु तीन वर्ष पश्चात मधूलिका उन खोए पलों को पाने हेतु व्याकुल है। प्रस्तुत पंक्तियों में कहानीकार ने इसी का वर्णन किया है।

व्याख्याः– मधूलिका ने पहले तो स्वयं ही कष्टों के जीवन को चुना किन्तु तीन वर्षों तक कष्टों की काली निशा सहने के बाद आज उसके हृदय में अजीव सी व्याकुलता है उसे रह–रहकर बीते क्षण स्मरण हो रहे है। जब उसे कौशल नरेश ने भूमि के एवज में कई स्वर्ण मुद्राएं दान में दी थी किन्तु मधूलिका ने अपने पिता–पितामह की भूमि को बेचना स्वीकार नहीं किया। जब राजकुमार अरुण ने उससे कहा कि–''मेरा हृदय तुम्हारी छवि का भक्त बन गया है, देवी '' तब मधूलिका ने अपरिचित सा भाव दिखा उसके निवेदन को यह कहकर ठुकरा दिया कि ''जाओ अपने मार्ग''। किन्तु तीन वर्षों में खाई दरिद्रता की ठोकरों से उसका मन अधीर हो रहा था। उसका धैर्य छूटता जा रहा था। वह मगध के ऊँचे–ऊँचे विशाल भवनों की कातरों को देखती फिर सूखे डंठलों से बनी अपनी झोंपड़ी को देखती जिसके छिद्रों से आकाश में चमकती बिजली की रोशनी नृत्य करती दिखाई देती है। ऐसा लगता है कि मानो कोई छोटा सा नादन बालक श्रावण की अंधियारी शाम में जुगनू (चमचमाते) को पकडने के लिए यहाँ–वहाँ लपक रहा हो। हाथ न आने पर 'अरे! निकल गया' कहकर मन को संतुष्ट कर लेता है। उसी प्रकार मधूलिका भी यही सोचती है अभी यह समय तो निकल गया, अब तो वर्षा का मौसम आने वाला है, बादल घिर आए हैं, आसमान में बिजली की गडगडाहट की ध्वनी सुनाई दे रही है, ओले गिरने की संभावना है। ऐसे में इस जर्जर झोंपड़ी में उसका निर्वाह कैसे हो सकेगा ?

विशेषः– प्रसाद ने नारी हृदय के रहस्य एवं महत्वाकांक्षायों की ओर संकेत किया है। कहानी में आदर्श और यथार्थ के बीच की टकराहट स्पष्ट रूप से व्यक्त किया है। भाषा में तत्सम शब्दों का प्रयोग है।

2 .पथ अंधकारमय था और मधूलिका का हृदय भी निविड़–तम से घिरा था। उसका मन सहसा विचलित हो उठा, मधुरता नष्ट हो गई। जितनी सुख–कल्पना थी वह जैसे अंधकार में विलीन होने लगी। वह भयभीत थी। पहला भय उसे अरूण के लिए उत्पन्न हुआ, यदि वह सफल न हुआ तो..? फिर सहसा सोचने लगी वह क्यों सफल हो...? श्रावस्ती दुर्ग एक विदेशी के अधिकार में क्यों चला जाए...? मगध का चिरशत्रु! ओह! उसकी विजय ! रास्ता भूल गई। कौशल नरेश ने क्या कहा था–'सिंहमित्र की कन्या' सिंहमित्र कौशल का रक्षक वीर, उसी की कन्या आज क्या करने जा रही है..? नहीं, नहीं, मधूलिका ! मधूलिका!! जैसे उसके पिता उस अंधकार मे ंपुकार रहे थे। वह पगली की तरह चिल्ला उठी। रास्ता भूल गई।

शब्दार्थः– तम = अंधकार चिरशत्रु = सदा का शत्रु

विलीन हो जाना = समा जाना विचलित = बैचेन

संदर्भः– प्रस्तुत पंक्यिाँ कहानी पुरस्कार से उद्धत की गई हैं जिसके कहानीकार छायावाद के प्रमुख स्तंभ, महान ऐतिहासिक नाटककार व 'आँसू' जैसे विरह काव्य के रचयिता श्री जयशंकर प्रसाद जी हैं।

प्रसंगः– प्रसाद के साहित्य में नारी हृदय के रहस्यों और मनोविज्ञान का कुशल चित्रण होता है। अपने साहित्य में चाहे वह कहानी हो या नाटक उन्होंने सदैव नारी के आदर्श पक्ष को ही अभिव्यक्ति दी है। प्रसाद की प्रस्तुत पंक्तियों में भी अपने पथ से विचलित हुई मधूलिका का अन्तर्मन अचानक उसे बैचेन करने लगता है।

व्याख्याः– वह सिंहमित्र की कन्या है अपने राज्य से खिलाफत कैसे कर सकती है। अचानक वह मन को दृढ़ कर एक पथ की ओर चल पड़ती है। लेखक ने सांकेतिक भाषा के माध्यम से यह स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि पथ अंधकारमय था, इसी तरह मधूलिका के हृदय में भी गहन अंधकार छाया हुआ था। उसका मन सहसा अस्थिर हो उठा, अरूण के साथ जीवन की जितनी सुखद कल्पना थी चेहरे का माधुर्य सभी निराशा के अंधकार में विलीन हो रहे थे। उसके भीतर अचानक द्वंद ने जन्म ले लिया। पहला भय के रूप में था अरुण को लेकर कि कहीं अरुण अपनी विजय यात्रा में असफल हुआ तो------अगले ही पल उसके भीतर देशभक्त पिता सिंहमित्र का लहू बोल पड़ा कि अरुण को विजयी नहीं होना चाहिए उसकी जीत से श्रावस्ती के किले पर किसी विदेशी का अधिकार हो जाएगा जो कि उचित नहीं है। इस प्रकार तो राजकुमार अरुण कौशल का शत्रु हुआ। 'ओह! शत्रु की विजय---? वह भी उसकी वजह से-----? कदापि नहीं ।'

उसे स्मरण आ रहा है उस दिन कौशल नरेश ने कितने गर्व के साथ उसका परिचय दिया था सिंहमित्र की कन्या। सिंहमित्र, कौशल का रक्षक वीर उसी की कन्या हैं ये। आज वह अपने पिता के नाम को कलंकित करने जा रही है। तभी उसे एहसास हुआ कि कहीं से उसके पिता की आत्मा उसे इस कृत्य से रोकने हेतु आवाज दे रही है 'नहीं ..... नहीं मधूलिका ऐसा मत करना'। प्रत्युत्तर में मधूलिका चैतन्य हो चिल्ला उठी, 'ऐसा नहीं होगा'। मैं कुछ क्षण को रास्ता भूल गई थी।

विशेषः– राष्ट्रप्रेम को दर्शाया है साथ ही नारी चरित्र के उज्ज्वल पक्ष को लक्षित किया है। भाषा संस्कृतनिष्ठ है।

3. शीतकाल की निस्तब्धता रजनी, कुहरे से धुली हुई चाँदनी, हाड़ कँपा देने वाला समीर, तो भी अरूण और मधूलिका दोनों पहाड़ी गहवर के द्वार पर वट–वृक्ष के नीचे बैठे हुए बातें कर रहे हैं। मधुलिका की वाणी में उत्साह था किन्तु अरूण जैसे अत्यन्त सावधान होकर बोलता।

शब्दार्थः– निस्तब्धता = सन्नाटा समीर = हवा

संदर्भः– प्रस्तुत पंक्यिाँ कहानी पुरस्कार से उद्धत की गई हैं जिसके कहानीकार छायावाद के प्रमुख स्तंभ, महान ऐतिहासिक नाटककार व 'आँसू' जैसे विरह काव्य के रचयिता श्री जयशंकर प्रसाद जी हैं।

प्रसंगः– भारत की परम्परा रही हैं 'अतिथि देवो भव' वहीं शरणगत की रक्षा और सहायता हमारी संस्कृति है मगध का राजकुमार अरूण जब स्वयं को असहाय समझ कृषक बालिका मधूलिका की शरण में आता है तो मधूलिका उसकी सहायता अपना दायित्व समझकर उसका निष्ठापूर्वक निर्वाह करती है। उस वक्त दोनों के बीच होने वाले संवाद को लेखक ने निम्न पंक्तियों के माध्यम से व्यक्त किया है।

व्याख्याः– जब दयनीय अवस्था में राजकुमार अरुण मधूलिका के समक्ष यह कहकर उपस्थित होता है कि उसे अपने नगर से बहिष्कृत कर दिया गया है और वह जीविका की तलाश में वहाँ आया है। तब मधूलिका को आश्चर्य मिश्रित हँसी आती है कि वह स्वयं में असहाय एक कृषक बालिका एक राजकुमार की सहायता कैसे कर सकती है ? किन्तु शरणागत की सहायता हमारी संस्कृति का निर्वाह अवश्य करेगी। शीतकाल की रात्रि का अवसर है, ठंड की वजह से वातावरण में एक अजीब सा सन्नाटा छाया है। आसमान में ठंड का कुहरा छाया हुआ है, हड्डियाँ कड़कड़ा देने वाली हवा चल रही है, फिर भी अरूण और मधूलिका दोनों पहाड़ की गहराई में विशाल वृक्ष के नीचे बैठे अपनी बातों में मसरूफ हैं उन्हें ठण्ड के मौसम का कोई असर नहीं। उल्टे दो युवा मन का उत्साह है। मधूलिका पुनः राजकुमार अरुण को पाकर उत्साहित है, अति आनन्द में है कारण उसके मन में राजकुमार के प्रति निश्छल प्रेम है वहीं राजकुमार अरुण हर बात सावधानी के साथ कहता है। उसके मन में कहीं कोई बात है जो उसे मधूलिका के समक्ष खुलकर बोलने से रोक रही है।

विशेषः– शरद ऋतु का वर्णन है। प्रेमी युगल पर मौसम का असर नहीं होता लेखक कहना चाहते हैं। तत्सम शब्दों का प्रयोग है

मधूलिका का चरित्र–चित्रण

पात्र परिचयः– मधूलिका कहानी की नायिका है, राष्ट्रप्रेम उसे विरासत में मिला है। उसके पिता कौशल के वीर सिपाही थे और राज्य की रक्षा हेतु स्वयं को समर्पित कर चुके थे। कहानी में मधुलिका एक आदर्श भारतीय नारी के रूप में पाठकों के समक्ष आती है। उसका खेत इस बार राष्ट्रीय उत्सव के लिए चुना गया है। वह खुशी से इस उत्सव में शामिल होती है किन्तु राजा के द्वारा दी गई पुरस्कार की राशी को स्वीकार नहीं करती और दूसरों के खेत में मेहनत कर कष्टसाध्य जीवन व्यतीत करती है। वह एकाकी कष्टमय जीवन से मुक्ति पाना चाहती है कि

उसके जीवन में राजकुमार अरुण का प्रवेश होता है। मधूलिका अरुण से प्रेम करने लगती है उसी प्रेमवश अरुण उसे कौशल नरेश से दक्षिणी भाग की भूमि माँगने को कहता है। मधूलिका उस षड़यंत्र से अनजान है किन्तु जब उसे पता चलता है कि अरुण उसके राज्य पर अधिकार करना चाहता है तब उसका राष्ट्रप्रेम जाग्रत हो उठता है। मगध का कौशल पर आक्रमण उसे सहन नहीं होता अतः वह अपना राष्ट्रधर्म निभाती है और कौशल नरेश को इस षडयंत्र से अवगत कराती है वहीं राजकुमार को दंड मिलने पर वह उसके साथ स्वयं भी मृत्युदंड माँगकर अपने सच्चे प्रेम का निर्वाह करती है।

मधूलिका के चरित्र को हम निम्न बिन्दुओं के आधार पर स्पष्ट कर सकते हैं–

1.**अनिंद्य सुंदरी** :– मधूलिका एक रूपगर्विता कृषक बालिका है। उसका सौंदर्य है उसका स्वाभिमान, चेहरे पर लज्जा का भाव , अधरों पर मुस्कान लिए जब वह कौशल नरेश के साथ खेतों में बीज बो रही है। मगध राजकुमार अरुण अपने रथ पर बैठे उसे मोहित भाव से देख रहे हैं– अनायास उनके मन में भाव आता है– 'अहा कितना भोला सौंदर्य। कितना सरल चितवन!'

वहीं जब मधूलिका वृक्ष के नीचे निंद्रा सुख ले रही थी राजकुमार स्वयं को रोक न सका बोला– 'मेरा हृदय तुम्हारी उस छवि का भक्त बन गया है, देवी!'

उपरोक्त पंक्तियाँ स्पष्ट करती है कि मधूलिका एक रूपवान स्त्री है। भारतीय नारी के गुण लज्जाशीलता, स्वाभिमान उसके आभूषण हैं जो उसके सौंदर्य को बढ़ाते हैं।

2. **पवित्रता**:– सौंदर्य की प्रतिमा होकर भी मधूलिका में शीलता का भाव है। अजनबी राजकुमार अरुण के प्रणय निवेदन पर वह अपनी प्रतिक्रिया इस प्रकार व्यक्त करती है– 'अपरिचित! क्षमा करो, जाओ अपने मार्ग' उसके इन शब्दों से निराश होकर अरुण को लौटना पड़ता है। यद्यपि मधूलिका उस समय बेहद तंगहाली का जीवन जी रही थी, अकेली थी उसे किसी सहारे की तलाश थी और अरुण के प्रणय निवेदन को स्वीकार कर वह अपनी सभी समस्याओं से मुक्ति पा सकती थी किन्तु यह मधूलिका की शीलता, पवित्रता ही थी जो उसे ऐसा करने से रोकती रही।

3. **स्वाभिमान नारी** :– मधूलिका अपने पिता–पितामह के मान सम्मान को बनाए रखना जानती है इसीलिए जब कौशल नरेश ने उसके खेत को राष्ट्रीय उत्सव में शामिल कर उसे पुरस्कार स्वरूप मुद्राएं देनी चाहीं, तो मधूलिका उन मुद्राओं को राजा के ऊपर न्यौछावर कर देती है कारण अपने पूर्वजों की भूमि का मूल्य लगाना उसे मंजूर नहीं। राजा द्वारा देखने पर वह निर्भिकता से किन्तु विनम्रता से यह उत्तर देती है कि– 'देव! यह मेरे पितृ–पितामहों की भूमि है इसे बेचना अपराध है। इसलिए मूल्य स्वीकार करना मेरे सामर्थ्य के बाहर है।'

उक्त कथन साबित करता है कि मधूलिका में आत्म सम्मान का भाव कूट–कूटकर भरा है किन्तु उसमें अहंकार नहीं, विनम्रता का भाव है।

4. **देशप्रेम से ओतप्रोत(बलिदान का भाव)**:– मधूलिका का परिचय आरंभ से ही त्याग एवं बलिदान की प्रतिमूर्ति के रूप में होता है। राजा द्वारा स्वर्ण मुद्राएं केवल इसीलिए लेने से इंकार करना कि यह भूमि उसके पूर्वजों की है। वहीं अभावग्रस्त जीवन से ऊबकर जब वह प्रेम के गलियारे में स्वच्छंद विचरण करना चाहती है और अरुण के रूप में उसे अच्छा प्रेमी भी मिल

जाता है किन्तु सिर्फ अरुण का देश विद्रोही होना उसे असह्य होता है उसका अन्तर्मन उसे धिक्कारता है और वह चिल्ला पड़ती है– ''बाँध लो मुझे बाँध लो! मेरी हत्या करो। मैने अपराध ही ऐसा किया है।'' और वह देश पर अपना प्यार न्यौछावर कर अपने देशप्रेमी होने का प्रमाण प्रस्तुत करती है और अरुण को बन्दी बनवा देती है। मधूलिका का देशप्रेम देख कौशल नरेश कहते है–'सिंहमित्र की कन्या! तुमने एक बार फिर कौशल का उपकार किया है।' मधूलिका का यह बलिदान उसके चरित्र की उत्कृष्टता के शिखर पर पहुँचाता है।

5. <u>आदर्श प्रेमिका</u>:– प्रसाद जी ने सदैव नारी के आदर्श स्वरूप को ही अपने साहित्य में उबारा है कारण वे मानते हैं कि नारी मानव जीवन के कल्याण की सहचरी है। अपनी पंक्ति में वे रचते हैं–'पीयूष स्त्रोत सी बहा करो तुम इस जीवन के समतल में।' प्रस्तुत कहानी में मधूलिका अरुण की प्रेयसी है पर वह अपने प्रियतम के गलत राह पर चलने और गलत इरादों को स्वीकार नहीं करती जबकि वह अरुण से प्रेम करती है। किन्तु देशद्रोह होने पर वह सेनापति को सारी सच्चाई बताकर अरुण को बंदी बनवा देती है। वहीं कौशल नरेश जब उसके इस कार्य की प्रशंसा करते हुए कहते है कि ''सिंहमित्र की कन्या! यह सूचना देकर तुमने पुरस्कार का काम किया है। मेरी निज की जितनी खेती है, मै सब तुझे देता हूँ।'' तब मधूलिका ने कहा–''मुझे कुछ न चाहिए।'' किन्तु जब कौशल नरेश नहीं माने और बोले–''नहीं मैं उसे अवश्य दूँगा। माँग ले।''तब मधूलिका कहती हैं– ''तो मुझे भी अरुण के साथ प्राणदंड मिले।''

इस तरह मधूलिका न केवल अपने प्रियतम को सही राह ही दिखाती है बल्कि ऐसे संघर्ष के दौर में भी उसके साथ बराबरी से खड़ी रहती है। यह मधूलिका के आदर्श प्रेमिका स्वरूप को प्रदर्शित करता है।

कमलेश्वर कहानीकार के रूप में

नई कहानी आंदोलन के अगुआ कथाकार, कई, सफल पत्र पत्रिकाओं के कमलेश्वर एक जागरूक संपादक, सजग साहित्यकार, देश भर को अपनी आवाज के जादू से मोहित करने वाले कमलेश्वर पहले स्क्रिप्ट लेखक के तौर पर भी जाने जाते थे, इसके अतिरिक्त उनकी पहचान दूरदर्शन के महानिदेशक के रूप में भी रही है। कमलेश्वर ने 1954 में 'विहान' पत्रिका का संपादन आरंभ किया और इसके बाद 'नई कहानियाँ', 'सारिका' कथायात्रा और गंगा पत्रिकाओं का सफल संपादन किया। वह हिन्दी समाचार पत्र 'दैनिक जागरण' और 'दैनिक भास्कर' से भी जुड़े रहे।

उनका जन्म उत्तर प्रदेश में मैनपुरी जिले में छह जनवरी 1931 को हुआ था। उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एम. ए. किया था। साहित्य के प्रति उनकी अभिरूचि के कारण ही वे कहानी के क्षेत्र में अपनी कला को अजमाने लगे। उन्होंने 'आँधी', 'रजनीगंधा', 'सारा आकाश', 'द बर्निंग ट्रेन', 'अमानुष', 'छोटी सी बात', 'मिस्टर नटवर लाल', 'सौतन', और 'राम बलराम' आदि फिल्मों की पटकथा लिखी थी।

कमलेश्वर के उपन्यास 'काली आँधी' पर गुलजार ने 'आँधी' फिल्म का निर्माण किया, जिसने दर्शकों को काफी मोहित किया और अनेक पुरस्कार जीते। इसके अलावा टीवी सीरियल 'चंद्रकांता', 'दर्पण' और 'एक कहानी' की पटकथा भी कमलेश्वर ने ही लिखी थी। उन्होंने कई वृत्तचित्रों और कार्यक्रमों का निर्देशन भी किया। कमलेश्वर की पहली कहानी 1948 में प्रकाशित हुई थी और 1957 में 'राजा निरबंसिया' के प्रकाशन के साथ ही वह रातों रात बड़े

कथाकार बन गए। उन्होंने तीन सौ से अधिक कहानियाँ लिखी हैं, जिनमें 'मांस का दरिया', 'नीली झील', 'तलाश', 'बयान', 'नागमणि', 'अपना एकांत', जिन्दा मुर्दे', कस्बे का आदमी', 'चार्ज पंचम की नाम' और 'स्मारक' प्रमुख हैं। कमलेश्वर ने करीब एक दर्जन उपन्यास भी लिखे, जिनमें 'कितने पाकिस्तान', 'एक और चंद्रकांता' 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ', 'डाक बंगला', 'तीसरा आदमी', 'लौटे हुए मुसाफिर', 'रेगिस्तान' और 'काली आँधी' प्रमुख हैं। बहुमुखी प्रतिभा के धनी कमलेश्वर ने 'अधूरी' आवाज', 'रेत पर लिखे नाम', 'हिंदोस्ताँ हमारा' नाटक संग्रह के अलावा चार बाल नाटक संग्रह भी लिखे हैं। आलोचना के क्षेत्र में उनकी 'नई कहानी की भूमिका' और 'मेरा पन्नाः समानांतर सोच' महत्वपूर्ण किताबें हैं। उनके यात्रा विवरण 'खडित यात्राएँ' और 'कश्मीर : रात के बाद' तथा संस्मरण 'जो मैंने जिया', 'यादों के चिराग' एवं 'जलती हुई नदी' शीर्षक से प्रकाशित हुए में कर्मलेश्वर का महत्पूर्ण योगदान रहा है।

कमलेश्वर बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे उन्होंने ने न सिर्फ कहानी के मोर्चे पर बल्कि वैचारिक स्तर पर भी खास कर धर्मनिरपेक्षता के मामले पर भी काफी काम किया। उनकी आवाज में जो खनक हमेशा समाई रहती थी, उनके लिखने में यह खनक और गमक के साथ उपस्थित होती थी। काली आंधी उपन्यास जब उन्होंने लिखा था तो काफी बवाल मचा था। बहुतेरे लोगों की राय थी कि यह इंदिरा गांधी पर आधारित उपन्यास है। किन्तु कमलेश्वर इसे स्वीकार नहीं करते। बाद में गुलजार ने इसी काली आंधी को लेकर आंधी नाम की फिल्म बनाई। जिसे इमरजेंसी में संजय गांधी का शिकार होना पड़ा था। कमलेश्वर जब सारिका में संपादक थे तब उन्होंने आलम शाह खान की एक कहानी 'किराए की कोख' छापी थी। जिसमें किराए की खोक देने वाली महिला हिंदू थी और जाहिर है कि जयपुर में आलम शाह खान पर और मुंबई में सारिका पर हिंदूवादी शक्तियों ने जैसे आक्रमण ही कर दिया था। कमलेश्वर ने इसका डट कर मुकाबला किया था। बाद के दिनों में तो सारिका में उनका संपदाकीय जो मेरा पन्ना नाम से छपता था, एक तरह से फास्सिट ताकतों और सांप्रदायिक शक्तियों के खिलाफ हथियार से ही कहीं ज्यादा काम करने लगा था। जनता सरकार के दिनों में मेरा पन्ना में उन्होंने लिखा था, 'यह देश किसी मोरारजी देसाई, किसी चौधरी चरण सिंह, किसी जगजीवन राम भर का नहीं हैं।–

सारिका का यह अंक टाइम्स ऑफ इण्डिया के मैनेजमेंट ने छप जाने के बावजूद वितरित नहीं होने दिया था और जला दिया था। इसी प्रसंग में कमलेशवर को सारिका से विदा भी होना पड़ा था। इतना ही नहीं तब सारिका भी मुंबई से दिल्ली आ गई थी। बाद में कमलेश्वर ने अपने संसाधनों से कथा–यात्रा नाम की एक पत्रिका निकाली। जिसमें यह संपादकीय फिर से छापा । कथा–यात्रा का जो तेवर था, अद्रत था। लेकिन दो–तीन अंकों के बाद ही इस पत्रिका को भी बंद होना पड़ा। फिर उन्होंने गंगा निकाली, दैनिक जागरण गए, दैनिक भास्कर गए। इससे पहले करंट में कॉलम लिखा और न्यायपालिका को वेश्या से भी गई गुजरी लिखने के आरोप में कंटेम्प्ट ऑफ कोर्ट भी झेला। लेकिन माफी नहीं मांगी। उन्हें चेतावनी दे कर छोड़ दिया गया।

कमलेश्वर की व्यावहारिकता की बात करें तों अपना बना लेना तो कोई कमलेश्वर से सीखे। बड़प्पन उनमें कूट–कूट कर भरा था। बाद के दिनों में तो वह फिर से मुंबई लौट गए और अंतिम समय में फिर दिल्ली आ गए थे। कमलेश्वर का सौभाग्य कहिए या दुर्भाग्य उन्होंने घनघोर विपन्नता भी देखी और समृद्धि से भरा आकाश भी। उन्होंने खुद ही कहीं लिखा है कि –'एक समय बेटी के लिए दूध की व्यवस्था करना भी कठिन हो गया था। और बाद के दिनों

में बात–बात पर लोग लाख–दस लाख पेशागी दे जाते थे।' मैं समझता हूं कि हिन्दी के लेखकों में कमलेश्वर और मनोहर श्याम जैसी संपन्नता विरले ही लेखकों नसीब हुई होगी ।

कमलेश्वर ने अपने संस्मरणों में कहीं लिखा है कि एक बार एक प्रोड्यूसर एक फिल्मी पार्टी में उन्हें मिला और जब उसे बताया गया कि वह कहानीकार हैं तो वह उन के पीछे पड़ गया और कहा कि मेरे लिए कहानी लिखो। कमलेश्वर को उसे ने एक महंगे होटल में एक स्वीट बुक करा कर बैठा दिया। और कहा कि यहीं रहो और यहीं लिखो। हफ्ता भर बीता तो वह आया और पूछा कि कहानी बनी? उन्होंने कहा नहीं। वह चला गया। हफ्ते भर बात फिर आया और पूछा कि कहानी बनी? तो उन्हों ने कहा नहीं। अंततः उस ने पूछा कि कहानी क्या लिखनी है तुम्हें मालूम भी है? कमलेश्वर बोले यही तो तय करना है। प्रोडयूसर बिदक गया। बोला छह–सात गाने तो होंगे ही। प्रोड्यूसर बोला, चलो सात रील हो गई। मार–पीट होगी या नहीं? कमलेशवर बोले, बिलकुल होगी।' 'चलो दो–तीन रील की मार–पीट हो गई। कुल कितने रील हो गई– दस रील। अब बोलो कास्टिंग होगी कि नहीं? कमलेश्वर बोले, 'होगी ही।' प्रोड्यूसर बोला, 'चलो दो रील कास्टिंग की तो बारह रील हो गई। और अब बची कितनी रील? दो रील तो तुम दो रील की कहानी पंद्रह दिन में नहीं लिख पाए? कैसे स्टोरी राइटर हो? कमलेश्वर ने फिल्मी दुनिया के ऐसे कई अजीबो–गरीब संस्मरण लिखे हैं।

मोहन राकेश, कमलेश्वर और राजेंद्र यादव की तिकड़ी काफी मशहूर रही है। लेकिन जितनी करीबी मोहन राकेश से पाई शायद किसी और से नहीं। हालांकि दुष्यंत कुमार और धर्मवीर भारती भी उनके खास दोस्तों में थे। लेकिन माहेन राकेश से उनकी दोस्ती की बात ही कुछ और थी। मोहन राकेश की चौथी पत्नी अनीता राकेश से जब उनका प्रेम प्रसंग चल रहा था और मोहन राकेश अकेले पड़ गए थे तो सारी लड़ाई और सारे विवाद में कमलेशवर ही उन के साथ थे। अनीता राकेश के मुंबई जाने के लिए दिल्ली एयरपोर्ट तक कमलेश्वर ही ले गए थे। मोहन राकेश की गजलों को भी कहानी की पत्रिका सारिका में छाप कर उन्हें अमर कर दिया। सारिका में दरअसल कमलेश्वर ने हिन्दी कहानीकारों की एक नहीं दो–दो पीढ़ियाँ तैयार की। राजा निरंबसिया कहानी चर्चा का शिखर छूने वाले कमलेश्वर 'कितने पाकिस्तान' उपन्यास के मार्फत साहित्य के आकाश पर छा गए। कितने पाकिस्तान ने उन को न सिर्फ साहित्य अकादमी पुरस्कार दिलवाया बल्कि एक साथ कई रिकार्ड बनाए। हिन्दी में छपा वह पहला उपन्यास है जिस के फटाफट बारह संस्करण छप गए। दुनिया की कोई बीस भाषाओं में इसका अनुवाद हुआ। एशिया महाद्वीप का जो दर्पण कितने पाकिस्तान प्रस्तुत करता है, वह न सिर्फ अदभुत है बल्कि विरल भी। कमलेश्वर की कई कहानियां, कई किस्से, कई संस्मरण बिलकुल आखों के सामने नाच–नाच जाते हैं। वह लोगों से खेलते भी बहुत थे। उन की इस कला का बखान अगर न किया जाए तो उन के बारे में बात शायद अधूरी रहेगी।

किस्से तो कई हैं लेकिन यहां एक ही किस्सा काफी है। इलाहाबाद कॉफी हाउस में उन्हों ने एक बार लेखक से कहा कि, 'भाई बधाई!' लेखक महोदय बोले, 'क्या हो गया?' कमलेश्वर जी ने कहा, 'अरे आप को पता नहीं कि आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य के इतिहास में आप की भी चर्चा की है?'' लेखक महोदय बोले, 'क्या कह रहे है? कमलेश्वर ने कहा, 'यकीन न हो तो किताब देख लीजिए।' लेखक महोदय ने बिना किताब देखे ही यह बात बहुतों को बता दी कि मेरा नाम आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य के इतिहास में लिखा है। लोग जब उन का मजाक उड़ाने लगे तो वह कमलेश्वर की तर्ज पर ही वह बोले,, 'यकीन हो तो किताब देख लीजिए।' लोग फिर भी उन का मजाक उड़ाने से नहीं रूके। और उन से बोले

आप खुद भी तो किताब देख लीजिए। लेखक महोदय ने आचार्य रामचंद्रद का हिन्दी साहित्य का इतिहास किताब खरीदी और कई बार उलट-पलट कर पढ़ गए। लेकिन उन्हें अपना नाम नहीं दिखा। वह सीधे कमलेश्वर के पास पहुंचे। और तमतमा कर उन के सामने हिंदी साहित्य का इतिहास किताब रख कर उन से पूछा कहां है इसमें मेरा नाम? कमलेश्वर मुसकुराए और किताब हाथ में ली, किताब की एक लाइन उन्हें पढ़ाई और कहा कि यह देखिए। और पढ़िए। लेखक महोदय ने फिर पढ़ा और कहा कि कहां मेरा नाम है? कमलेश्वर ने कहा यह ध्यान से देखिए कि जो आदि-आदि लिखा है, वह कौन है? अरे इस आदि-आदि में आप ही तो हैं। तो ऐसे चुहुलबाज भी थे कमलेश्वर जी।

राजा निरबंसिया कहानी की समीक्षा-

1. कथावस्तु - प्रस्तुत कहानी लोककथा पर आधारित है, जिसमें समाज की ऐसी गंभीर समस्या को चित्रित किया है, जो प्राचीनकाल में भी समाज में व्याप्त थी और आज भी व्याप्त है परिवेश बदला है किन्तु परिस्थितियाँ नहीं बदली, लोगों की सोच वही है जो प्राचीन काल में थी। हमारा समाज किसी पुरूष या स्त्री की पूर्णता उसके पिता एवं माता बनने पर ही मानता है। ये कैसा पैमाना हैं, जहां इंसान की सारी अच्छाईयां उसकी एक कमी के आगे हार जाती है। कहानी का पात्र जगपति ऐसा ही पात्र है एक पूर्ण पुरूष होते हुए वह समाज में सिर्फ इसलिए हीन भावना का शिकार है कि वह पिता नहीं बन सकता। अतः अपनी मान-प्रतिष्ठा के लिए वह अपनी पत्नी चंदा को उसकी इच्छा के विरूद्ध बच्चन सिंह से अनैतिक संबंध स्थापित करने हेतु बाध्य कर देता है।

जगपति बच्चन सिंह से आर्थिक सहायता प्राप्त करता रहता है इसलिए उसके बोझ तले दबा है वहीं उसकी पौरूषहीनता (नपुंसक) उसकी कमजोरी है। चंदा एक सतीत्व नारी है किन्तु उसकी मजबूरी है उसकी गरीबी, वह जानती है पति में कमजोरी है और अपने पति की इस कमजोरी को ढ़कने के लिए वह इस शर्त को भी मंजूर कर लेती हे। वही प्राचीन इतिहास में ऐसा ही एक नपुंसक राजा हो चुका है जिसने अपने पौरूष की प्रतिष्ठा को बचाए रखने के लिए पत्नी को दाव पर लगाया था किन्तु अंत में उसने लोक मर्यादा की परवाह न करते हुए रानी को अपना लिया था। प्रस्तुत कहानी में पुरूष के अर्न्तद्वंद को व्यक्त किया है। जगतपति इसका प्रतिनिशित्व करता है। यथा

'ये दवाइयाँ किसी की मेहरबानी नहीं है। मैंने हाथ का कड़ा बेचने को दे दिया था उसी से आई है।''

'मुझसे पूछा तक नहीं और ..... जगतपति ने कहा और जैसे खुद मन की कमजोरी दबा गया ... कड़ा बेचने से तो अच्छा था कि बच्चनसिंह की दया ही ओढ़ लेती।

चंदा माँ बनती है व्यभिचारी नहीं है वह, अपने पति के पौरूषत्व को समाज में जिंदा रखने के लिए, अपने आहत मातृत्व के लिए वह माँ बनती है। वह माँ बनती है। वह माँ बनती है ताकि उसका पति समाज में सम्मान से अपनी गर्दन ऊपर उठाकर जी सके।

मगर ऐसा नहीं होता जगतपति भावावेश में वह निर्णय तो ले लेता है किन्तु उसके परिणाम के साथ वह समझौता नहीं कर पता, न ही चंदा को स्वीकार ही कर पाता और आत्महत्या कर लेता हैं। कहानी मानवीय संवेदना से ओतप्रोत है।

2. पात्र एवं चरित्र चित्रण –

पात्र लेखक के विचारों से संवाहक होते हैं जिनके माध्यम से लेखक अपनी बात पाठको तक पहुंचाता है। प्रस्तुत कहानी में भी लेखक का संदेश, एक नपुंसक की पीड़ा, मातृत्व एवं पतिव्रता स्त्री का समझौता को व्यक्त करना ही लेखक का उद्देश्य है जिसके लिए कहानी में तीन प्रमुख पात्र है, जगतपति, चंदा और बच्चनसिंह। जगगपति प्रतिनिधि है समाज के उन पुरूषों का जो विवाह के छः वर्ष बाद भी पिता नही बन पाता है किन्तु अपने पुरूषतत्व के अहंकार में वह इसके लिए चंदा को ही दोषी बताता है। इससे चंदा के मातृत्व को ठेस पहुंचती हे। पति के द्वारा बाध्य करने पर चंदा बच्चनसिंह से संबंध स्थापित कर एक पुत्र को जन्म देती है। पुत्र होने के बाद जगतपति का पौरूष एक बार फिर जाग उठता है। अथवा कह लीजिए कि जगतपति पर इसका मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ता है, वह ग्लानि के मारे आत्महत्या कर लेता है। कहानी में जगतपति ने इस भूमिका को बड़ी ही सूक्ष्मता के साथ चित्रित किया है।

वहीं चंदा जो कहानी की नायिका है, चरित्र से पतिव्रता है। पति की मर्यादा के प्रति समर्पित है किन्तु पति द्वारा बार–बार आरोपित करने पर कमजोर पड़ जाती है, उसके मातृत्व को ठेस पहुंचती है और वह बच्चन सिंह से संबंध बना बैठती है। जो उसे व्यभिचारी सिद्ध करता है। जबकि चंदा के आरंभ के चरित्र को देखें तो हम पाएंगे कि वह निर्विकार भाव से पति की सेवा करती है, वह चरित्रहीन नहीं है बस पति और समाज के तानों से बचने के लिए वह ऐसा कदम उठार लेती हे। चंदा ने समाज की उन स्त्रियों की विवशता को चित्रित किया हैजो परिवार और समाज के दबाव आकार तो कहीं अपने मातृत्व के मोह से ऐसा कदम उइा लेती हैं। चंदा ने उस लाचारी को सजीवता से चित्रित किया हे।

बच्चनसिंह का चरित्र कथानक को आगे बढ़ाने के लिए उपयुक्त है। इसके अतिरिक्त कथानक के अन्य पात्र मुंशीजी जगगपति की बेवा चाची में कथानक को गति प्रदान करती है। कहानी में चित्रित समस्त पात्र अपने चरित्र को सजीव बनाने में पूर्णतः समर्थ रहे हैं। चरित्र चित्रण की दृष्टि से कहानी उपयुक्त बन पड़ी है।

3. कथोपकथन संवाद

राजा निरबंसिया कहानी का कथानक ही ऐसा है कि पाठक एक बार उसे चुनता था पढ़ता है तो उसी में उलझता चला जाता है। क्योंकि कहानी का कथानक यथार्थ के बहुत करीब और स्वाभाविक प्रतीत होता है। यद्यपि कहानी का कथोपकथन अत्यन्त सीमित है कहानीकार ने चित्रात्मकता के माध्यम से संपूर्ण कथा तत्व को प्रस्तुत कर दिया। कहानीकार ने कथा में निहित संवादों को बड़ी ही स्वाभाविकता के साथ प्रसंगों से जोड़ा है। यथा –

चंदा ने जगतपति की कलाई दबाते हुए धीरे से कहा – ''कंपाउंडर साहब कर रहे थे– ''इतना कहकर वह जगपति का ध्यान आकृष्ण करने के लिए चुप हो गई।

''क्या कह रहे थे ?'' जगपती अनमने स्वर में बोला।

''कुछ ताकत की दवाइयाँ तुम्हारे लिए जरूरी है।''

''मैं जानता हूँ।''

''पर .....''

''देखो चंदा चादर के बराबर ही पैर फैलाये जा सकते हैं। हमारी औकात इन दवाइयों की नहीं।''

''औकात आदमी की देखी जाती है कि पैसे की तुम तो .....''

''देखा जायेगा।''

''क्या कंपाउंडर साहब इंतजाम कर देंगे, उनसे कहूँगी मैं।''

''नहीं चंदा, उधार खाते से मेरा इलाज नहीं होगा – चाहे एक के चार दिन लग जाएं।''

''इसमें तो ''

''तुम नहीं जानती, कर्ज कोढ़ का रोग लेता है, एक बार लगने से तन तो गलता ही मन भी रोगी हो जाता है।''

प्रस्तुत संवाद संक्षिप्त किन्तु गंभीरता लिए हैं, साथ ही मुहावरों में अपनी बात कहने का कहानीकार का अपना अंदाज है, जो कहानी को रोचक बनाता है।

4. देशकाल और वातावरण –

राजा निरबंसिया यद्यपि एक प्रतिनिधि कहानी है। हम कह सकते हैं कि इसकी विषय वस्तु सर्वव्यापी है। किन्तु प्रस्तुत कहानी में कहानीकार ने एक लोककथा को आधार बनाया है। ग्रामीण परिवेश कहानी का वातावरण है। कहानी में निहित देशकाल और वातावरण की झलक दृष्टव्य हैं

''कस्बे अस्पताल था। कंपाउंडर ही मरीजों की देखभाल करते। बड़ा डॉक्टर तो नाम के लिए था या कस्बे के बड़े आदमियों के लिए। छोटो लोगों के लिए तो कपाउंडर साहब ही ईश्वर के अवतार थे मरीजों की देखभाल करने वाले रिश्तेदारों की खाने–पीने की मुशिकलों से लेकर मरीज की नब्ज तक संभालते थे। छोटी सी इमारत में अस्पताल आजाद था। रोगियों के लिए सिर्फ छह सात खाटें थी मरीजों के कमरे से लगा दवा बनाने का कमरा था, उसी में एक ओर एक आराम कुर्सी थी और एक नीची सी मेज उसी कुर्सी पर बड़ा डॉक्टर आकर कभी–कभार बैठता नहीं तो बच्चन सिंह कपाउंडर ही जमा रहता। अस्पताल में या तो फौजदारी के शहीद आते या गिर गिरा के हाथ पैर तोड़ लेने वाले एक आध लोग। छटे छना से कोई और दिख गई तो दिख गई, जैसे उन्हें कभी रोग घेरता ही नहीं था। कभी कोई बीमार पड़ती तो घर वाले हाल बता के आठ दस रोज की दवा एक साथ ले जाते और फिर उनके जीने मरने की खबर तक न मिलती।''

प्रस्तुत गद्यांश में ग्रामीण परिवेश को लेखक ने जिस अंदाज से रेखांकित किया हैं उससे लगता है समस्त कहानी का परिवेश आँखों के आगे साकार हो जाता है एवं कहानी की स्वाभाविकता पाठकों को कहानी की ओर आकृष्ट कहता है।

5. भाषा शैली–

राजा निरबंसिया लोककथा पर आधारित एक ग्रामीण परिवेश पर लिखी गई कहानी हैं। जाहिर है कहानी में निम्न मध्यमवर्गीय समाज को घटना के रूप मे चित्रित किया गया है।

संपूर्ण हानी में पात्रों के अनुकूल घटना कहानी को संपूर्णता प्रदान करती है। हानी में परिवेश के अनुकूल उसी भाषा का प्रयोग किया गया है जो वाक्य विन्यास को रोचक बनाने में सहायक हैं। उदाहरण स्वरूप ''अब आते ही होंगे, बैठिए न दो मिनट और! अपनी आँख से देख लीजिए और उन्हें समझाते जाइए कि अभी तंदुरूस्ती इस लायक नहीं, जो दिन–दिन भर घूमना बर्दास्त कर सके।

हाँ– भई! कमजोरी इतनी जल्दी नहीं मिट सकती, ख्याल नहीं करेंगे, तो नुकसान उठायेंगें। कोई पुरूष का स्वर था यह। जगतपति असमंजस्य में पड़ गया। वह एकदम भीतर घुस जाय? इसमें क्या हर्ज है ? पर जब उसने पैर उठाये, तो वे बाहर को जा रहे थे। बाहर बरोढे में साइकिल को पकड़ते ही उसे सूझ आई, वहीं से जैसे अजान बनता बड़े प्रयत्न से आवाज को खोलता चिल्लाया, ''अरे चंदा ! यह साईकिल किसकी है ? कौन मेहरबान..... .....'' चंदा उसकी आवाज सुनकर कमरे से बाहर निकलकर जैसे खुशखबरी सुना रही थी, ''अपने कंपाउंडर साहब आये हैं, खोजते–खोजते आज घर का पता लगा पाये हैं। तुम्हारे इंतजार में बैठे हैं।'

6. उद्देश्य–

कहानी राजा निरबंसिया कहानी लोक कथा पर आधारित कहानी है , जिसके नीछे कहानीकार का मुख्य उद्देश्य समाज को उस पक्ष से अवगत कराना है जिसमें स्वयं को शिक्षित एवं सभ्य कहलाने वाले समाज में प्राचीन काल से ही यह परंपरा रही है कि पुरूष के पौरूष की पूर्णता उसके पिता होने पर तथा नारी की संपूर्णता उसके माँ बनने पर ही मानी जाती है । इसके बिना भले ही व्यक्ति कितना ही सक्षम एवं गुणी क्यों न हो उसे समाज अपूर्णता और उपेक्षा की दृष्टि से ही देखेगा।

राजा निरबंसिया एक प्रतिनिधि पात्र है जो इस विडम्बना और इसके दुष्परिणामों को समाज के समक्ष रखता है। जो घटना जगतपति और चंदा के साथ घटित होती है वह आज के समाज का सच है जिसे कुछ राजा निरबंसिया स्वीकार कर लेते हैं तो कुछ जगतपति की तरह कुंठा के शिकार हो जाते हैं।

लेखक का उद्देश्य इस सच्चाई से समाज को अवगत कराने के साथ – साथ इसके दुष्परिणामों से आगाह करना रहा है। कम्पाउंडर बच्चनसिंह द्वारा चंदा का दैहिक शोषण और जगतपति का ग्लानि से स्वयं को समाप्त कर देना पाठकों को चिंतन हेतु प्रेरित करता है। अतः कहानी अपने उद्देश्य में पूर्णतः सफल रही है।

7. शीर्षक–

कहानी की रचना के कई आधार है कोई कहानी घटना प्रधान होती है तो कुछ समस्या प्रधान तो कहीं पात्रों की प्रमुखता हेतु पात्र प्रधान भी होती है। प्रस्तुत कहानी का संपूर्ण घटना चक्र निरबंसी होने की पीड़ा को उजागर करता है फिर चाहे वह राजा हो या फिर जगतपति दोनों की ही पीड़ा समान है। यद्यपि राजा को आधार बनाकर लेखक ने यह कहानी रची है अतःकहानी का शीर्षक राजा निरबंसिया सर्वथा उचित है।

शीर्षक की दृष्टि से कहानी अपने नाम को पूर्णतः सार्थक साबित करती है।

dgkuh jkt k fujcfl ;k dh 0;k[;k

1. ''दिल छोटा मत करना जांघ का घाव तो दस रोज में भर जाएगा, कूल्हे का घाव कुछ दिन जरूर लेगा। अच्छी से अच्छी दवाई दूंगा। दवाइयां तो ऐसी हैं कि मुर्दे को चंगा कर दें। पर हमारे अस्पताल में नहीं आती, फिर भी''... ..''तो किसी दूसरे अस्पताल से नहीं आ सकतीं वो दवाइयां?'' चन्दा ने पूछा। ''आ तो सकती हैं, पर मरीज को अपना पैसा खरचना पड़ता है उनमें'' बच्चनसिंह न कहा।

संदर्भ– प्रस्तुत गंद्याश नई कहानी के पुरोधा, आवाज के जादूगर स्व. श्री कमलेश्वर द्वारा रचित कहानी 'राजा निरबंसिया' से ली गई है।

प्रसंग– प्रस्तुत कहानी प्राचीन परिवेश की घटना को नवीन परिवेश से जोड़कर रची गई है। जिसमें कहानीकार ने ऐतिहासिक दृष्टांत के साथ–2 वर्तमान समाज की मनोवृत्ति की तुलना की है। इसमें संदेह नहीं कि हमारा समाज बदला है किन्तु आज भी लोगों की सोच और समाज नारी के प्रति दृष्टिकोण वही परपंरावादी है, वहीं पुरुष के पुरूषत्व का पैमाना उसके संतान होने से ही आंका जाता है। राजा निरबंसिया एक ऐसी ही कहानी है जिसमें पति के दुर्घटनाग्रस्त होने एवं नपुसंक सिद्ध हो जाने पर उसकी पत्नी समाज की कुदृष्टि का शिकार होती है। कहीं उसकी लाचारी है समाज में स्वयं को संपूर्ण नारी साबित करने और मातृत्व सुख के लोभ की। आलोच्य प्रसंग में कमलेश्वर जी ने ऐसी ही स्थितियों को दर्शाया है।

भावार्थ–कहानी राजा निरबंसिया का पात्र जगतपति और चंदा के विवाह में आरंभ में बाधा आने के पश्चात् भी सारा स्थितियाँ संभल जाती हे। उनका जीवन सुचारू रूप से चल रहा है किन्तु विवाह के छः वर्षो के पश्चात् भी उनके कोई संतान नहीं हो पाती जिसका दोष जगतपति सदैव अपनी पत्नी चंदा को देता है। तभी एक घटना घटित होती है कि जगतपति किसी घटना में घायल हो जाता है। वहीं चंदा की मुलाकात कंपाउंडर बचन सिंह से होती है। चंदा पति की हालत से दुखी है तब बचनसिंह उसकी कमजोरी से लाभ उठाता है उसे प्रलोभन देता है कि उसके पति के शरीर पर पड़े घाव कुछ दिनों में भर जाएगे बस अच्छे इलाज की आवश्यकता है जिसके लिए पैसों की आवश्यकता है। दवाइयों में इतनी ताकत है कि मुरदा आदमी भी जी उसे फिर जगतपति क्या चीज है। बस पैसे खर्च करने की आवश्यकता है।

यहाँ बच्चनसिंह जानता है कि चंदा और जगतपति की आर्थिक रूप से इतने समृद्ध नहीं है, चंदा अपना कंगन उसे गिरवी रख पति के इलाज का निवेदन करती है कि किन्तु वह किन्तु उसकी दृष्टि चंदा पर है। वह अपनी बातों से चंदा को आकर्षित करने का प्रयास करता है।

विशेष – बचनसिंह जैसे लोगों की ओर लेखक ने ध्यान आकर्षित किया है। जो लोंगों की विवशता का नाजायज फायदा उठाते है।

2. चन्दा ने भीतर तो रख दिया पर सहसा सहम गई, जैसे वह किसी अंधेरे कुएं में अपने–आप कूद पड़ी हो, ऐसा कुंआ, जो निरन्तर पतला होता गया है और जिसमें पानी की गहराई पाताल की पर्तो तक चली गई हो, जिसमें पड़कर वह नीचे धंसती चली जा रही हो, नीचे.. अंधेरा.. एकान्त. घुटन..पाप!

संदर्भ – प्रस्तुत गंद्याश नई कहानी के पुरोधा, आवाज के जादूगर स्व. श्री कमलेश्वर द्वारा रचित कहानी 'राजा निरबंसिया' से ली गई है।

प्रसंग – नारी इस संसार की सबसे संवेदनशील प्राणी मानी गई है। संभवतः कभी–कभी इस संवेदनावश उसके फैसले भी न्यायोचित नहीं साबित होते। कई बार वह अपने ही फैसले में ऐसी उलझ जाती है कि गलत होने पर उसका अन्तर्मन ग्लानि से भर जाता है। प्रस्तुत कहानी राजा निरबंसिया में चंदा ऐसी ही पात्र है जो परिस्थितियों के हाथ फँस कर जीवन का एक ऐसा फैसला कर बैठती है कि स्वयं ग्लानि और पछतावे में तड़प उठती है। उक्त कहानी में कमलेश्वरजी ने चंदा के इसी रूप को दर्शाया है।

भावार्थ– चंदा अस्पताल से जगतपति को घर लेकर आता है, जहाँ अँधेरा है, आते ही जगतपति उसे ताने देता है, जगतपति के वो शब्द चंदा के कानों में गूँज रहा है। जब वह कमरे में आते है तो जगतपति का सामना करने से घबराती है। जबकि जगतपति के द्वारा बाध्य होने पर ही वह बच्चनसिंह के पास जाती है, हाँ! मन में कहीं मातृत्व सुख की अभिलाषा भी थी। किन्तु आज उसे अपने द्वारा किए इस कार्य की ग्लानि है, वह अपने पति का सामना करने से भयभीत है।

उसे ऐसा आभास हो रहा है कि वह सिकी गहरे अँधेरे कुंए में स्वयं गिर पड़ी है, जहाँ हीं रोशनी की कोई किरण नहीं है। कुआ भी ऐसा जो नीचे परत दर परत संकरा होता जा रहा है। और उस संकरी, घुटनभरी खाई में चंदा का दम घुट रहा है, अतल गहरी खाई जिसमें पानी ही पानी है और चंदा उस अपराध कुंठा, गलानि की अंधेरी खाई में भीतर और भीतर धस्ती जा रही है। उसकी अन्तर्आत्मा उसे भीतर ही भीतर कचोट रही है। यह अँधेरा है एकान्त का जो जगतपति के साथ रह कर भी उसे भयभीत कर रहा है, यह अँधेरा है उसके द्वारा किए अपराध का यह अपराध बोध उसका दम घोट रहा है। यह अंधेरा है उसके द्वारा किए पतित कर्म का जिसने उसकी सुख की नींदे छीन ली है।

विशेष– प्रस्तुत कहानी में लेखक ने एक इंसान के अंदर सोए हुए इंसान के जागृत होने की स्थिति को अभिव्यक्त किया है व्यक्ति जीवन में चाह कितने भी गलत काम करले एक दिन वह अपने ही पश्चाताप की अग्नि में जलता है।

3. चन्दा के दिल में यह बात चुभ रही थी–तुम्हारे कभी कुछ नहीं होगा। और सिसकती–सिसकती चन्दा न जाने कब सो गई। पर अगपती की आंखों में नींद न आई। खाट पर पड़े–पड़े उसके चारों ओर एक मोहक, भयावना–सा जाल फैल गया। लेटे–लेटे उसे लगा, जैसे उसका स्वयं का आकार बहुत क्षीण होता–होता बिन्दु–सा रह गया, पर बिन्दु के हाथ थे, पैर और दिल की धड़कन भी। कोठरी का घुटा–घुटा–सा अंधियारा, मटमैली दीवारें और गहन गुफाओं–सी अलमारियां, जिनमें से बार–बार झांककर देखता था और वह सिहए उठता था फिर जैसे सब कुछ तब्दील हो गया हो। उसे लगा कि उसका आकार बढ़ता जा रहा है, बढ़ता जा रहा है। वह मनुष्य हुआ, लम्बा–तगड़ा तन्दुरूस्त पुरूष हुआ. उसकी शिराओं में कुछ फूट पड़ने के लिए व्याकूलता से खौल उठा। उसके हाथ शरीर के अनुपात से बहुत बड़े डरावने और भयानक हो गए, उनके लम्बे–लम्बे नाखून निकल आए वह राक्षस हुआ, दैत्य हुआ..आदिम बर्बर! और बड़ी तेजी से सारा कमरा एकबारगी चक्कर काट गया। फिर सब धीरे–धीरे स्थिर होने लगा और उसकी सांसें ठीक होती जान पड़ी। फिर जैसे बहुत कोशिश करने पर घिग्घी बंध जाने के बाद उसकी आवाज फूटी, "चन्दा।"

संदर्भ– प्रस्तुत गंद्याश नई कहानी के पुरोधा, आवाज के जादूगर स्व. श्री कमलेश्वर द्वारा रचित कहानी 'राजा निरबंसिया' से ली गई है।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्य में लेखक ने चंदा की मनो व्यथा का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है । चंदा समाज की उन तमाम नारियों का प्रतिनिधित्व करती है, जो चाहे पति की कमी के ही कारण माँ नहीं बन पा रही है। किन्तु फिर भी समाज की नजरों में वे ही गुनहगार हैं यहाँ तक कि उन्हें गाहे–बगाहे पति की उपेक्षा की भी शिकार होना पड़ता है।

प्रस्तुत पंक्तियों में कहानीकार ने चंदा की इसी वेदना को मुखर किया है।

भावार्थ– उधर चंदा पति के उलाहनों व ग्लानि से कुंठिन है वही स्वयं में कमजोरी होते हुए भी चंदा को दोषी साबित करने पर जगतपति संतुष्ट नहीं है। वह चंदा को कह तो देता है कि तुम्हारे कभी कुछ नहीं होगा' चंदा तो अपनी पीड़ा आँसू में बहाकर सो जाती है किन्तु जगतपति की आँखों से मानों नींद रूठ गई है। वह अपने ही बुने जाल में उलझता जा रहा है। ऐसा लगता है उसकी चारों ओर एक मोहक संसार फैला हुआ है। और उस संसार में उसका अस्तित्व बहुत ही तुच्छ सा है। मानो संसार एक महा समुंदर है और वह इस समुंदर सी एक छोटी की बूंद के समान है। फर्क सिर्फ इतना है कि उसके हाथ–पैर और दिल है जो धड़कता भी है, मानवीय कमजोरी से ओतप्रोत है अब उसे अपना ही घर घुटन भरा महसूस होने लगा। अगले ही पल वह सोचता है कि उसका स्वरूप एक राक्षस की भांति विशाल हो गया है, जिसकी कई शाखाएं फूट पड़ी है। लंबे नाखून, बड़े दांत बिलकुल दैत्याकार स्वरूप हो गया है। उसका, वह अपने ही रूप से भय खाने लगा है। सारा घर उसे घूमता नजर आने लगा है। वह व्याकुल हो बौखला जाता है, भय के मारे उसकी चीख निकल उठती है और उस चीख में भी 'चंदा ही याद आती है।

अर्थात् जगतपति जीवन की सच्चाई का सामना नहीं कर पा रहा है। पहले उसने स्वयं चंदा को उस नर्क में जाने को विवश किया और अब वह उस कटु यथार्थ का आत्मसात नहीं कर पा रहा हैं एक पल को वह चंदा से नाराज भी है। मगर सारी विपरीत परिस्थितियों में भी चंदा से नाराज होकर भी वह अंततः सहारे के रूप में चंदा को ही चुनता है।

विशेष– एक पुरुष के मनोविज्ञान को बखूबी से दर्शाया है भाषा सहज, सरल एवं स्वाभाविक होने के साथ–2 मार्मिक प्रभाव उत्पन्न करने में सार्थक है।

यशपाल कहानीकार के रूप में

यशपाल का नाम आधुनिक हिन्दी साहित्य के कथाकारों में प्रमुख है। ये एक साथ ही क्रांततिकारी एवं लेखक दोनों रूपों में जाने जाते है। प्रेमचंद के बाद हिन्दी के सुप्रसिद्ध प्रगतिशील कथाकारों में इनका नाम लिया जाता है। अपने विद्यर्थी जीवन से ही यशपाल क्रांतिकारी आन्दोलन से जुडे, इसके परिणामस्वरूप लम्बी फरारी और जेल में व्यतीत करना पड़ा। इसके बाद इन्होने साहित्य को अपना जीवन बनाया, जो काम कभी इन्होने बंदूक के माध्यम से किया था, अब वही काम इन्होने बुलेटिन के माध्यम से जनजागरण का काम शुरु किया। यशपाल को साहित्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में भारत सरकार द्वारा सन 1970 में पद्म भूषण से सम्मानित किया गया था।

पंजाब फिरोजपुर छावनी में एक साधारण खत्री में जन्में यशपाल की माँ श्री मति प्रेमदेवी वहाँ अनाथालय के एक स्कूल में अध्यापिका थीं, जहाँ कभी उनके पूर्वज हमीरपुर से आकर बस गए थे। पिता की एक छोटी–सी दुकान थी और उनके व्यवसाय के कारण ही लोग उन्हें 'लाला' कहते–पुकारते थे। बीच–बीच में वे घोड़ें पर सामान लादकर फेरी के लिए आस–पास के गाँवों में भी जाते थे। अपने व्यवसाय से जो थोड़ा–बहुत पैसा उन्होंने इकट्ठा किया था उसे वे, बिना किसी पुख्ता लिखा–पढ़ी के, हथ उधारू तौर पर सूद पर उठाया करते थे। अपने परिवार के प्रति उनका ध्यान नहीं था। इसीलिए यशपाल की माँ अपने दो बेटों–यशपाल और धर्मपाल– को लेकर फिरोजपुर छावनी में आर्य समाज के एक स्कूल में पढ़ाते हुए अपने बच्चों की शिक्षा–दीक्षा के बारे में कुछ अधिक ही सजग थीं। यशपाल के विकास में गरीबी के प्रति तीखी घृणा आर्य समाज और स्वाधीनता आंदोलन के प्रति उपजे आकर्षण के मूल में उनकी माँ इस और इस परिवेश की एक निर्णायक भूमिका रही है। यशपाल के रचनात्मक विकास में उनके बचपन में भोगी गई गरीबी की एक विशिष्ट भूमिका थी।

अपने बचपन में यशपाल ने अंग्रेजों के आतंक और विचित्र व्यवहार की अनेक कहानियाँ सुनी थीं। बरसात या धूप से बचने के लिए कोई हिन्दुस्तानी अंग्रेजों के सामने छाता लगाए नहीं गुजर सकता थी। बड़े शहरों और पहाड़ों पर मुख्य सड़के उन्हीं के लिए थीं, हिन्दुस्तानी इन सड़कों के नीचे बनी कच्ची सड़क पर चलते थे। यशपाल ने अपने होश में इन बातों को सिर्फ सुना, देखा नहीं, क्योंकि तब तक अंग्रेजों की प्रभुता को अस्वीकार करने वाले क्रांतिकारी आंदोलन की चिंगारियाँ जगह–जगह फूअने लगी थीं। लेकिन फिर भी अपने बचपन में यशपाल ने जो भी कुछ देखा, वह अंग्रेजों के प्रति घृणा भर देने को काफी था। वे लिखते हैं, ''मैंने अंग्रेजों को सड़क सर्व साधारण जनता से सलामी लेते देखा है। हिन्दुस्तानियों को उनके सामने गिड़गिड़ाते देखा है, इससे अपना अपमान अनुमान किया है संभवत : यही कारण है कि उनके मन में शोषक वर्ग के प्रति शेष आई शोषित वर्ग के प्रति सहानुति कास भाव रहा हैं।

आर्य समाज और कांग्रेस वे पड़ाव थे जिन्हें पार करके यशपाल अंततः क्रांतिकारी संगठन की ओर आए। उनकी माँ उन्हें स्वामी दयानंद के आदर्शों का एक तेजस्वी प्रचारक बनाना चाहती थीं। इसी उद्देश्य से उनकी आंरभिक शिक्षा गुरुकुल कांगडी में हुई। आर्य समाजी दमन के विरुद्ध उग्र प्रतिक्रिया के बीज उनके मन की धरती पर यहीं पड़े। यही उन्हें पुनरुत्थानवादी प्रवृत्तियों को भी निकट से देखने–समझने का अवसर मिला। अपनी निर्धनता का कचोट–भरा अनुभव प्रकार उत्तरदायी नहीं समझ पाते। इन्हीं संस्कारों के कारण गरीब के अपमान के प्रति कभी उदासीन नहीं हो सके।

अपने दौर के अनेक दूसरे लोगों की तरह वे भी काग्रेस के माध्यम से ही राजनीति में आए। राजनैतिक दृष्टि से फिरोजपुर छावनी एक शांत जगह थी। छावनी से तीन मील दूर शहर के लेक्चर और जलसे होते रहते थे। खद्दर का प्रचार भी होता था। 1921 में, असहयोग आंदोलन के समय यशपाल अठारह वर्ष के नवयुवक थे–देश–सेवा और राष्ट्रभक्ति के उत्साह से भरपूर, विदेशी कपड़ों की होली के साथ वे काग्रेंस के प्रचार–अभियान में भी भाग लेते थे। घर के ही लुग्गड़ से बने खद्दर के कुर्ता–पायपामा और गांधी टोपी पहनते थे। इसी खद्दर का एक कोट भी उन्होंने बनवाया था। बार–बार मैला हो जाने से ऊबकर उन्होंने उसे लाल रँगवा लिया था। इस काल में अपने भाषणों में, ब्रिटिश करते हैं वह संभवतः 1904 में प्रकाशित सखाराम गणेश देउस्कर की बाड्ला पुस्तक देशेरकथा है, भारतीय जन–मानस पर जिसकी छाप व्यापक प्रतिक्रिया और लोकप्रियता के कारण ब्रिटिश सरकार ने जिस पर पाबंदी लगा दी थी।

लाला लाजपतराय की हिन्दूवादी नीतियों से घोर विरोध के बावजूद उनपर हुए लाठी जार्च के कारण, जिससे ही अंततः उनकी मृत्यु हुई, भगतसिंह और उनके साथियों ने सांडर्स की हत्या की। इस घटना को उन्होंने एक राष्ट्रीय अपमान के रूप में देखा।

अपने क्रांतिकारी जीवन के जो स्मरण यशपाल ने सिंहावलोकन में लिखे, उनमें अपनी दृष्टि से उन्होंने उस आंदोलन और अपने साथियों का मूल्यांकन किया। तार्किकता, वास्तविकता और विश्वसनीयता पर उन्होंने हमेशा जोर दिया है। यह संभव है कि उस मूल्यांकन से बहुतों को असहमति हो या यशपाल पर तथ्यों को तोड़-मरोड़कर प्रस्तुत करने का आरोप हो। आज भी कुठ लोग ऐसे हैं, जो यशपाल को बहुत अच्छा क्रांतिकारी नहीं मानते। उनके क्रांतिकारी जीवन के प्रसंग में उनके चरित्रहनन की दुरभंसधियों को ही वे पूरी तरह सच मानकर चलते हैं और शायद इसीलिए यशपाल की ओर मेरी निरंतर और बार-बार वापसी को वे 'रेत की मूर्ति' गढ़ने-जैसा कुछ मानते हैं।

शुरुआत हिन्दी में वस्तुतः यशपाल के इन्हीं संस्मरणों से होती है। ये क्रांतिकारी सामान्य मनुष्यों से कुछ अलग, विशिष्ट और अपने लक्ष्यों कि लिए एंकातिक रूप से समर्पित होने पर भी सामान्य मानवीय अनुभूतियों से अछूते नहीं थे। शरतचंद्र ने पथेरदावी में क्रांतिकारियों का जो आदर्श रूप प्रस्तुत किया, यशपाल उसे आवास्तविक मानते थे, जिससे राष्ट्रभक्ति की प्रेरणा मिलती हो, उसे क्रांतिकारी आंदोलन और उस जीवन को वास्तविकता का एक प्रतिनिधि और प्रामाणिक चित्र नहीं माना जा सकता। सुबोधचंद्र सेन गुप्त पथेरदावी में बिजली पानीवाली झंझावती रात में सव्यसाची के निषक्रमण को भावी महानायक सुभाषचंद्र बोस के पलायन के एक रूपक के तौर पर देखते हैं, जबकि यशपाल सव्यसाची के अतिमानवीय से लगने वाले कार्य-कलापों और खोह-खंडहरों में बिताए जानेवाले जीवन को वास्तविक और प्रामाणिक नहीं मानते। क्रांतिकारी जीवन के अपने लंबे अनुभवों को ही वे अपनी इस आलोचना के मुख्य आधार के रूप में इस्तेमाल करते हैं।

2. मार्च सन् 38 को जेल से रिहाई के बाद, जब उसी वर्ष नवंबर में यशपाल ने विप्लव का प्रकाशन-संपादन शुरू किया तो अपने इस काम को उन्होंने 'बुलेट बुलेटिन' के रूप में परिभाषित किया। जिस अहिंसक और समतामूलक समाज का निर्माण वे राजनीतिक क्रांतिकारी के माध्यम से करना चाहते थे, उसी अधूरे काम को आगे बढ़ाने के लिए उन्होंने लेखन को अपना आधार बनाया। अपने समय की सामाजिक-राजनीतिक समस्याओं के केन्द्र में रखकर लिखे गए साहित्य को प्रायः हमेशा ही विचारवादी कहकर लांछित किया जाता है। नंद दुलारे वाजपेयी का प्रेमचंद्र के विरुद्ध बड़ा आरोप यही था। अपने ऊपर लगाए गए प्रचार के आरोप का यशपाल ने उत्तर भी लगभग प्रेमचंद्र की ही तरह दिया।

अपने पहले उपन्यास दादा कॉमरेड की भूमिका में उन्होंने लिखा, 'कला के प्रेमियों को एक शिकायत मेरे प्रति है कि (मैं) कला को गौण और प्रचार को प्रमुख स्थान देता हूँ। मेरे प्रति दिए गए इस फैसले के विरुद्ध मुझे अपील नहीं करनी। संतोष है अपना अभिप्राय स्पष्ट कर पाता हूं..... अपने लेखकीय सरोकारों पर और विस्तार से टिप्पणी करते हुए बाद में उन्होंने लिखा, 'मनुष्य के पूर्ण विकास और मुक्ति के लिए संघर्ष करना ही लेखक की सार्थकता हैं। जब लेखक अपनी कला के माध्यम से मनुष्य की मुक्ति के लिए पुरानी व्यवस्था और विचारों में अंतर्विरोध दिखाता है और नए आदर्श सामने रखता है तो उस पर आदर्शहीन और भौतिकवादी तो है ही परंतु वह आदर्शहीन भी नहीं है। उसके आदर्श अधिक यथार्थ हैं। आज का लेखक जब अपनी कला द्वारा नए आदर्शों का समर्थन करता है तो उस पर प्रचारक होने का

लांछन लगाया जाता है। लेखक सदा ही अपनी कला से किसी विचार या आदर्श के प्रति सहानुभूति या विरोध पैदा करता है। साहित्य विचारपूर्ण होगा।

यशपाल के लेखन की प्रमुख विधा उपन्यास है, लेकिन अपने लेखन की शुरूआत उन्होंने कहानियों से ही की। उनकी कहानियाँ अपने समय की राजनिति से उस रूप में आक्रांत नहीं हैं, जैसे उनके उपन्यास। नई कहानी के दौर में स्त्री के देह मन के कृत्रिम विभाजन के विरुद्ध एक संपूर्ण स्त्री की जिस छवि पर जोर दिया गया, उसकी वास्तविक शुरुआत यशपाल से ही होती है। आज की कहानी के सोच की जो दिशा है, उसमें यशपाल की कितनी ही कहानियाँ बतौर सार्थकता असंदिग्ध है। उनके कहानी–संग्रहों में पिंजरे की उड़ान, ज्ञानदान, भस्मावृत्त चिनगारी, फूलों का कुर्ता, धर्मयुद्ध, तुमने क्यों कहा था मैं सुन्दर हूँ उत्तमी की माँ प्रमुख हैं।

जो और जैसी दुनिया बनाने के लिए यशपाल सक्रिय राजनीति से साहित्य की ओर आए थे, उसका नक्शा उनके आगे शुरू से बहुत कुछ स्पष्ट था। उन्होंने किसी युटोपिया की जगह व्यवस्था की वास्तविक उपलब्धियों को ही अपना आधार बनाया था। यशपाल की वैचारिक यात्रा में यह सूत्र शुरू से अंत तक सक्रिय दिखाई देता है कि जनता का व्यापक सहयोग और सक्रिय भागीदारी ही किसी राष्ट्र के निर्माण और विकास के मुख्य कारक हैं। यशपाल हर जगह जनता के व्यापक हितों के समर्थक और संरक्षक लेखक हैं। अपनी पत्रकारिता और लेखन–कर्म को जब यशपाल 'बुजेट की जगह बुलेटिन' के रूप में परिभाषित करते हैं तो एक तरह से वे अपने रचनात्मक सरोकारों पर ही टिप्पणी कर रहे होते हैं। ऐसे दुर्धर्ष लेखक के प्रतिनिधि रचनाकर्म का यह संजयन उसे संपूर्णता में जानने–समझनेके लिए प्रेरित करेगा, ऐसा हमारा विश्वास है। वर्षों 'विप्लव' पत्र का संपादन–संचालन। समाज के शोषित, उत्पीड़ित तथा सामाजिक बदलाव के लिए संघर्षरत व्यक्तियों के प्रति रचनाओं में गहरी आत्मीयता। धार्मिक ढोंग और समाज की झूठी नैतिकताओं पर करारी चोट। अनेक रचनाओं के देशी–विदेशी भाषाओं में अनुवाद। 'मेरी तेरी उसकी बात' नामक उपन्यास पर साहित्य अकादमी पुरस्कार।

कहानी कला जी दृष्टि से परदा कहानी की विशेषताएं बतलाइए।

यशपाल जी समाजवादी विचारधारा के प्रतिनिधि कहानीकार है। और साहित्य की सामाजिक उपयोगिता में आस्था रखते है। अपने प्रगतिशील दृष्टिकोण के कारण वे मानते है कि साहित्यकार का उद्देश्य है कि सामाजिक विकास के मार्ग के आए व्यवधान अंधविश्वास रूढ़ियौ आदि को दूर करने हेतु साहित्य एक सशक्त माध्यम है। अपनी कहानियों में यशपालजी ने इन्हीं अंधविश्वास रूढ़ियों मिथ्या भय आदि का चित्रण किया है। कहानी कला के आधार पर इम पदरा कहानी की विशेषताओं को निम्न बिन्दुओं के आधार पर परिभाषित कर सकते है।

1 – कथावस्तु – (कथाकार) आलोच्य कहानी का कथानक चौधरी पीरबख्श और उसके परिवार के आसपास बुनी गई है। कथानक का आरंभ पीरबख्श कि परदादा से होता है। जिनका समाज में रूतबा है पक्का मकान है समाज में शान शौकत है एक अच्छी सी हवेली है जो उस परिवार के लिए पर्याप्त हैं उनके दूसरे पुत्र इलाही बख्श के चार बेटों में सबसे छोटे है पीरबख्श का परिवार बढ़ने से वह पुश्तैनी मकान छोटा पड़ने लगा साथ ही घर का सारा वैभव भी जाता रहा घर भी ऐसा जो जर–जर हो रहा था। किवाडें टूटने की वजह ये पीरबख्श ने परदे से उसे

ढ़क रखा था। परिणाम पीरबख्श को 2 रूपए के किराये के मकान में शरण लेनी पड़ी यह किराया भी उन्हें बहुत भारी लगता था। घर की बढ़ती जिम्मेदारी और पैंतीस रूपए आमदनी में घर का खर्च चलाना मुश्किल हुआ तो पीरबख्श ने खान नाराज हो जाता हें और आकर सरे आम पीरबख्श को गलियाँ देता है और दवाजे पर पड़े परदे को भी उखाड़ फैंकता है। पीरबख्श इस सदमें को सह नहीं पाते और बेहोश हो जाते हें होश आने पर वह दोबारा परदा दरवाजे पर नहीं टांगते क्योंकि जिस मकसद से उन्होंने यह पर्दा दरवाजे पर लगाया था आज वो मकसद समाप्त हो गया।

समीक्षा– किसी भी कहानी के गढ़ने में कहानीकार को तीन मुख्य स्थितियों का ध्यान रखना होता है। यशपाल की इस कहानी के हमे ये तीनों ही स्थितियों बखूबी देखने को मिलती है। इलाही बख्श के चौथे पुत्र के रूप में पीरवख्श को कथा आरंभ होती है वही खान के द्वारा दरवाजे पर से परदे का खींचना काहनी की पराकाष्ठा है तथा घर के मौजूदा हालातों से पाठकों का अवगत होना, खान तथा पाठकों के मन में पीरबख्श के प्रति संवेदना का जाग्रत होना कहानी की सार्थकता को सिद्ध करता है।

2. चरित्र चित्रण – चरित्र पात्रों को जीवंतता प्रदान करते है ओर कथानक को उसके उद्देश्य तक पहुंचाने में सहायक होते है। पीरवख्श और खान बबर अभी दो ही चरित्र को लेकर चला यह कथानक, किन्तु दोनों ही पात्र अपने –अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। पीरबख्श एक निम्न मध्यमवर्ग की विवशता लाचारी एवं आमदनी अठन्नी खर्चा रूपया की कहावत को चरित्रार्थ करता है, वहीं खान बबर अली समाज की पूँजीपति व्यवस्था की निरंकुशता एवं महाजनी सभ्यता का प्रतीक है।

समीक्षा – किसी भी कहानी को आगे बढ़ाने के लिए कथाकार पात्रों की सहायता होती है पात्रों के माध्यम से ही कहानी पाठकों तक पहुँचती है कहानी के स्वरूप एवं उद्देश्य के आधार पर ही कहानी के पात्र होते हैं निसंदेह परदा कहानी का आकार छोटा है तथा यह एक ही उद्देश्य को लेकर चली है। कहानी में नाय और खलनायक दोनों ही पात्रों को स्थान दिया है। शोषक एवं शोषित वर्ग, भारत में पूँजीवाद एवं महाजनी सभ्यता कै दौर की निरंकुशता को दर्शाता है बबरअली खान, वहीं निम्न वर्ग की लाचारी बदहाली घर के कमजोर आर्थिक हालातों की सजीव झांकी प्रस्तुत करता है पीरबख्श ।

इसकी महत्वपूर्ण बात यह है कि दोनों पात्रों की अपनी समस्या है पीरबख्श की समस्या व्यक्तिगत कम सामाजिक अधिक है यही कारण है कि ये पात्र स्वयं से ही नहीं समाज से भी संघर्ष करते है परदा कहानी में नारीपात्र परदे की परिधि तक ही सीमित है सभी खानदान की झूठी मान–मर्यादा का निर्वाह करने में कष्ट पा रहे हैं।

इसके साथ ही निर्धन वर्ग की भीषण समस्या है कर्ज, जो न चाहते हुए भी व्यक्ति को लेना ही होता है। समस्या है न चुकापाने की स्थिति में वही हल होता है जो पीरबख्श का होता है।

इस दृष्टि से 'परदा' कहानी के दोनों ही पात्र अपने–अपने स्थान पर अपने चरित्र का निर्वाह करने में सफल रहे है।

3. कथोपकथन –

यद्यपि कहानी में दो ही पात्र है एक नायक दूसरा सहनायक जिसे हम खलनायक भी कह सकते है इन दोनों के बीच संवाद की स्थिति कम ही बनती है। किन्तु सीमित ही सही पात्रों के कथोपकथन बड़े ही स्वाभविक बन पड़े है। पढान के संवाद ही कहानी को गति प्रदान करते हुए कहानी में रोमांच को बनाए रखते हैं, उदाहरण के रूप में पठान बाबर अली का यह कथोपकथन –

''आम वतन छोड़ कर परदेश में पड़ा है। ऐसे रूपया छोड़ देने के वास्ते नहीं। अमार भी बाल बच्चा है।

''नइ बदजात चौरे बीतर में चिपा है। हम चार घंटे में फिर आता है रूपया लेकर जायगा ––– रूपया नहीं देगा, तो उसका खाल उतार कर बाजार में बेच देगा –– अमारा रूपया क्या हराम का है।''

समीक्षा – कथोपकथन कहानी में प्राण फूंकते है, पात्रों का परस्पर अथवा स्वयं से ही संवाद कहानी में सजीवता लाते है। कथोपकथन पात्र देश काल और वातावरण के अनुरूप होने पर ही कहानी को सफल और सार्थक बनाती है। निःसंदेह इसके लिए कहानी कार को बहुत श्रम करना पड़ता है। विभिन्न क्षेत्रों आचार–विचार और व्यवहार के लोग, अलग–अलग भाषा एवं शौली के पात्र से उनकी बातें कहलाना एक दुष्कर कार्य हैं। दरअसल पात्रों के माध्यम से स्वयं लेखक अपने भाव प्रस्तुत कर रहा होता है। पात्र तो उसे प्रभावशाली अंदाज में उसे पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते है।

प्रस्तुत कहानी में केवल एक ही पात्र है जिसके माध्यम से कहानी कार के अपने कई उद्देश्यों को साकार किया है। एक तो शोषक वर्ग की निरंकुशता दूसरे शोषित वर्ग की पीड़ा जब खान पीरबख्श के लिए कठोर शब्दों का प्रयोग करता है तो पाठकों के मन में पीरबख्श है।

इस दृष्टि से हम कह सकते है कि निःसंदेह 'परदा' कहानी अपने उद्देश्य को सार्थक बनाती है।

5. . देशकाल और वातावरण –

कोई भी कहानी चाहे वह घटना प्रधान हो या पत्र प्रधान उसमें परिवेश की अनिवार्यता तो बनी ही रहती हे। यह परिवेश ही घटना को सजीवता प्रदान करते है। यह कहानी में निहित परिवेश (देश काल और वातावरण) कैसा है। उदाहरण यदि राजस्थानी परिवेश की कहानी है तो रेत के पहाड़ चिलचिलाती धूप ऊॅट गाड़ी वहॉ के स्त्री–पुरूषों का पहनावा आदि उस कहानी के प्रभाव को बढ़ाते है। कहानी में जितने आर्थिक पात्र होंगे, उनका उवना ही विदिधा परिवेश होगा बोली, आचार–व्यवहार सव मिलाकर देशकाल और वातावरण का निर्माण करते है। श्रदा कहानी का कथानक अत्यन्त संक्षिप्त है एक परिवार पीरबख्श का उसी के आसपास कहानी घूमती रहती है। इस नाते देश काल और वातावरण का बहुत अधिक योगदान नहीं है।

समीक्षा –

फिर भी छोटे स्वरूप में ही सही कहानी में पीरबख्श का छोटी बस्ती में गरीव और कमीन लोगो के बीच रहना रूपए न लौटा पाने की स्थिति में पीरबख्श का मंडी जाना तेल की मिल में लाय करना, दरवाजे पर तार होता पर्दा, खान की खुशामद आदि कहानी में प्रभावोत्पादक वातावरण का निर्माण करते है। अतः कहानी का वतावरण कहानी में सजीव वातावरण निर्माण में

सहायक सिद्ध हुआ है। और उसके परिवार के प्रति संवेदना जाग्रत होती हे। तीसरा ये ही संवाद कहानी के अनुसार करते है। यशपाल की कहानी 'परदा' में यद्यपि पात्रों की संख्या बहुत सीमित है या कहें एक मात्र पात्र है जिसके माध्यम से लेखक ने अपनी कहानी को लक्ष्य तक पहुँचाया है। और कहानी में यह संवाद कहानी को रोचकता प्रदान करना एवं कहानीकार के उद्देश्य का स्नाप्रिक करने में सफल हुए हैं।

इस दृष्टि से हम कह सकते है कि कथोपकथन की दृष्टि से यह कहानी अपनी सार्थकता सिद्ध करती है।

6. भाषाशैली –

'पर्दा' कहानी का मुख्य लक्ष्य है समाज के उस वर्ग की पीड़ा। को प्रस्तुत करना है। उसकी दरिद्रता, कर्ज लेने और से न चुकापाने का दर्द बयां करना है। कहानी का परिवेश, एक मुस्लिम परिवार करता है। अतः कहानी में हुई शब्दों का प्रयोग हुआ है जिससे कहानी में स्वभावकिता आई है। पीरबख्श की आर्थिक स्थिति बहुत ही दयनीय है जिसे लेखक ने अपनी भाषा शैली के माध्यम से मार्मिकता एवं प्रदान की है वही खान जो पठान है उसकी ग्राम्य बोली का माधुर्य कहानी को सजीव बनाता है। भाषा में यथोचित सरलता, प्रवाहकता और बोधगम्यता का गुण सर्वत्र बना रहा है।

अतः उद्देश्य हीन रचना निरर्थक होती है। प्राय कहानी के आधार के आधार से लेखक अपने उद्देश्य निर्मित करता है। परदा कहानी एक सीमिति परिवेश सीमित पात्रों के लेकर समाज के गरीव परिवार की दयनीय स्थिति के चित्रण के उद्देश्य से रची गई है। जिसमें पीरबख्श का परिवर यद्यपि एक मात्र परिवार है किन्तु यह समाज के तमाम उस वग का प्रतिनिधित्व कर उनके यथार्थ चित्रण को मुखर करता है।

7. उद्देश्य – उद्देश्यहीन रचना निरर्थक होती है। प्रायः कहानी के आकार के आधार से लेखक अपने उद्देश्य निर्मित करता है। परदा कहानी एक सीमित परिवेश सीमित पात्रों के लेकर समाज के गरीव परिवार की दयनीय स्थिति के चित्रण के उद्देश्य से रची गई है। जिसमें पीरबख्श का परिवार यद्यपि एक मात्र परिवार है किन्तु यह समाज के तमाम उस वर्ग का प्रतिनिधित्व कर उनके यथार्थ चित्रण को मुखर करता है।

समीक्षा इस दृष्टि से हम कह सकते है कि परदा कहानी एक श्रेष्ठ उद्देश्य को लेकर रची गई है। जो उस वर्ग के हालातो से समाज को अवगत ही नहीं कराती बल्कि उनके प्रति संवेदना का भाव भी जागृत करती है। पठान जैसे अभिजात्य के मुख से ग्लानिभरा शब्द 'लाहोल बिला --' कहलवाकर उसे भी शर्मा सार करती है।

8- शीर्षक –

शीर्षक किसी भी रचना का आइना होता है जिसमें पाठक समाज उस रचना की संपूर्ण झलक को पाजाता हैं अतः शीर्षक का रचना में बहुत महत्वपूर्ण स्थान होता है। शीर्षक ऐसा हो जिसके माध्यम से संपूण्र रचना के बारे में अनुमान लगया जा सके। प्रस्तुत कहानी में एक लंबे अंतराल को समेंटा गया हैं तथा शीर्षक को सार्थक करती कहानी है।

समीक्षा – आलोच्य कहानी का शीर्षक 'परदा' बहुत ही उपयुक्त हैं। सारी यथा और संवेदना परदे को केन्द्र में रखकर ही गए गई हे। कहानी का प्रत्येक सिरा पर्दे से जुड़ा है। अंत में भी परदे का निगरना पाठकों के हृदय को इतना संवेदना शील बना देता है कि कहानी को समाप्ति के पश्चात भी उसकी टीस पाठकों को साकती रहती है।

हम कह सकते है कि परदा कहानी अपने नाम को सार्थक करने में पूर्णतः सफल रही है।

परदा कहानी के निहित सामाजिक सत्य

'परदा' यशपाल की प्रगतिवादी कहानी है जिसमें लेखक ने ऋण ग्रस्त समाज का मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है। वही हम आज भी मिथ्या डंबर से घिरे समाज के झूठे प्रदर्शन को लिए बैठे है। उधार लेकर घी पीने की परंपरा प्राचीन काल से समाज में रही हैं दूसरी और गरीब इज्जतदार व्यक्ति श्रण के भार से दबकर भी अपनी यथार्थ स्थिति को समाज के सामने लाने से कतराता है वही समाज का संपन्न एवं शोषित वर्ग उसकी इस भावना को बुरी तरह रौंदकर उसे भरे समाज के नग्न करने से नहीं हिचकता।

चौधरी पीरबख्श के दादा को चुंगी के दरोगा थे अच्छी आमदनी थी खाना–पीना परिवार था अतः उन्होने अपने लड़कों को अच्छी तालीम दी, एक मकान भी बना लिया था। दोनों लडकें अपनी पढ़ाई पास कर रेल्वे में बाबू बन गए फिर देखते ही देखते उनके ब्याह और बच्चे हो गए। कुनवे में वृद्धि हो गई दो बेटे फजल और इलाही बख्श उनके क्रमशः चार बेटे और तीन बेटियाँ दूसरे के चार कटे और बेटियाँ हुई। खानदान बढ़ने से घर छोटा पड़ने लगा अतः जिस कमरे को बैठक कहते थे अब जनान खाना में तब्दील हो गई। किन्तु बाहर लोगों को इसकी भनक न लगे इसलिए बढ़िया परदा दरवाजे पर लटका दिया। स्थिति यहाँ तक आ गई कि उन्हें खानदान का वह मकान छोड़कर बाहर की तलाश करनी पड़ी। चौधरी इलाही बख्श के तीन बेटे बाहर नौकरी पर चले गए। किन्तु चौथा बेटा पीरबख्श की तालीम कम होने से नौकरी न पा सका। ब्याह होने पर परिवार की जिम्मेदारी भी उसपर आ गई। अतः एक तेल की मिल पर बीस रूपए माह पर मुंशीगिरी कर ली इलानी कम राशि में परिवार की जिम्मेदारी उठाना दुभर था।

अतः विवश होकर सितवा की कच्ची गली में मकान किराये से लेना पड़ा जिसका किराया केवल दो रूपया माह था किन्तु गरीबी मे वे दो रूपए भी भार स्वरूप लग रहे थे। आसा पास गरीब और कमीन लोगों की बस्ती थी उनमें पीरबख्श ही एक मात्र सफेदपोश एवं पढ़े लिखे सभ्य नजर आते है। इसलिए लोगो के बीच उनका अच्छा–खासा रूतबा था वे इस रूतवे को बरकार रखना चाहते थे इसलिए घर के गरीव हालातों को एक बेशकीमती पुराने पर्दे से ढांक रखा था

इसी पर्दे का प्रताप था कि लोगों ने उन्हें पढ़ा लिखा और खानदानी रईस मानते थे आते–जाते सलाम करते थे। बच्चे बढ़े हो गए थे उनकी आवश्यकताएं भी बढ़ रही थी किन्तु

पीरबख्श की तनख्वाह पच्चीस से मात्र पैतीस रूपए हुई तीन लड़की और दो लड़के इसके अतिरिक्त उनकी वालिदा कम रकम में घर चलाना पढ़ गई। मालिक को पेशगी देने से इकार था पहले तो जरूरत पड़ने पर चौधरी घर की छोटी मोटी चीज गिरवी रख दिया करते थे किन्तु वहॉ भी एक रूपये के आठ मिलते थे और चीजों के वापस मिलने की कोई संभावना भी नहीं रहती।

खैर! इन सब हालातो के बीच की पीरबख्श की इस इलाके में अच्छी खासी इज्जत थी जिसकी वजह थी वह पर्दा। मकान तो जर्जर हाल में था मकान मालिक को उसके मरम्त की परवाह नहीं थी इसी से उसके किवाड़ धीरे–धीरे गलकर एक दिन गिर गए। घर में चोरी के लिए कोई सामान था ही नहीं जिसे ले जाने की फिक्र चौधरी जी के होती है। होने पर उन्होंने पुश्तैनी दरी को दरवाजे पर लटका दिया यद्यपि उनकी वालिदा बीबी और तीनों बेटियों के तन पर पड़े कपड़े तार–तार हो रहे थे खुद चौधरी साहब के कुर्तो पाजामे पर भी कई पबंद लगे थे। किन्तु इन सारे पेबंद को चौधरी साहब पुश्तैनी दरी से ढाके हुए थे।

इस मुफलिसी एवं लगी के हालातों में अपने दूसरे बेटे के जन्म पर बबरअली खान पठान से 4 रूपए उधार लेने पड़े। सात माह तक तो उसकी किस्त बराबर चलती रही किन्तु घर के खर्चों में बढोत्तरी होने एवं मंहगाई के बढ़ने पर चौधरी आगे की किस्त अदा न कर सके। खान एक सख्त मिजाज आदमी था तय की तरीख पर किस्त न मिलने पर शाम को ही चौधरी के घर आ धमके उस वक्त चौधरी ने खाँ की खुशामद कर मॉफी माँगली और एक माह की मोहलत मांग कर एक रूपए की जगह सवा रूपए किस्त देने का वादा कर लिया उस वक्त तो खान चला गया किन्तु पीरबख्श की परेशानी कम होने की जगह और बढ़ती चलती गई, वालिदा के साथ उनकी बीबी भी बीमार हो गई परिणम पीरबख्श अगले माह भी किस्त नहीं दे पाए। किस्त तो बहुत दूर की बात थी नौबत फाको की आ गई थी।

वेतन भी कटकर मात्र चार रूपए हाथ में आया वे जानते थे कि खान अपना पैसा वसूलने घर अवश्य आएगा अतः वे मिल से सीधे घर न आकर मंड़ी चले गए इस संभावना से कि तब तक खान घर से लौटकर वापस जा चुका होगा। खान के भय से उनका दिल घबरा रहा था घबराते दिल से वे यह सोच घर की ओर चलदिए कि अब तक तो खान आकर जा चुका होगा। वहीं साल को पैसे व पीरवख्श दोनों के न मिलने से चौधरी बेहद खफा था सो वह आठ तरीख को सुबह – सबेरे दी चौधरी के घर जा पहुँचा। काफी डॉट फटकार के बाद भी रूपया न पाकर वह चार दिन की मोहलत के साथ – साथ चौधरी को यह धमकी भी दे गया कि –– चार रोज में नहीं देगा तो हम तुम्हारा ––– डंडा कर देगा।

चौधरी पीरबख्श लाचार था उसने अपनी ओर से पूरी कोशिश की जान पहचान रिश्तेदारों के आगे हाथ फैलाए किन्तु रूपयों का प्रबंध न कर सका। दोपहर को पता चला कि दोपहर को फिर खान आया था डंडे से पदरे को ठेलकर और गाली देकर चला गया। चार घंटे बाद खान फिर आया। उसके पुकारने पर पीरबख्श बैचेनसा सहमा हुआ बाहर आया उसके पास खान की खुशमद करने के अलावा दूसरा कोई चारा न था। किन्तु खान का दिल न पसीजा वह गाली देता रहा और अंत में उसने दरवाजे का परदा जोर से झटका दिया घर के हालात लोसे तक पहुँच यह चौधरी को सह नहीं था

अतः सदमें से डगमगाकर चौधरी जमीन पर गिर पड़े ।

घर की बाकी औरतें और लड़कियाँ अपने अर्द्धनग्न शरीर को ढंकते हुए यहाँ –वहाँ भागने लगी। घर के दरवाजे पर जमी भीड़ ने मारे शर्म के आँखें झुका ली उनके मन में खान के प्रति घृणा और पीरबख्श के प्रति करूणा का भाव था ऐसे नग्न और कासनिक दृश्य को देखकर खान का कठोर हृदय भी पिघल उठा। उसने ग्लानि से थूकते हुए पर्दे को आँगन में फेंकते हुए कहा लाहौल बिला––'' और चला गया। भीड़ धीरे–धीरे अपने कर्म में रत हो गई। किन्तु चौधरी अभी भी बहोश पड़े थे। जब उन्हें होश आया तो उन्होंने दरवाजे पर पड़े पर्दे को पाया किन्तु अब उस पर्दे को पुनः दरवाजे पर टांने का साहस चौधरी पीरबख्श में न था। क्योंकि अब उन्हें इसकी कोई आवश्यकता महसूस नही हो रही थी। दरअसल जिस भावना को लेकर परदा लगाया था आज वह भावना अपना उद्देश्य खो चुकी है। घर के जिन हालातों को वो समाज से छिपाना चाहते थे आज सब उससे परिचित हो चुके है।

सिद्ध कीजिए कि यशपाल की 'परदा' कहानी जीर्ण–शीर्ण सामाजिक रूढ़ियों पर करारा व्यंग्य और प्रहार है।

उत्तरः– 'परदा' यशपाल की सामाजिक अर्थव्यवस्था पर रचित कहानी है। जहाँ समाज का दूसरा वर्ग जो सदैव ही प्रताड़ना का शिकार रहता है। अपनी जर्जरित दशा को छिपाने एवं झूठी रूढ़ि एवं प्रतिष्ठा को बनाए रखने के लिए वह अपने ऊपर कई आवरण लपेट लेता है। कर्ज के बोझ तले खुद को दबा देता है। समाज में स्वयं के झूठा सम्मान की चाहत के भ्रम को बनाए रखने के लिए वह स्वयं तिल–तिल कर टूटता रहता है। अंततः यह भ्रम का जाल टूटता ही है। यशपाल प्रगतिवादी कथाकार है तथा समाज में व्याप्त इस तरह की रूढ़ियों से समाज को उभारना चाहते है। इसी चिंतन को लेकर उन्होंने इस कथा की रचना की है।

जिसका पात्र है चौधरी पीरबख्श , जिनके दादा किसी समय चुंगी के महकमे में दरोगा थे। अच्छी खासी आमदनी थी सो घर के हालात भी अच्छे थे। बिरादरी में शान थी, एक हवेलीनुमा मकान था। पीरबख्श के अलावा घर के अन्य भाई–भतीजों ने ऊँची तालीम हासिल कर ऊँचा ओहदा पाया। किन्तु पीरबख्श की तालीम प्राइमरी से आगे न बढ़ सकी, परिणाम उन्हें एक तेल की मिल में मुंशीगिरी से ही संतोष करना पड़ा जहाँ केवल बीस रुपये से ही गुजारा करना होता था। समय के साथ शादी और बच्चे होने से पीरबख्श का परिवार भी बढ़ गया। पैतृक मकान में अब गुजारा संभव न था। सो एक बस्ती में कच्चा सा मकान 2 रुपए माह किराए पर लेना पड़ा। जहाँ आस–पास निहायत गरीब लोग रहते थे। पीरबख्श की बिरादरी में पुराने रईसों में गिनती रही है अतः पुरानी आन–बान–शान अब भी कायम थी सो उस क्षेत्र में पीरबख्श ही एक मात्र पढ़े–लिखे सफेद पोश इंसान समझे जाते थे। इसलिए लोग उन्हें अदब से दुआ सलाम करते पीरबख्श इस रूतबे को कायम रखना चाहते थे। इसलिए उन्होंने बीते समय की कीमती दरी को परदे के रूप में बाहर दरवाजे पर टांग रखा था।

यद्यपि पीरबख्श का घर मुफलिसी से घिरा हुआ था फिर भी भीतर के हालात को ढकने के लिए उन्होंने घर के दरवाजे पर एक बेशकीमती परदा लगा रखा था। घर की औरतों के पास तन ढकने को पूरे कपड़े भी नहीं थे इसलिए वे बाहर कमेटी के नल से पानी भरने नहीं निकलतीं, स्वयं पीरबख्श ही पानी भर कर लाते थे। लोग समझते बड़े घर की परदानशीन है घर के बाहर निकलना उनकी शान के खिलाफ होगा। इन पंद्रह सालों में पीरबख्श की तनख्वाह 35 रु. महीना हो गई थी किन्तु महंगाई और परिवार के बढ़ते खर्च के लिए इतनी आमदनी काफी न थी। तनख्वाह भी महीने की सात तारीख को मिलती थी। हर माह चौधरी जरूरत के सामान को गिरवी रख देते। किन्तु ब्याज इतना बढ़ जाता कि रहन रखी वस्तु कभी

वापस नहीं आती। घर भी पुराना था उसमें टूट–फूट इतनी थी उसपर मालिक–मकान सुधारने की सुध न लेता था। घर की किवाड़े भी गलकर गिर गए थे एक दिन टूटकर गिर पड़े।

किवाड़ गिरने पर पीरबख्श की चिंता बढ़ गई किन्तु चिंता का कारण घर में चोरी होने का भय नहीं था बल्कि डर था कि कहीं घर की तंगहाली की पोल न खुल जाए। सो दूसरे ही दिन पीरबख्श ने दरवाजे पर एक मात्र कीमती पुश्तैनी दरी लटका दी। लोग इस बेशकीमती परदे से पीरबख्श के घर के अंदरूनी हालातों का अंदाजा लगाते थे, उनकी गिनती अभिजात्य वर्ग में करते । जबकि सच्चाई यह थी कि मंहगाई के इस दौर में इतनी कम आमदनी में घर की पाँच औरतों के लिए कपड़ों की व्यवस्था करना भी उनके लिए मुमकिन न था। उनके बदन के कपड़े जीर्ण–शीर्ण होकर तार–तार हो रहे थे जैसे पेड़ की छाल पुरानी होने पर घिसकर गिर जाती है। आमदनी में एक जून का आटा–दाल आना संभव न था। ऐसे में एक परदे की व्यवस्था करना दूर की बात है। खुद उनके पायजामें में जगह–जगह पेबंद लगे थे अब तो वो कपड़ा पेबंद सहने की शक्ति भी खो चुका था किन्तु पीरबख्श मजबूर थे।

ऐसी ही विवशता के रहते दस माह पूर्व अपने दूसरे बेटे के जन्म पर उन्होंने पठान बाबर अली खान से चालीस रुपए उधार लिए जिनका उन्हें चार रुपए महीने ब्याज देना था। सात माह तक तो पीरबख्श किसी तरह अपनी जरूरतों को काट–कसर कर कर्ज चुकाते रहे परन्तु अब वह भी संभव नहीं हो पा रहा था। घर में फांकों की नौबत आ गई कर्ज चुकाना बहुत दूर की बात थी। खान था कि प्रतिदिन अपने पैसों का तकादा करता, पीरबख्श रोज अगले दिन पैसा लौटाने का वादा करते। खान आता और गाली देकर चला जाता। एक दिन खान आपे से बाहर हो गालियाँ देता हुआ परदा झटककर गिरा देता है। परदा जमीन पर गिर जाता है द्वार पर खड़ी भीड़ की आँखों में करुणा भर जाती है क्योंकि परदा गिरते ही घर की औरतों के जीर्ण–शीर्ण हालात सभी के सामने आ जाती है। यहाँ तक की पठान भी ग्लानि के मारे अपनी आँखें झुका लेता है। पीरबख्श सदमे के मारे बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ते है।

दूसरी ओर परदा गिरने से घर की लड़कियाँ और औरतें सहमकर सिकुड़ जाती हैं। वे एक दूसरे की ओट में होकर हाथों से खुद को ढकने की नाकाम कोशिश करती हैं। आँगन के बीचों–बीच खड़ी ये औरतें भय के मारे काँप रही हैं। ऐसा लगा कि मानो परदा खींचते ही किसी ने उनके अंग से वस्त्र खींच लिए हों । दरअसल ये परदा ही तो था जो इन औरतों के शरीर का वस्त्र था।

आज पीरबख्श का वह परदा गिर गया जो उन्होंने झूठी प्रतिष्ठा के रूप में दरवाजे पर लगा रखा था। जिसके गिरते ही पीरबख्श की सच्चाई लोगों के सामने आ गई साथ ही यथार्थता अपने नग्न रूप में सबके समक्ष खड़ी थी। भीड़ घृणा और शर्म से आँखे फेर लेती है। इस रोमांचक दृश्य से बाहर खड़े लोग ही नहीं स्वयं खान भी हैरत में पड़ जाता है। उसकी कठोरता पिघल जाती है। वह ग्लानि से थूकते हुए– 'लाहोल बला ..... 'कहते हुए परदे को वापस आँगन में फेंक देता है। चौधरी पीरबख्श जो इस घटना को सह न पाने के कारण बेहोश हो गया , होश में आने पर उसमें अब परदे को वापस लटकाने की हिम्मत न थी। कारण जिस मकसद से उन्होंने यह परदा दरवाजे पर टांगा था आज वह कारण समाप्त हो गया। पीरबख्श की सच्चाई लोगों पर जाहिर हो चुकी थी।

निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं 'परदा' कहानी में यशपाल ने समाज की जीर्ण–शीर्ण रूढ़ियों पर प्रहार किया है। पीरबख्श जो एक उच्च कुल में जन्में उनकी परवरिश रईसी अंदाज में हुई थी यही रईसी अंदाज उनके भीतर रच बस गया था। किन्तु वक्त कभी

एक सा नहीं रहता और वक्त के साँचे में खुद को ढ़ालना आदमी की फितरत होनी चाहिए। यही जीवन है मगर पीरबख्श मौजूदा हालातों से तालमेल नहीं बैठा पा रहा। घर के आर्थिक हालात बिगड़ने पर वह 'सितवा की बस्ती' में रहने तो चले गए किन्तु अभी तक उसके दिलो–दिमाग पर रईसी का परदा पड़ा हुआ है। उसके दिमाग में यह बात गहरे तक बैठ गई है कि समाज में उन्हीं लोगों का रूतबा होता है जो सफेद पोश होते हैं जिन्हें बिरादरी पैसे वाला समझती है। बस इसी गलतफहमी को बरकरार रखते हुए वह इस झूठी आन–बान–शान को बनाए रखने के लिए कर्ज लेता है और ब्याज की पूर्ति भी नहीं कर पाता असल तो दूर की बात है। परिणाम वह एक–एक कर घर का सारा सामान भी रहन रख देता है।

दरअसल पीरबख्श एक प्रतीक हैं जो समाज के उस वर्ग का प्रतिनिधत्व करते हैं जिन्हें संभ्रांत होते हुए भी वक्त की मार झेल निर्धनता की पंक्ति में आना पड़ता है तब वे सभी इसी मार्ग से गुजरते हैं। पीरबख्श के माध्यम से यशपाल ने अर्थ संकट से जूझते वर्ग की मनोदशा का मनोवैज्ञानिक निरूपण हुआ है। अंत तक उनकी यही कोशिश होती है कि घर की तंगहाली किसी के सामने न आए इसी वजह से वह अपनी अच्छे दिनों की एकमात्र निशानी पुरानी दरी दरवाजे पर लगा देता है ताकि लोगों में भ्रम बना रहे। वहीं वह घर की औरतों के प्रति भी रूढ़िवादी दृष्टिकोण रखता है कि वे घर के बाहर न जाएं इसलिए स्वयं ही बाहर से पानी भरता है। कुल मिलाकर अपने इन हालातों के लिए काफी हद तक वह स्वयं जिम्मेदार है, उसकी रूढ़िगत मानसिकता, समाज में मिथ्या प्रतिष्ठा का भाव आदि यही सब स्थितियाँ हैं जो उसे इस स्थिति तक ले आते हैं। अन्यथा यदि वह घर की उन पाँच महिलाओं से भी धनागमन में सहायता लेता तो इससे घर के हालात भी सुधरते और पीरबख्श को वह सब न सहना पड़ता जो उसने कहानी के अंत में सहा है।

वास्तव में अंत में कहानीकार ने कहानी में खान से परदा खिंचवाकर झूठी लज्जा, प्रतिष्ठा, मोह का परदा खींचकर सही समाधान प्रस्तुत किया है।

परदा कहानी की व्याख्या

1. चोर से ज्यादा ----------लटक गई।

शब्दार्थ :–

फिक्र = चिंता
किवाड़ = दरवाजा आबरू = इज्जत पुस्तैनी = पैतृक

संदर्भः– प्रस्तुत पंक्तियाँ बहुचर्चित कहानी परदा से उद्धत की गई हैं। इसके लेखक आधुनिक हिन्दी कहानियों के क्षेत्र के महान् कहानीकार मानव मन के कुशल चितेरे श्री यशपाल जी हैं।

प्रसंगः– प्रस्तुत कहानी 'परदा' एक ऐसे वर्ग का प्रतिनिधित्व करती कहानी है जिसने जीवन का वैभवयुक्त दौर देखा है कहानी का पात्र पीरबख्श वर्तमान में आर्थिक दृष्टि से निम्न वर्ग में जीवन यापन करता है। कभी संपन्नता के दौर का साक्षी रहा पीरबख्श

आज अपनी हवेली और वैभवयुक्त जीवन छोड़कर दो रुपए माहवार किराए के एक छोटे से अभावयुक्त मकान में आकर रहने को बाध्य है। जहाँ आस–पास निहायत गरीब और कमीन लोग रहते थे। किन्तु इन सबके बीच पीरबख्श ही एक संभ्रांत एवं पढ़ा–लिखा नजर आता है। इसलिए मोहल्ले में उसकी बहुत इज्जत है जिसका कारण है उनके दरवाजे पर लगा वह परदा जो बेशकीमती है। अच्छे दिनों की निशानी है। सच्चाई यह है कि उस पर्दे के पीछे की तस्वीर बड़ी ही त्रासद है क्योंकि उस घर में फाकों के अलावा कुछ सामान नहीं है बस यही परदा है जिसने पीरबख्श की आगरू को बरसों से बचा रखा है।

भावार्थ :– चौधरी पीरबख्श का परिवार किसी समय समाज का जाना माना नाम हुआ करता था, समाज में उसका रुतबा था। वह मुफलिसी (गरीबी) में भी उसी रुतबे को कायम रखना चाहता है। उसे अपनी इज्जत, आबरू से बहुत लगाव है। वह चाहता है जीवनपर्यन्त लोग उसे उसी सम्मान की दृष्टि से देखें। इसी आबरू को उसने एक परदे से ढांक रखा था। घर के दरवाजे पर टंगा यह बेशकीमती परदा आज भी उसके वैभव को प्रदर्शित करता है। वह मकान जिसमें पीरबख्श रह रहा था, के किवाड़ भी अब मौजूद नहीं थे। उसके भीतर के हालात यह है कि घर की औरतों को पूरा तन ढ़कने के लिए भी वस्त्र भी उपलब्ध नहीं है, खाने के लिए भर पेट भोजन नहीं ऐसे हालातों में यह परदा ही था जो बाहर उसकी समृद्धि का प्रचार करता है। किन्तु गाहे–बगाहे पीरबख्श को यह चिंता सताती रहती कि खदा न खास्ता कभी यह परदा न रहा तो..... ? वे इस कल्पना मात्र से घबरा जाते। उन्हें चोर से उतना भय नहीं था क्योंकि जानते थे घर में चोरी के लिए कोई सामान नहीं है। अगर परदा न रहा और समाज के सामने यह राज खुल गया तो बिरादरी में बनी बनाई इज्जत चली जाएगी और यदि इज्जत एक बार चली गई तो फिर दुबारा नहीं मिलने की। किन्तु एक दिन वही हुआ जिसका पीरबख्श को डर था। खान अपने रूपए वसूल करने आया और पीरबख्श के न मिलने पर उसने गुस्से में उस परदे को खींचकर गिरा देता है, परदे के गिरते ही घर की अर्द्धनग्न औरतें सहमी हुई सी अपने आप को हाथों से ढ़कती हुई एक कोने में खड़ी हो जाती है। खान के साथ–साथ बाहर के लोग भी घर के असल हालातों से वाकिफ हो जाते हैं।

विशेषः– 'परदा' शीर्षक प्रधान कहानी है। कहानी में उई शब्दों का बहुतायत से प्रयोग किया गया है। कहानी में प्राचीन रूढ़ियों के प्रति व्यंग्यपूर्ण प्रहार है।

2. पीरबख्श के शरीर ---------- खुशामद करने लगे।

शब्दार्थ :–

निस्तब्धता = निःशब्द निर्जीव = निष्प्राण

खुशामद = चापलूसी

शुष्क = सूखा

मुसीबत = परेशानी कुआफी = काफी

संदर्भः– प्रस्तुत पंक्तियाँ बहुचर्चित कहानी परदा से उद्धत की गई हैं। इसके लेखक आधुनिक हिन्दी कहानियों के क्षेत्र के महान् कहानीकार मानव मन के कुशल चितेरे श्री यशपाल जी हैं।

प्रसंगः– चौधरी पीरबख्श ने अपने बेटे के जन्म पर बाबर अली खान से चार रुपये चार आना हर माह एक रुपए ब्याज दर पर उधार लिए थे जिन्हे आठ माह में लौटाना था। सात माह तक वह किसी तरह काट कसर कर ब्याज दर लौटाता रहा किन्तु आठवे माह में जब उसके ब्याज चुकाने की तारीख निकल गई और पीरबख्श ब्याज न दे पाया तो बाबर अली खान वसूली करने पहुँचा। पीरबख्श ने उससे अपनी असमर्थता जाहिर करते हुए, मिन्नतें की और मोहलत मांगी। पैसों का इंतजाम होता दिखाई नहीं दे रहा था। जैसे–जैसे मोहलत के दिन व्यतीत होते जा रहे थे पीरबख्श की धड़कने बढ़ती जा रही थी। नियत दिन आने पर पीरबख्श घर से गायब हो जाता है। किन्तु जब अनायास उसके रहते खान जब घर में आ धमकाता है तब की स्थिति का वर्णन लेखक ने प्रस्तुत गद्यांश में किया है।

भावार्थः– पीरबख्श ने बाबर अली खान से लिए रुपयों की किस्त लौटाने का प्रयास किया बमुश्किल कुछ माह वह किस्त लौटा पाया , मूल तो ज्यों का त्यों था किन्तु ब्याज की रकम समय पर न दे पाने से वैसे ही पीरबख्श काफी चिंतित था। वहीं खान के आने की संभावना मात्र से भयभीत वह घर से गायब हो जाता है। किन्तु एक समय खान बिना किसी पूर्वसूचना के उसके घर आ धमकता है। उसकी आवाज सुनते ही पीरबख्श भय के मारे कांपने लगता है। उसका शरीर बेजान और गला सूख गया, हाथ पैर सुन्न हो गए। उसे, बिरादरी के सामने अपनी बेइज्जत होने का भय सताने लगा अतः वह खमोश घर में दुबककर बैठ गया। खान था कि डटकर खड़ा हुआ था ज्यादा रूसवाई के डर से जैसे–तैसे पीरबख्श हिम्मत जुटाकर बाहर आया, उसे देखते ही खान क्रोध से भड़क उठा बोला पैसे देने की बारी आई तो छिप रहा है। साथ ही उसने पीरबख्श के पुरखों को भी गालियाँ देना शुरू कर दिया। जिसे सुनकर किसी भी गैरतमंद का खून खौल उठता लेकिन पीरबख्श के मुख से आवाज नहीं निकली मानो उसका खून पानी हो गया। मन सारी शक्ति खो बैठा। डरते हुए उसने खान के पैर पकड़ लिए और अपनी परेशानी बताते हुए उसकी खुशामद करने लगा।

विशेषः– प्रस्तुत कहानी में कहानीकार ने शीर्षक और शोषित वर्ग को बहुत सुंदर ढ़ंग से प्रस्तुत किया है साथ ही देश में कर्ज लेने की प्रवृति पर भी प्रकाश डाला है।

4. परदा जिस भावना का ..... वह मर चुकी थी

संदर्भ – प्रस्तुत पंक्तियाँ बहुचर्चित कहानी परदा से उद्धत की गई हैं। इसके लेखक आधुनिक हिन्दी कहानियों के क्षेत्र के महान् कहानीकार मानव मन के कुशल चितेरे श्री यशपाल जी हैं।

प्रसंग – इस एक छोटे से वक्य में कहानी का संपूर्ण सार का समावेश है। परदा प्राचीन काल से ही घर की मान प्रतिष्ठा बनाए रखता हैं प्रस्तुत कहानी में भी कथा के नायक परिखव्य के घर के कमजोर आर्थिक हालातो ं के परदा ही था कि समाज से बचाए रावे था उस बशेभमती परदे की वजह से ही चौधरी पीरवख्श की समाज के प्रतिष्ठा बनी हुई थी उस परदे के हटते ही चौधरी के घर की आबरू सभी लोगो के सामने आगई।

भावार्थ – प्रस्तुत एक पंक्ति में कहानीकार ने संपूर्ण कहानी के निष्कर्ष को स्पष्ट कर दिया हैं परदा जैसा की कहानी का शीषर्क है देखने में कपडे का एक ढाई मीटर का टुकढ है किन्तु यह अपने

पीछे की सीीा स्थिति को छिपाने में समर्थ है। इसके दो उद्देश्य है पहला अपने भीतर की सभी स्थितियों का छिपाकर रखता है दूसरा घर एवं दीवारों की सुंदरता को बढ़ाता है चौधरी पीरवख्श की इनही उद्देश्य की पूर्ति के लिए परदा लगाया था। घर के भीतर की दूर–फूट एवं अभावग्रस्तता को छिपाने के लिए लगाया बेशकीमती परदा आस–पास के लोगो में उनकी प्रतिष्ठा भी वनाए हुए है। सभी उन्हे संपन्न ,खानदानी रईस समझते थे।

किन्तु आज खान के एक झटके से परदे को हटाते ही चौधरी पीरबख्श के दोनों ही उद्देश्य निराधार हो गए। घर की आबरू प्रतिष्ठा एक झटके में धूल में मिल गई। जमीन पर गिर पड़े। होश आने पर दरवाजे पर पड़े परदे को उठाकर पुनः टागने का उन्हें साहस न हुआ। कारण जिस मंशा को लेकर उन्होंने परदा। लगया था वह समाप्त हो गयी थी।

विशेष – कहानी कार ने समाज के शीर्षक वर्ग की निरंकुरता आई शीर्षक वर्ग की दीनता को मार्मिका ढंग से प्रस्तुत किया है साथ ही समाज की खोखली खायतों सामज को आगाह किया है। कि कर्ज का परिणाम कभी अच्छा नहीं होता।

के परदे को झटकर गिराना कहानी के चरम स्थिति पर से जाता है जहाँ पाढकों की संवेदना अपने चरम रूप में दखने का मिस्ती है। कहानी के अंत में कहानीकार ने पाठकों से सारी संवेदना सहानुभूति समेट ली है। कहानी का अंत बड़ा ही मार्मिक हैं। कहानी भावों ने रखे चित्रमय सौंदर्य प्रस्तुत करने हेतु रेखचित्र शैली का प्रयोग किया है कहानी का शिल्प उत्कृष्ट है। यह एक आसाजिक कहानी है जो समाज कि निम्न मध्यमवर्ग को चिन्हित करती है। जहाँ परदा उनकी सामाजिकता का प्रतीक है अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा को बचाए रखने के लिए यह वर्ग अनेक यातनाएं सहता हैं चूकि आज भी समाज का बड़ा हिस्स इसका शिकार है इस नाते हम कह सकते है कि परदा एक प्रतिनिधि कहानी है इसका कथानक यथार्थ और जीवंतता के बहुत निकट है सो इस कहानी को सफल बनाता हैं

इकाई सारांश

प्रत्येक युग का साहित्य अपनी विशेष सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक स्थितियों से प्रभावित होकर जीवन संघर्ष में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है वह जीवन की मर्म छवियों को इस प्रकार अंकित करता है कि उससे हमारी मूल्य चेतना गहरे प्रभावित होती है। इस दृष्टि से देखें तो 1950 के बाद के कथाकारों में अमरकांत का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उसी प्रकार भीष्मसहानी की कहानियों में जहाँ एक ओर सहृदयता व सहानुभूति है। वही दूसरी ओर जातीय तथा राष्ट्रीयता स्वाभिमान की आग भी है। वे पूँजीवादी और यथार्थवादी विचार धारा के अन्तर्विरोधों को खोलते चलते हैं। मार्कण्डेय ने भी अपनी कहानियों में समस्याओं को प्रतिनिधि कहानी के रूप में प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियाँ मूलतः ग्रामीण परिवेश को समर्पित थीं। ग्रामीण जीवन की स्थितियों पर समस्यामूलक कहानियाँ लिखने के साथ–साथ मार्कण्डेय ने कृषि संबंधी माहौल के जीवंत पात्रों को भी बारीकी से पहचाना और उन्हें इतिहास की गतिशील मूल्य व्यवस्था का वाहक बना कर पेश किया।

अपनी प्रगति जांचिए –

1. मधूलिका के चरित्र की विशेषताएं बताइए ?
2. प्रसाद की कहानियाँ ऐतिहासिक घटनाओं को मुखर करती है, इस कथन के आधार पर प्रसाद की कहानी कला की विशेषताएं बताइए ?
3. कहानीकार कमलेश्वर के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर एक लेख लिखिए।
4. राजा निरबंसिया कहानी सभ्य समाज में असभ्य इंसान की कथा कहता है, अपने ? विचार बताइए।
5. यशपाल की कहानी कला की विशेषता बताइए।
6. परदा कहानी समाज में व्याप्त विसंगतियों पर एक व्यंग्य है।' सिद्ध कीजिए।

नियत कार्य / गतिविधि –

1. प्रसादजी की कहानी छोटा जादूगर का पाठ कर उसमें निहित संवेदना पर विचार कीजिए।
2. राजा निरंबंसिया कहानी के आधार पर समाज में व्याप्त रूढ़ परंपराओं के विरोध में आप क्या कदम उठा सकते हैं ?
3. समाज में बाँझ महिलाओं की स्थिति पर अपने विचार व्यक्त कीजिए ?
4. आज समाज में आवरण ही इंसान की पहचान बन गया है, आप इस कथन से कहाँ तक सहमत हैं ?
5. परदा कहानी में निहित सामाजिक सत्य को खोजिए ।

1.14 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिंदु–

1.14.1 चर्चा के लिए बिंदु –

1.14.2 स्पष्टीकरण के बिंदु

1.15 बोध प्रश्न

1. पुरस्कार कहानी की नायिका का नाम है–

   अ– तूलिका

   ब– मधूलिका

   स– निहारिका

   द– वंशिका

2. पुरस्कार के रूप में नायिका ने अपने लिए राजा से माँगा–

   अ– अरूण

   ब– अभयदान

   स– मृत्युदंड

   द– इनमें से कोई नहीं

3. पुरस्कार कहानी का नाय राजकुमार है–

   अ– उज्जैयिनी

   ब– चालुक्य

   स– अवध

   द– मगध

4. 'आँसू' विरह काव्य के रचयिता हैं–

   अ– सुमित्रानंदन पंत

   ब– जयशंकर प्रसाद

   स– महादेवी वर्मा

   द– सूर्यकांत त्रिपाठी निराला

5. 'आँधी' फिल्म की पटकथा के लेखक हैं–

   अ– गुलजार

   ब– कमलेश्वर

   स– यशपाल

   द– कमाल अमरोही

6. 'कर्ज कोढ़ का रोग लेता है' कथन है–

अ– जगतपति

ब– चंदा

स– बच्चनसिंह

द– मुंशीजी

7. यशपाल मूलतः .....विधा के लेखक हैं–

अ– कहानी

ब– उपन्यास

स– ललित निबंध

द– आलोचना

8. परदा कहानी का कथानक है

अ– सामाजिक

ब–मनोवैज्ञनिक

स–ऐतिहासिक

द– जासूसी

9. परदा का नायक है।

अ– पीरबख्श

ब–इलाहीबख्श

स–खुदाबख्श

द–अकबरखान

10. पीरबख्श के दादा किस महकमे के दरोगा थे।

अ– चूंगी कर

ब– माफी कर

स– नगर सुधार

द– आयकर

1.17 कुछ उपयोगी पुस्तकें

---

1. प्रसाद ग्रंथावली

2. यशपाल की कहानी दृष्टि और रचना प्रक्रिया– डॉ. राम निवास शर्मा

3. कमलेश्वर कहानी संग्रह

.....000.....